नक्सलवाद
और
पुलिस की भूमिका

नक्सलवाद और पुलिस की भूमिका

राकेश कुमार सिंह

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय, नई दिल्ली

(भारत सरकार, गृह मंत्रालय ने हिन्दी में पुलिस संबंधी पुस्तकें उपलब्ध कराने के लिए गृह मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति ने 23 मई, 1979 की अपनी बैठक में यह निर्णय लिया था कि न्याय वैद्यक, अपराध शास्त्र, पुलिस अनुसंधान और पुलिस प्रशासन आदि विषयों पर लिखित हिन्दी की मौलिक पुस्तकों पर पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना प्रतिस्थापित की जाए। तदनुसार 22 मार्च, 1980 को अपर सचिव की अध्यक्षता में गृह मंत्रालय में हुई बैठक में निर्धारित मापदंडों के आधार पर इस संबंध में जो निर्णय लिए गए उसके अनुसार इस योजना को अंतिम रूप दिया गया। इस योजना के अंतर्गत ही भाग 1 में मौलिक प्रकाशित पुस्तकों को पुरस्कृत किया जाता है तथा वर्ष 1982 से भाग 2 के अंतर्गत दिए गए विषयों पर पुस्तक लेखन कार्य कराया जाता है। इसी के तहत यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है।)

इन पुस्तक में दिए गए विचार लेखक के निजी है
इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो,
गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की
सहमति आवश्यक नहीं है।

प्रकाशक के सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशक – पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (गृह मंत्रालय),
3/4 मंजिल, ब्लाक–II, सी.जी.ओ. कंप्लैक्स,
लोदी रोड, नई दिल्ली–110003

एकमात्र वितरक – नियंत्रक प्रकाशन विभाग,
सिविल लाइंस, दिल्ली–110054

प्रथम संस्करण – 2012

मुद्रक – प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना 7
भारत में नक्सलवाद एक ऐतिहासिक सिंहावलोकन 20
नक्सलवाद–वर्तमान परिप्रेक्ष्य 33
नक्सलवाद–आंदोलन से समस्या तक 71
नक्सलियों की राजनैतिक एवं सैनिक रणनीति
तथा जमीनी सच्चाइयां 99
नक्सलवाद और भारतीय पुलिसिया तंत्र 115
उपसंहार 182

प्रस्तावना

आंतरिक सुरक्षा परिदृश्य ही नहीं बल्कि सुरक्षा परिदृश्य में भी नक्सलवाद पुलिस के लिए प्रतिदिन गंभीर चुनौतियां प्रस्तुत कर रहा है। पिछले कुछ वर्षों से नक्सली आम आदमियों में हिंसा फैलाकर भय एवं अशांति का वातावरण बनाने के लिए लगातार प्रयत्नशील हैं। 06 अप्रैल, 2010 को सुरक्षा बल के 76 व्यक्तियों को घात लगाकर हमला करने और सुनियोजित तरीके से हत्या करने के बाद से नक्सलवाद अपने विकरालतम रूप में हमारे समक्ष है।

वर्ष 2010 में 998 सुरक्षाकर्मी एवं नागरिकों की हत्या ने 2010 के वर्ष को अब तक सबसे हिंसक बना दिया। यह सिलसिला 2011 में भी जारी रहा। नक्सलियों ने 16 फरवरी, 2011 को उड़ीसा के मलकानगिरि के कलेक्टर आर. विनीत कृष्ण और जूनियर इंजीनियर पवित्र मांझी को अगवा कर लिया तथा इनकी रिहाई हेतु अनगिनत मांगें रखी गईं, जिनमें नक्सली नेता प्रसादम और श्रीनिवासुलू सहित 700 माओवादियों की रिहाई की शर्तें भी थीं।

इसके अलावा अन्य मांगों में प्रमुख थी, सुरक्षा बलों द्वारा नक्सली के विरुद्ध अभियानों को बंद करना। प्रमुख वार्ताकार रिहार्द हेतु जिनमें सेवानिवृत्त प्रोफेसर आर. सोमेश्वर राव एवं जी. हरगोपाल तथा स्वामी अग्निवेश के हस्तक्षेप के बाद अनेक मांगों को माने जाने के बाद 9 दिनों के पश्चात, कलेक्टर को 24 फरवरी को रिहा किया गया, जबकि जूनियर इंजीनियर पवित्र मांझी को 23 फरवरी को रिहा किया गया।

इस अपहरण ने 9 दिनों तक सरकार की नींद उड़ा रखी थी, क्योंकि अपहृत भारत के प्रतिष्ठित भारतीय प्रशासनिक सेवा से संबंध रखते थे। नक्सलियों द्वारा हमेशा से दावा किया जाता है कि

उनके सारे कदम गरीबों के हित में उठाए जाते हैं। किंतु इस कारण में अपने साथियों को रिहा करवाने के अलावा तो कोई और जनहित का कार्य नहीं दिखता। विडंबना तो यह रही कि कलेक्टर का ड्राईवर शंकर राव, घटना के विरोध में गुरूप्रिया नदी के पास तब तक धरने पर रहा जब तक कि कलेक्टर रिहा नहीं हुए।

इसके अलावा अनेक जनजातीय एवं ग्रामीणों ने कलेक्टर की रिहाई की अपील की तथा धरना दिया। ऐसा माना जाता है जिला कलेक्टर आर. विनीत कृष्ण के अनेक जन कल्याणकारी योजनाओं के संस्थागत क्रियावन्यन के प्रयास कर रहे थे। सामाजिक–आर्थिक उत्थान खासकर वंचितों को मूलभूत सुविधाएं मुहैया कराने की अनेक पहल उनके द्वारा की जा रही थी।

प्रशासनिक रचनात्मकता के कारण इलाके में आम लोगों द्वारा आर. विनीत कृष्ण को पसंद किया जाने लगा था। फिर ऐसे लोकप्रिय प्रशासक को नक्सलियों ने अगवा क्यों किया ? यह नक्सलियों का कौन–सा जनवादी कार्य था। इस पूरे प्रकरण से संदेश साफ है कि न तो आम जनता नक्सलियों के साथ है और न ही नक्सली आम जनता के साथ।

समाज के आर्थिक एवं सामाजिक तौर पर पिछड़े वर्गों के तथाकथित उत्थान एवं सशक्तिकरण को अपना एकमात्र घोषित सरोकार बताकर नक्सलियों द्वारा चलाया जा रहा हिंसक आंदोलन न सिर्फ अपनी महानता के दावों के विपरीत गरीबों को और गरीब एवं पिछड़ा बना रहा है, बल्कि आंतरिक सुरक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती भी प्रस्तुत कर रहा है। समाज का वह तबका जिसके लिए नक्सली संघर्ष करने का दंभ भरते हैं उनको दो–तरफा मार का सामना करना पड़ रहा है व लोगों में शनैः–शनैः असुरक्षा की भावना गहरे पैठ कर रही है।

नतीजतन, देश के कुछ हिस्सों में जहां नक्सलियों ने उन क्षेत्रों की दुरूहता, भौगोलिक परिस्थितयों एवं प्रशासनिक उदासीनता का फायदा उठाकर अपनी समानांतर व्यवस्था को स्थापित किया है, वहीं इन क्षेत्रों के लोग जीवन की प्रत्येक सुविधाओं से अछूता अमानवीय जीवन जीने को मजबूर हैं। यह सत्य है कि देश के आर्थिक विकास की 'धूम' का लेशमात्र भी लाभ वहां नहीं पहुंच पाया है तथा हर प्रशासनिक पहल नक्सलियों की विचारहीन एवं वीभत्स हिंसा के सामने निरर्थक और

असहाय सिद्ध हो रही है।

सवाल यह खड़ा होता है नक्सली कौन हैं। ये वे क्या चाहते हैं? एक लोकतांत्रिक राज्य में जहां जनता द्वारा बहुमत से सरकार चुनी जाती है, वहां नक्सलियों के इस प्रकार के हिंसक आंदोलन का क्या औचित्य है? क्या नक्सली समाज के उस अल्पसंख्यक तबके के सही प्रतिनिधि हैं, जैसा कि वे दावा करते हैं, जो तबका विकास यात्रा में लगातार सुनियोजित तरीके से हाशिए पर धकेला जाता रहा और प्रशासनिक उदासीनता ने जिन्हें अभावग्रस्त, घोषित और अंतिम रूप से 'विकल्पहीन' बना दिया। क्या नक्सली वास्तव में उस सामाजिक–क्रांति के अगुआ हैं, जिसकी परिणिती के रूप में एक वर्गहीन और हर प्रकार से समानता पर आधारित समाज स्थापित किया जाएगा, तो क्या आंध्रप्रदेश, उड़ीसा और छत्तीसगढ़ के वे इलाके जो लंबे समय से नक्सलियों के प्रभाव में हैं, क्या वहां पर उन्होंने एक वर्गहीन और समतामूलक समाज स्थापति कर लिया है या स्कूल भवनों को बारूदी–सुरंगों से उड़ाना, सड़कों, अस्पतालों, पुलों जैसी आधारभूत संरचनाओं को ध्वस्त करना, मुखबिरी के भेष में तालिबानी तरीके से गला रेतकर या लाठी से पीट–पीटकर आम ग्रामीणों की हत्या करना और अंतिम तौर पर समाज में 'हिंसा का आतंक' फैलाने को ही सामाजिक क्रांति मान लिया गया है।

क्या नक्सलियों के साथ जुड़े बुद्धिजीवी वे लोग हैं जो समाज में व्याप्त असमानता के विरोध में इन लोगों का साथ देकर सिर्फ सामाजिक बदलाव चाहते हैं या अपनी कोई राजनीतिक महत्वाकांक्षा रखते हैं? क्या नक्सलियों की हिंसा एवं अत्याचार का शिकार समाज के बेईमान और अत्याचारी ही हो रहे हैं? क्या नक्सलवाद वामपंथी विचारधारा का एक उग्र एवं हिंसक रूप है जो शांति द्वारा समस्याओं के निदान से थककर, लाचार होकर हथियारबंद क्रांति का सहारा ले रहे हैं ? क्या लोकतंत्र क्रांति आदि जन–जातियां एवं पिछले लोगों का सही प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता हैं? क्या कार्ल मार्क्स–लेनिन एवं माओ के दर्शन समाजिक समानता की धुरी है जिन्हें सभी को मानवीय दृष्टिकोण से समझना चाहिए? क्या खेतिहर लोगों को जमीन पर आधिपत्य किसी शांतिप्रद एवं अहिंसक आंदोलन से संभव नहीं है जैसा गांधी या विनोबा भावे चाहते थे? क्या गांधी की कल्पना अब

हथियार के साथ करनी पड़ेगी और नक्सलियों को ''(Gandhi with gun)'' माना जाना चाहिए? क्या पुलिस एवं सुरक्षा बलों की निर्मम हत्या करना किसी स्वाधीनता व सामाजिक परिवर्तन के लिए अनिवार्य कदम है?

नक्सलियों द्वारा उच्च पदों पर आसीन सरकारी अधिकारियों का अपहरण कर उनके रिहाई हेतु हत्यारे नक्सलियों के छोड़े जाने के सरकार के निर्णयों के कारण पुलिस अपना व्यावसायिक रूख कब तक कायम रख पाएगी? क्या मौजूदा पुलिस और प्रशासन के लोगों का नक्सलियों के Egalitarian एवं वर्ग रहित समाज में स्थान नहीं मिलेगा, भले ही वे पूंजीवादी न हों या समाज में मेहनत के द्वारा अपनी उपयोगिता सिद्ध करते रहे हों ? क्या सामाजिक सशक्तिकरण सिर्फ बंदूक के बैरल से ही संभव है? ऐसे अनेक ज्वलंत सवालों का जवाब इस पुस्तक में बौद्धिक विवेचना एवं विमर्श से तलाशा जाएगा जिससे देश के नव निर्माण की दिशा ढूंढ़ी जा सके और इन रचनात्मक प्रयासों में पुलिस की भूमिका रेखांकित हो सके।

नक्सली एक आंदोलन है या क्रांति? इनकी मांगें क्या हैं तथा क्या इन्हें लोगों का समर्थन प्राप्त है? ये सवाल आज देश के अनेक नागरिकों के जेहन में हैं। नक्सली चाहते क्या हैं ? सशस्त्र कृषि क्रांति तथा लोकयुद्ध का मतलब क्या है और सर्वप्रमुख क्या नक्सलियों की हिंसा ने सरकार का सामाजिक–आर्थिक विकास की योजनाओं के लिए बाध्य किया है ?

नक्सलियों की नीति साम्राज्यवाद एवं पूंजीवाद के विरुद्ध निम्न व मध्यम वर्ग के सहज वर्ग–आक्रोश को भुनाकर व इसे धुरी बनाकर राजनैतिक सत्ता हासिल करने की रही है। नक्सली वर्ग संघर्ष की प्रक्रिया में हथियारबंद लड़ाई को प्रमुखता देते हैं। उनका यह सिद्धांत कि 'सर्वहारा वर्ग के लोगों का कल्याण एवं उत्थान बंदूक उठाने एवं पूंजीपतियों के विरुद्ध हिंसा करने से ही संभव है', समाज के एक वर्ग को आकर्षित करते हुए भी अत्यंत निंदनीय है। अपनी इस प्रक्रिया में वे उन सरकारी कर्मचारियों, जो इन क्षेत्रों में कार्यरत है, विशेषतः पुलिस, वनकर्मी एवं प्रशासनिक अधिकारियों को प्रमुखतः सतत् हिंसा का शिकार बनाते हैं। इसके कारण इन क्षेत्रों में विकास कार्यों को भी अंजाम नहीं दिया जा पाता। कर्मचारी भय एवं असुरक्षा के बीच इन

क्षेत्रों में अपनी संपूर्ण ऊर्जा एवं क्षमता से कार्य नहीं कर पाते। फलतः गरीबी और सामाजिक अत्याचार और अभावग्रस्तता समाज की भीतरी परतों पर फैलती जाती है।

नक्सली आधुनिक आर्थिक विकास के मान्य तरीकों के प्रति अपना विरोध रखता है एवं विशेष आर्थिक क्षेत्र (Special Economic Zone), बड़ी–बड़ी खनन गतिविधियां एवं उद्योगों इत्यादि के पक्ष में नहीं है। इसके अलावा भूमिहीनों में भूमि सुधार द्वारा भूमि वितरण एवं मजदूरों की प्रबंधन एवं लाभ में ज्यादा से ज्यादा भागीदारिता चाहता है। मूलतः नक्सलियों की विचारधारा साम्यवाद (Communism) के करीब है। साम्यवाद वर्गहीन और राज्यविहीन समाज की संरचना तथा आम जनता के स्वामित्व पर आधारित एक विचारधारा है। इस विचारधारा को पृष्ठभूमि में रखकर नक्सली संघर्ष को क्रांतिकारी बनाना चाहते हैं। भारतीय पृष्ठभूमि में यदि इस विचारधारा के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण करें तो यह एक Utopian Concept लगता है।

भारतवर्ष एक बहुलवादी समाज है, जहां विभिन्न समुदायों के लोग भिन्न–भिन्न प्रकार के धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक महत्वाकांक्षा रखते है। उनकी न सिर्फ जीवन पद्धति अलग है बल्कि जीवन के बारे में सोच भी अलग हैं। यह सत्य है कि हर क्षेत्र में समान बदलाव रहे हैं। बदलाव नहीं हो पाया जिससे समाज के कई हिस्से विकास के लाभों से वंचित रहे हैं। यह वंचित और समुदाय किसी भी ऐसे आंदोलन या विद्रोह के लिए तैयार समूह है जो सरकार के खिलाफ अपनी आवाज को बुलंद करना चाहता है और उसमें हिस्सेदारी खोजता है। यह समूह असंतोष से भरा पड़ा है तथा अपनी मांगे मनवाने के लिए हिंसा का सहारा लेने से पीछे नहीं हटता। भले ही यह सोच भारत की पारंपरिक उदार विचारधारा के खिलाफ ही क्यों न हो? क्योंकि वंचनाओं ने उनके भीतर एक आक्रोश को जन्म दिया है तथा इस भावना को भी जन्म दिया है कि अपने हकों को अब छीनकर ही लेना होगा और समग्र रूप से हिंसा द्वारा जीवन दशाओं में परिवर्तन का माओवादी सिद्धांत उन्हें आकर्षक ही नहीं बल्कि अंतिम विकल्प–सा प्रतीत होता है।

नक्सलियों की नीतियों का सही रूप उनकी गतिविधियों के अतिरिक्त उनके द्वारा दिए गए जनलुभावने नारों से भी पता चलता है

जिसमें वे सिर्फ जनयुद्ध, दमन, फासीवादी शक्तियों का उन्मूलन इत्यादि हिंसात्मक प्रचार ही करते हैं। उनके इन नारों में कहीं भी गरीबों के आर्थिक उत्थान, दलितों को समाज में समान स्थान दिलाने, महिला सशक्तिकरण एवं जन–जागरूकता के एक मॉडल की बातें नहीं होती हैं। भारत में वामपंथी हिंसात्मक विचारधारा का एक सुदीर्घ इतिहास होते हुए भी विकास के स्तर पर वह आज तक कोई ऐसा आदर्श प्रस्तुत नहीं कर पाया है जो देश के अन्य ग्रामों में सूत्र के रूप में लागू किया जा सके। उनके कुछ लोकलुभावन नारे निम्न हैं:–

- लोकयुद्ध को तीव्र करें और उसे आगे बढ़ाएं।
- साम्राज्यवाद के युद्ध–मंसूबों को विफल करें।
- फासीवादी शक्तियों को बेनकाब करें इत्यादि।
- इन नारों से क्षणिक उत्तेजना का रोमांस तो पैदा होता है किंतु ये समाज की बुनियादी समस्याओं का कोई सुनिश्चित निदान प्रस्तुत नहीं कर पाते हैं।

नक्सली अपने नारों को सशस्त्र संघर्ष से पूरा करना चाहते हैं। नक्सली जो माओवादी के रूप से भी जाने जाते हैं, लिखते हैं कि इन नारों का प्रयोग सशस्त्र संघर्ष के द्वारा राजनैतिक सत्ता पर कब्जा करने और नवजनवादी राजसत्ता स्थापित करने हेतु किया जाना चाहिए। माओवादी उसके आगे पी.एल.जी.ए. (पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी) को आगे बढ़ाकर पी.एल.ए. में परिवर्तित करने की बात करते हैं ताकि समाज में व्यापक स्तर पर जनयुद्ध को आगे बढ़ाया जा सके और इस प्रकार सर्वहारा–क्रान्ति का मार्ग प्रशस्त किया जा सके।

माओ के प्रसिद्ध सूत्रवाक्य– "Without a people's army people have nothing" और "Political power flow through the barrel of the gun" के आधार पर नक्सली जनयुद्ध के लिए एक नियमित सेना बनाना चाहते हैं जो उनकी राजनीतिक सत्ता के अधीन हो और उनके विचारों के प्रसार में सहायक हो। माओ के विचारों से प्रभावित नक्सलियों की अवधारणा है कि उनकी सेना पी.एल.जी.ए./पी.एल.ए. एक राजनैतिक सेना है जो पार्टी के सिद्धांतों एवं नेतृत्व के अधीन लोगों के हित–संवर्धन हेतु बनाई गई है। यह क्रांतिकारी सेना जनयुद्ध को गति प्रदान करने के लिए है। जिसके द्वारा समाज मे आमूलचूल परिवर्तनों को गति प्रदान कर अंततोगत्वा राजनैतिक–सत्ता

प्राप्त कर समाज के प्रत्येक वर्ग के जीवन को प्रभावित किया जा सकता है।

नक्सलियों की इन नीतियों के परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक हो जाता है कि उनकी सैन्य नीतियों एवं रणनीतियों की विस्तृत विवेचना की जाए तथा एकत्रित तथ्यों एवं निष्कर्षों के आधार पर उचित रणनीति तैयार की जाए। सुरक्षा बलों के नक्सल विरोधी अभियान में सफलता में गुणात्मक वृद्धि हो, इसके लिए आवश्यक है कि उनकी रणनीतियों को समझा जाए, उनके मजबूत आधार एवं कमजोरियों का पता लगाया जाए तथा उनसे 'पहल' एवं 'गोपनीयता' को छीन लिया जाए। आमतौर पर जब सुरक्षा बलों को किसी आंतरिक सुरक्षा संबंधी समस्या के समाधान के लिए भेजा जाता है तो उस समस्या की पृष्ठभूमि के बारे में अधिक जानकारी नहीं होती और न ही इस परिचय–प्रक्रिया के लिए पर्याप्त समय ही होता है।

अतः ज्यादातर समय किसी हिंसक आंदोलन के दौर में जो सुरक्षा बल पहले पहुंचता है उसे अपरिहार्य क्षति उठानी पड़ती है। नक्सली क्षेत्रों में तैनात पुलिस का वर्तमान अनुभव इसी मान्यता को रेखांकित करता है किंतु अपने रणनीतिक अनुभव के आधार पर नक्सली आंदोलन से निपटने हेतु बेहतर विकल्प खोजे जा सकते हैं।

राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में नक्सलवाद लगातार बढ़ रहा है। अपुष्ट अनुमानों के अनुसार इसका विस्तार एवं प्रभाव देश के 22 राज्यों के 220 जिलों में हो गया है। हालांकि इनमें से सिर्फ 62 जिलों को ही बुरी तरह प्रभावित माना गया है। मध्य 1980 में सिर्फ सात राज्यों के 31 जिलों में प्रभाव एवं 2003 में नौ राज्यों के 55 जिलों में प्रभाव के बाद 2008 में लगभग 220 जिलों में अपना प्रभाव स्थापित करना तथा जनता के एक बड़े समूह को अपने तथाकथित आंदोलन से जोड़ना नक्सलियों की सफल रणनीति का द्योतक है। नक्सलियों की विस्तार योजना की समीक्षा करना इसलिए भी आवश्यक है कि ये अपने विस्तार एवं प्रभाव के लिए उपयुक्त राजनैतिक माहौल बनाते हैं। लोगों की समस्याओं से जुड़ने की कोशिश करते हैं तथा उसके लिए आंदोलन करते हैं।

तदुपरांत योग्य कर्मी को सक्रिय संगठनात्मक कार्य में लगाते हैं एवं योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ते हुए अपने हिंसात्मक मंसूबों को

अंजाम देते हैं जिससे एक भय एवं दहशत का वातावरण बनता है। इस वातावरण की अन्तिम परिणती के रूप में समाज के एक बड़े वर्ग का छद्म समर्थन उपलब्ध होने का दावा किया जाता है। अंतिम रूप में राजनैतिक एवं संगठनात्मक पहलुओं को मजबूत क्रमशः सुरक्षा बलों के विरुद्ध छापामार लड़ाई की जाती है।

वर्ष	1980	2003	2007	2008	2009
राज्य	07	09	13	17	11
जिले	31	55	95	87	91

वर्तमान राष्ट्रीय परिदृश्य में नक्सली अपनी गतिविधियों को लगातार बढ़ा रहे हैं। अपने आंदोलनात्मक विस्तार हेतु भरपूर धन उगाही, पुलिस मुखबिरी के नाम पर विरोध करनेवालों की हत्या, जबरन अपने गिरोह में शामिल करना तथा लगातार प्रशासन को परेशान करनेवाले और अंतिम परिणाम के रूप में समाज के अधिकांश लोगों के लिए जीवन–क्रम में असुविधा पैदा करनेवाले आंदोलनों को जन्म देना वर्तमान में नक्सलियों की प्रमुख रणनीति बनी हुई है। सामरिक स्तर पर दूर–दराज के इलाकों में स्थित पुलिस थानों एवं सुरक्षा बलों के कैंपों पर आक्रमण करना तथा गांवों के सभी संभावित रास्तों एवं ट्रेक पर बारूदी सुरंग बिछाकर अधिकाधिक क्षति पहुंचाने जैसे जन–विरोधी तरीके अपनाए जाते हैं।

वे अपने प्रभाववाले क्षेत्रों में प्रत्येक ठेकेदार, संपन्न व्यापारी एवं उद्योगपति से 'लेवी' के रूप में कार्य राशि का एक निर्धारित प्रतिशत वसूल करते हैं। जिससे वहां हो रहे विकास कार्यों की गुणवत्ता, समय–सीमा व योजना की मितव्ययता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। आर्थिक विकास की योजनाएं 'सुरक्षा' तथा 'वसूली' के डर से या तो शुरू नहीं हो पातीं या भ्रष्टाचार की बलि चढ़ जाती हैं। क्रमशः स्थिति बद से बदतर ही होती जाती है।

नक्सलवादी अपने प्रभाव स्थापन की प्रक्रिया में मुक्त क्षेत्रों की स्थापना को एक महत्वपूर्ण चरण मानते हैं। मुक्त क्षेत्र (लिबरेटेट जोन) और कुछ नहीं बल्कि सरकारी तंत्रों को भयानक हिंसा से त्रस्त कर उन क्षेत्रों में प्रशासनिक व्यवस्था को पंगु बनाकर वहां के निवासियों को सामाजिक सुख–सुविधाओं से वंचित कर एक आक्रोश उत्पन्न करना और अंततोगत्वा हलके के दैनंदिन कार्य–व्यापार पर अपना

प्रभाव स्थापित करना है। किंतु उनकी इस चेष्टा से गरीबों का भला क्या उत्थान होगा? ऐसे में निरंतर फैलती अराजकता और सुरक्षा के अभाव में वस्तुतः 'मुक्त क्षेत्र' 'दण्ड–द्वीप' में परिणत हो जाते हैं जहां माओ और लेनिन के आदर्शों के नाम पर हिंसा को न्यायसंगत और जीवन के समस्त अभावों को दूर करनेवाले एक मात्र विकल्प के रूप में गरिमा–मंडित किया जाता है।

पश्चिम बंगाल के पश्चिमी मिदनापुर जिले में 06 नवंबर, 2008 को लालगढ़ थाने का घेराव शुरू कर नक्सलियों ने क्रमशः एक मुक्त क्षेत्र स्थापित करने का प्रयास किया। इसके लिए ''पुलिस उत्पीड़न विरोधी जन समिति'' (पीपुल्स समिति अगेंस्ट पुलिस एट्रोसीटीज) नाम से एक फ्रंट संस्था भी बनाई गई। पुलिस रिकॉर्ड के अनुसार पश्चिमी मिदनापुर में 2002 से कुल 111 आदमियों की हत्या नक्सलियों ने की और इस दौरान कोई भी नक्सली नहीं मारा गया।

संभवतः प्रशासन की यही निष्क्रियता नक्सलियों के 42 वर्षों के इतिहास में पहली बार लालगढ़ को मुक्तांचल घोषित कर राज्य की शक्ति को सीधे चुनौती देने का दुःसाहस उपलब्ध कराती है यह भले ही नक्सलियों के बड़बोलेपन का उदाहरण है, लेकिन देश के आम नागरिकों के लिए यह गंभीर चिंता का विषय है।

उद्योगों एवं विकास कार्यों का हिंसा के द्वारा सतत विरोध कर नक्सली मजदूर वर्ग के लिए रोजी–रोटी की समस्या ही नहीं खड़ी करते अपितु उनके लिए रोजगार के अवसर भी समाप्त करते हैं। उदाहरणतः छत्तीसगढ़ का बस्तर क्षेत्र खनिज संपदा से परिपूर्ण होने के बावजूद अब तक भयंकर पिछड़ा हुआ है जहां अब भी संपदा का सही उपयोग नहीं हो पा रहा है। नक्सली इस क्षेत्र में हर प्रकार के उद्योग का विरोध कर रहे हैं। नक्सलियों के विरोध एवं हिंसा का परिणाम है कि बस्तर प्राकृतिक संपदा से समृद्ध होने के बावजूद गरीबी एवं भुखमरी का दंश झेल रहा है। सिर्फ छत्तीसगढ़ ही नहीं बल्कि झारखंड भी प्राकृतिक संसाधनों से पटा पड़ा हुआ है लेकिन वामपंथी उग्रवाद ने उद्योगों के विकास पर विराम लगा रखा है।

नक्सली आंदोलन ग्रामीण भारत के ग्रामों का स्वरूप विकृत कर रहा है। पश्चिम बंगाल के छोटे से कस्बे नक्सलवाड़ी में 1967 में पैदा हुआ ये आंदोलन तेजी से अपने प्रभाव क्षेत्र को बढ़ाता गया और यह

बिहार, झारखंड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, आंध्रप्रदेश से लेकर केरल तक पहुंच गया है। अनेक तथाकथित प्रभावित प्रांतों से दूर राज्यों जैसे– दिल्ली, हरियाणा एवं पंजाब इत्यादि में नक्सलियों ने अपनी पहचान बनानी शुरू कर दी है तथा शीघ्र ही इन राज्यों में हिंसा फैलाने की क्षमता रखते हैं। आजादी के बाद से भूमि सुधार एक ज्वलन्त समस्या रही है।

दरअसल संपूर्ण ग्रामीण भारत की सामाजिक, आर्थिक और यहां तक कि सांस्कृतिक बनावट, भूमि–वितरण और उसमें भी भूमि के असमान वितरण से ही प्रभावित होती है। ग्रामीण समाज के विभिन्न स्तर, व्यक्तिगत संपत्ति के रूप में उपलब्ध 'भूमि की मात्रा' से ही निर्धारित होते हैं। भूमि के असमान वितरण ने यहां समाज के एक बड़े वर्ग को, दरिद्र, अभावग्रस्त और विकास के अवसरों के प्रति 'आहूत' बना रखा है, वहीं अल्पसंख्यक दूसरा तबका लगातार जनता और समाज के हित में लगने वाली 'सामूहिक पूंजी' को 'निजी संपत्ति' में परिवर्तित कर रहा है। अतएव स्वतंत्रता प्राप्ति के तत्काल पश्चात ही राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों से भूमि– सुधार की मांगे उठने लगीं और इस पर कई राज्य सरकारों ने उल्लेखनीय कार्य भी किया, किन्तु भूमि के असमान–वितरण की समस्या को दूर करने हेतु एक समग्र–सोच और इच्छावितरण का सर्वथा अभाव रहा। यही कारण है कि नक्सलियों ने भूमि–सुधार को अपनी मुख्य मांग बनाया है, ताकि वर्ग–समानता के अंतिम उद्देश्य को प्राप्त करने में इसे 'प्रथम–सोपान' बनाया जा सके।

1967 में भारत में नक्सलवादी आंदोलन के आविर्भाव के समय, उसके प्रणेता – चारू मजुमदार और कानू–सान्याल द्वारा भी यही मांगें रखी गई थीं। जो बुनियादी तौर पर भूमि–सुधार सहित समाज के आर्थिक व सामाजिक ढांचे में आमूलचूल परिवर्तनों से संबंधित थीं किंतु राज्य सरकारों के रूप में, लगातार सत्ता–परिवर्तन होते रहने के बावजूद स्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ अपितु राजनैतिक स्तर पर होने वाले सत्ता परिवर्तनों के बावजूद देश में एक ऐसी व्यवस्था ने जन्म लिया जिसने अपनी सारी क्षमता से 'यथा स्थितिवाद' को पाला–पोसा और उसे वर्गीय–हितों के संवर्धन का साधन बनाया। परिणामतः समाज के अंतिम छोरों पर समस्याएं जस की तस बनी रही

और विकास गगनभेदी हुंकारों और हर दृश्य का उसे नारों से पटा होने के बावजूद, विकास का लाभ अंतिम व्यक्ति तक नहीं पहुंच पाया। ग्रामीण–भारत के एक बड़े हिस्से को संवैधानिक और शास्त्र सम्मत तरीके से भूमिहीन, अवसरहीन और भविष्यहीन हाड़–मांस के चलते–फिरते लोथड़ों में बदल दिया। इन लोथड़ों का एक बड़ा समूह जीविका हीन होकर शहरों की तरफ पलायन करने पर विवश हुआ तो पीछे छूटे मांस के विराट विस्तार ने नक्सली जैसे लुभावने आंदोलन के लिए जीवित, वंचित, शोषित मगर उद्देश्यहीन जनसमुदाय के रूप में उर्वर–भूमि उपलब्ध कराई।

यह समझना नितांत आवश्यक है कि लोकतंत्र में साधारण आदमी हथियार को अंतिम साधन मानता है। इसके पूर्व वह समस्त उपलब्ध विकल्प अपनी समस्या के समाधान हेतु अपनाता है। लेकिन आशानूकुल परिणाम नहीं मिलने पर वह हिंसक विकल्पों की ओर अग्रसर होता है और लोकतांत्रिक सरकार को चुनौती देता है।

यह मानसिकता जीवन–दशाओं में सकारात्मक परिवर्तन हेतु लोकतांत्रिक विकल्पों को पूरी तरह से खंगालने और उनके परिणामविहीन होने तक की प्रतीक्षा नहीं करती अपितु व्यवस्था परिवर्तन हेतु 'शीघ्र परिणाम देने वाली' हिंसक गतिविधियों को समाज के समक्ष अंतिम विकल्प के रूप में प्रस्तुत करती है। यह लोतांत्रिक व्यवस्था नहीं बल्कि उसमें किसी भी समस्या के समाधान में होने वाला विलम्ब 'प्रतिक्रिया स्वरूप आक्रोश और अंतिम रूप से आंदोलन को जन्म देता है। प्रायः यही 'विलम्ब' व्यवस्था की असंवेदनशीलता के रूप में भी निरूपित किया जाता है, जिसके प्रतिकार में हिंसा एक स्वयंसिद्ध साधन के रूप में सामने आती है। भगत सिंह के शब्दों में – 'बहरों को सुनाने के लिए, बमों की आवाज चाहिए'। मूलरूप में यही 'नक्सलवाद' या 'माओवाद' है।

स्वातंत्रोत्तर भारत में विकासशील जनता के समक्ष हिंसा के सामूहिक प्रस्फुटन के अनेकानेक दृष्टांत रहे हैं। वस्तुतः एक राष्ट्र के रूप में भारत का जन्म ही अभूतपूर्व सांप्रदायिक हिंसा का क्रम अनवरत रूप से जारी रहा, किन्तु समय–असमय होनेवाली ऐसी किसी भी हिंसा ने राष्ट्र की एकता व अखंडता तथा उसके लोकतांत्रिक स्वरूप पर कभी कोई प्रश्नचिन्ह् खड़ा नहीं किया, किन्तु स्वातंत्रयोत्तर भारत

के शैशव–काल में ही अनेक ऐसे भी दृष्टांत मिलते हैं, जब अपनी राजनैतिक मांगों की पूर्ति हेतु, किसी इलाके के समुदाय विशेष द्वारा 'हिंसक साधनों का प्रयोग अत्यंत संगठित तरीके से किया गया और यहीं से स्वतंत्र भारत में आंदोलन का सूत्रपात हुआ। उत्तर–पूर्व, विशेषकर नगालैंड से आरंभ हुई। इस श्रृंखला ने उत्तरोतर–पूर्वोत्तर के लगभग समस्त राज्यों को अपनी चपेट में लिया और कालांतर में इस दावानल का प्रसार मुख्य भूमि में भी हुआ। पहले पंजाब और फिर जम्मू व कश्मीर में हिंसा का यह रूप दृष्टिगोचर हुआ।

वर्ष 2008 में नक्सलियों द्वारा 660 आम नागरिकों तथा 231 सुरक्षाकर्मियों की हत्या की गई, जबकि वर्ष 2009 में यह आंकड़ा क्रमशः 591 व 317 रहा और 2010 में हत्या के ये आंकड़े बढ़कर क्रमशः 718 व 285 रहे। सुरक्षाकर्मियों द्वारा नक्सलवाद के विरूद्ध विभिन्न राज्यों में चलाए गए अभियानों में वर्ष 2008 में कुल 199, वर्ष 2009 में 219 तथा 2010 में मात्र 172 नक्सली ही मारे गए।

व्यापक जन आंदोलनों या समाज में पसरते आक्रोश से प्रभावी तौर पर निपटने के लिए सुविचारित, नियोजित और राजनैतिक संवेदनशीलता की आवश्यकता होती है। प्रभावित राज्यों में राजनैतिक दलों की नक्सलवाद के प्रति दृष्टिकोण राजनैतिक स्वार्थों एवं भ्रष्टाचार से प्रेरित प्रतीत होता है। इन क्षेत्रों में राजनैतिक कार्यकर्त्ता जनता से संवाद बनाने में विफल रहे हैं तथा लगातार अपनी साख खो रहे हैं। नक्सली अपने प्रभाव वाले दूर–दराज के क्षेत्रों में किसी भी स्थापित राजनैतिक दल के क्रियाकलापों को संपन्न नहीं होने देते जिससे क्षेत्र की नेतृत्व प्रदान करने के नाम पर विभिन्न नक्सली संगठनों से अंदरूनी तौर पर जुड़े लोग ही नजर आते हैं। अक्सर चुनावों के समय नक्सलियेां के साथ राजनैतिक पार्टियां गुप्त अलोकतांत्रिक और समान विरोधी समझौता कर ''वोट'' की सौदेबाजी, साथ ही नक्सलियों के प्रभाव का मार्ग भी प्रशस्त करती है। पंचायती राज जैसी योजनाएं भी शासन की घोषणाओं तक ही सीमित होकर रह गई है। इससे राज्य सरकारें भी दृढ़ इच्छा शक्ति दिखाने में असफल रही है तथा किसी प्रकार के ठोस राजनैतिक कदम नहीं उठाए गए हैं।

सरकारों के समक्ष चुनौती है कि नक्सलवाद से प्रभावित इलाकों में जनता के फस कैसे आएं इसको कैसे कम करें व इसका आत्म

विश्वास कैसे जीते तथा कल्याणकारी एवं समाजिक उन्नयनवाली सरकारी योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन कैसे करे। शांति–व्यवस्था बनाए रखने से लेकर जन–जागरण अभियान एवं सामाजिक सुधार की भूमिका के लिए कई दूर–दराज के इलाकों में पुलिस से बेहतर कोई भी विकल्प नहीं दिखता है। संभवतः नक्सलवाद के उन्मूलन में पुलिस की सबसे रचनात्मक भूमिका नजर आती है, क्योंकि प्रशासन का हर तंत्र आतंकित है तथा गंभीर नक्सल प्रभावित क्षेत्र में कोई भी कार्य करना नहीं चाहता। प्रशासनिक संवेदनहीनता लोगों के आक्रोश को बढ़ाती है और नक्सली इसका भरपूर फायदा उठाते हैं।

लेकिन अब साफ तौर पर यह नजर आ रहा है कि प्रशासनिक अमला तभी सक्रिय होगा जब पुलिस कुछ समय तक उन इलाकों में शांति स्थापित करने में सफल हो। अतः पुलिस को इन क्षेत्रों में कई नए अवतारों में जन्म लेना होगा। पुलिस को एक समाज सुधारक, विकास एजेंसी, जन–जागरूकता लानेवाली इकाइयों के रूप में भी काम करना होगा। नई चुनौतियां पुलिस के लिए सिर्फ 'शहादत' ही नहीं ''सहृदयता'' के लिए भी नए सोपान दे रही है जिसे बदलती परिस्थितियों में पुलिस को स्वीकार करना होगा।

हिंसा के किसी भी स्वरूप को आधुनिक सभ्य समाज स्वीकार नहीं करता है। हम आखेट–युगों के बर्बर काल को पीछे छोड़ आएं हैं। आदर्श कितने भी पवित्र क्यों न हो, किन्तु उनकी प्राप्ति के लिए हिंसक साधनों के इस्तेमाल की अनुमति नहीं दी जा सकती। अतः इस समस्या के समाधान हेतु राजनैतिक दलों का निहित राजनैतिक स्वार्थों से उपर उठकर समाज कल्याण हेतु एक समग्र दृष्टिकोण विकसित करना आवश्यक है। शासन के लिए यह अनिवार्य है कि वह विकास असंतुलन को दूर करे और समाज के अंतिम व्यक्ति के कल्याणार्थ आवश्यक तत्वों को अपने विकास–कार्यक्रमों की धुरी बनाए। प्रशासन के लिए यह जरूरी है कि वह 'इतर प्रतिबद्धताओं' के स्थान पर, प्रश्नातीत निष्ठा से विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करे।

भारत में नक्सलवाद एक ऐतिहासिक सिंहावलोकन

नक्सलवाड़ी घटना

'नक्सल' शब्द पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के ''नक्सलवाड़ी'' गांव के नाम से लिया गया है जहां 1967 में कुछ आंदोलनकारियों ने जोतदारों के विरुद्ध हथियारबंद लड़ाई शुरू की थी। नक्सली–जो वामपंथी धारा से जुड़े, आंदोलनकारी हैं पार्टी एवं सरकार के भूमि–सुधार एवं किसानों के हितों के प्रति नीतियों के धीमे कार्यान्वयन से नाखुश भारत की कम्युनिष्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के एक विद्रोही ग्रुप ने आंदोलन के लिए हथियार उठा लिये तथा जोतदारों को इसका निशाना बनाना तय किया तथा जोतदारों की सम्पत्तियों को गरीब किसानों में बांटने का निर्णय लिया।

इस प्रक्रिया में अपने रास्ते में आनेवाले पुलिसकर्मियों को आंदोलनकारियों ने हिंसक तरीके से निष्क्रिय करने की कोशिश की। यह विद्रोही ग्रुप व अनेक गठन विघटन के पश्चात सम्प्रति में CPI (माओवादी) के तहत संगठित है। हालांकि लगभग समान विचारधारा के 39 अन्य ग्रुप भी सक्रिय हैं लेकिन CPI(Maio) ही सबसे ज्यादा प्रभावशाली है तथा घटनाओं भूमिका सक्रिय देश में होने वाली!

''नक्सलवाड़ी'' गांव भारत के आधुनिक इतिहास में एक ऐसी पहचान बन गया है जिसने न सिर्फ वामपंथी धारा को नया मोड़ दिया बल्कि आधुनिक इतिहास का सबसे हिंसक आंदोलन का प्रतीक भी है। यह गांव बांग्लादेश (तत्कालिक पूर्वी पाकिस्तान) से 22 किलोमीटर,

नेपाल से 6 किलोमीटर तथा तिब्बत से 120 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस क्षेत्र में 256 वर्गमील भूमि पर फैले नक्सलवाड़ी, खारीवाड़ी तथा फांसीदेवा तीन स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहे हैं।[1] 1967 में इस क्षेत्र की जनसंख्या 1,26,000 थी।[2]

नक्सलवाड़ी घटना की विवेचना की जाए तो यह सर्वसहमति से माना जा सकता है कि नक्सलवाद या माओवाद या चरम वामपंथी आंदोलन के लायक जमीन हालात नक्सलवाड़ी क्षेत्र में हमेशा से रहे हैं। कानू सान्याल जो कि चारू मजूमदार एवं जंगल संथाल के साथ आधुनिक रूप से इस हिंसक आंदोलन के प्रणेता समझे जाते हैं, ने इस क्षेत्र के आंदोलन के बारे में विस्तृत रूप से अपने अनेक रिपोर्टों एवं लेखों में इसका उल्लेख किया गया।[3] कानू सान्याल के अनुसार वर्ग संघर्ष नक्सलवाड़ी में 1946 में ही प्रारंभ हो गया था, लेकिन 1948–50 से कम्युनिस्ट नेतृत्व की अन्य प्राथमिकताओं के कारण यह स्थापित था। लेकिन 1951 से 1967 तक बिना रुकावट प्रगतिशील रहा तथा इसका नतीजा रहा 1967 का आंदोलन, जिसे पेंकिग रेडियो ने 'वसंत का शंखनाद' (A Peal of Spring toundor) कहा था।

हालांकि 1967 से पूर्व आंदोलन मुख्यतः आर्थिक मांगों को पूरा करवाने के लिए था। चूंकि नक्सलवाड़ी क्षेत्र चाय बागानों के बहुतायत के कारण बागानों में काम करनेवाले मजदूरों से भरा पड़ा था। अतः किसान एवं बागानों में मजदूरों ने कंधा से कंधा मिलाकर यह आंदोलन चलाया। कानू सान्याल की मानें तो 1955 में चाय बगान के मजदूरों के लिए बोनस की मांग में चलाए आंदोलन में इस क्षेत्र के दस हजार किसान एवं मजदूरों ने अपने तीर धनुष जैसे परंपरागत हथियारों से पुलिस की एक टुकड़ी को निहत्था कर दिया था।[4]

1958–59 में 'पश्चिम बंगाल कृषक' सभा ने जोतदारों के कब्जेवाली 'बेनामी' जमीनों पर किसानों द्वारा अधिकार स्थापित करने की अपील की। लेकिन सिलीगुड़ी सब–डिवीजन कृषक समिति ने इससे एक कदम आगे बढ़कर किसानों से अपील की वे जमीन जोतकर खेती के उत्पाद को अपने कब्जे में ही रखें तथा जोतदारों को उनका हिस्सा तभी दिया जाए जब जमीन में मल्कियत का वे कोई साक्ष्य दिखाएं। समिति ने कृषकों को हथियार से लैस रहने की हिदायत दी जिससे जोतदारों एवं पुलिस द्वारा की जानेवाली किसी भी

कार्रवाई से निपटा जा सके। आंदोलन ने शीघ्र ही उग्र रूप लेना शुरू कर दिया। आंदोलनकारियों के जोतदारों के लठैतों एवं पुलिस के साथ झड़पों की खबर के साथ–साथ पुलिसवालों के हथियारों को छीनने की रिपोर्ट आने लगी। लगभग दो हजार किसानों ने अपनी गिरफ्तारी दी। अंततः पश्चिम बंगाल प्रांतीय (Provincial) कृषक सभा के निर्देश पर नक्सलवाड़ी में इस आंदोलन को वापस कर लिया गया।

नक्सलवाड़ी में घटना के मुख्य सूत्रधार चारू मजूमदार थे। चारू मजूमदार कौन था तथा इस प्रकार के विद्रोह कराने के पीछे उनकी क्या मंशा थी, यह जानना आवश्यक है। क्या नक्सलवाड़ी क्षेत्र में लोग *Recent* चेंज में चरम वामपंथी रूझान रखते रहे हैं। 1962 में भारत और चीन के युद्ध के समय में भी नक्सलवाड़ी के वामपंथी कैडर भारत को ही आक्रमणकारी मानते हुए चीन के सर्मथन में अपनी गिरफ्तारी दी थी। इसमें गिरफ्तारी देनेवालों में एक चारू मजूमदार भी थे।[5]

1966 सिलीगुड़ी क्षेत्र के कम्युनिस्ट कैड़रों (वामपंथी कार्यकर्ता) ने चारू मजूमदार के क्रांतिकारी लेखों (Eight documents) के बारे में जाना तथा आंदोलन को नए सिरे से तेज करने के अनेक विकल्पों पर विचार किया। इस समय चारू मजूमदार तेजी से एक स्थानीय सर्वमान्य नेता के रूप में उभरकर आने लगे थे।

चारू मजूमदार 1948 में वामपंथी विचारधारा के संपक्र में आए तथा खासकर माओत्से–तुंग से काफी प्रभावित रहा। 1918 में सिलीगुड़ी के जमींदार पिता विरेश्वर मजूमदार के घर में पैदा हुआ तथा मैट्रिक की परीक्षा 1936 में पास की। अतः इंटरमीडियट परीक्षा के पहले ही 1938 में उस समय प्रतिबंधित कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (CPI) में शामिल हुए। पहले वह किसानों के लिए फिर मजदूरों के लिए पहले जलपाईगुड़ी जिले तथा बाद में सिलीगुडी जिले में पार्टी की ओर से काम करते रहे। कम्युनिस्ट पार्टी की अनेक नीतियों से उनकी असहमति शुरू से रही। जिसके कारण पार्टी ने उनके अनेक कार्यों की निंदा भी की। प्रत्युत्तर में चारू पार्टी के ''संशोधनवादी'' विचारधारा का विरोध करते रहे। भारत–चीन युद्ध में अपने देश की नीतियों का विरोध करने के लिए गिरफ्तार किए जाने के बाद उन्हें 1963 में रिहा किया गया।

इसी समय सिलीगुड़ी विधानसभा के उपचुनाव में CPI के प्रतिनिधि के रूप में चुनाव लड़ा जिसमें उनकी पराजय हुई। कम्युनिस्ट पार्टी में टूट के बाद 1964 में उन्होंने CPI(M) की सदस्यता ली। CPI(M) ने इसे पार्टी विरोधी गतिविधियों के कारण 1965 में कुछ समय के लिए उन्हें निलंबित रखा। 1967 में चुनावों के बाद CPI(M) द्वारा यूनाइटेड फ्रंट में शामिल होने के निर्णय के बाद उन्होंने लेखों की श्रृंखला लिखी जिसमें कार्यकर्त्ताओं से माओ के नीति के अनुसार हथियारबंद लोकयुद्ध पर जोर दिया। अपनी इन्हीं नीतियों के कार्यान्वयन लिए उन्होंने सिलीगुड़ी में जमीन तैयार करनी शुरू कर दी।

2 मार्च, 1967 को नक्सलवाड़ी गांव में स्थानीय जमींदार के सशस्त्र गुंडों ने बिगुल नामक किसान की बेरहमी से पिटाई की। उसके दूसरे दिन से किसान आंदोलनकारियों ने जमीन की खुदाई शुरू कर लाल झंडे खड़े करने शुरू कर दिए। 3 मार्च, 1967 को तीन खेतिहर मजदूर लापा किशन, शांगु किशन और रतिया किशन CPI (M) के 150 समर्थकों के साथ लाठी और तीर कमान से लैस होकर जोतदार के भंडार से सारा अनाज उठा लिया।

18 मार्च, 1967 को सिलीगुड़ी सब–डिवीजन किसान कन्वेंशन का आयोजन उपरोक्त घटनाओं के पृष्ठभूमि में किया गया। कानू सान्याल के अनुसार किसानों को चेताया गया कि यह लड़ाई एक लंबी लड़ाई (Protracted War) हो सकती है तथा किसानों के आंदोलन का दमन करने के लिए केंद्र तथा राज्य सरकारें बल का प्रयोग भी कर सकती हैं। लेकिन जीत सर्वहारा वर्ग की होगी। किसानों से अपील की गई कि जोतदारों एवं प्रशासन के गुंडों से निपटने के लिए हथियारबंद हों। किसान कमेरियों की गांवों के हर मामले में प्राथमिकता होगी तथा जोतदारों के जमीन पर एकाधिकार को खत्म कर जमीन का पुनः बंटवारा किया जाएगा।[6]

7 मई, 1967 को ''किसान एवं मजदूरों'' की ''ऐतिहासिक कॉन्फ्रेंस'' आयोजित की गई। इस इरादे को पक्का किया गया कि जिन खेतों को किसान द्वारा जोता जा रहा है लेकिन फिर भी जिनकी मिल्कियत नहीं है, उस सारी जमीन को कब्जाकर पुनः बंटवारा खेती करनेवालों के बीच किया जाए। सिलीगुड़ी के वामपंथियों ने उग्र रूप अपनाना शुरू कर दिया था तथा यह विचारधारा आम जनता को

काफी लुभावनी लगने लगी। 2 मार्च, 1967 से मई, 1967 के बीच लगभग 100 से अधिक हिंसक घटनाओं की रिपोर्ट पुलिस में दर्ज कराई गई जबकि कई अनेक घटनाएं प्रतिशोध के डर से कभी पुलिस को रिपोर्ट ही नहीं की गईं।[7]

जिला प्रशासन इस तरह के हालात से निपटने के लिए एकदम तैयार नहीं था। कम्युनिस्टों के सरकार का हिस्सा होने के कारण मामला राजनीतिक तौर पर काफी संवेदनशील था। फलतः हरे कृष्णा कोनर, भूमि राजस्व मंत्री, (पश्चिम बंगाल सरकार) 16 मई 1967 सिलीगुड़ी वार्ता के लिए आए तथा 17 मई, 1967 को कानू सान्याल से मुलाकात की। समझौता किया गया कि कानू सान्याल को गिरफ्तार नहीं किया जाएगा बल्कि वह एवं जंगल संथाल स्वयं आत्मसमर्पण करेंगे। सारी हिंसक गतिविधियां रोक दी जाएगीं तथा जमीन का बंटवारा स्थानीय एजेंसी से विमर्श के बाद किया जाएगा। अनाजों के गैर–कानूनी संग्रह को सरकार जनता की समिति की सूचना पर उजागर कर अधिग्रहण कर लेगी। लेकिन आंदोलनकारियों के बीच चरमपंथियों ने इसे कार्यान्वित नहीं होने दिया तथा इस समझौते से पीछे हट गए। कहा जाता है कि चारू मजूमदार इस प्रकार के किसी भी समझौते के पक्ष में नहीं थे।

23 मई, 1967 को इंस्पेक्टर सोनम वांगड़ी, नक्सलवाड़ी थाना क्षेत्र के एक गांव में कुछ वांछित लोगों को गिरफतार करने गया। वह अपने हथियारबंद दस्तों को पीछे छोड़कर तीन पुलिसकर्मियों के साथ निहत्थे ही आगे गया। लेकिन गांव के लोगों ने घात लगाकर तीर कमान से इसकी हत्या कर दी। 24 मई को दो पुलिस पार्टी, एक पुलिस अधीक्षक तथा अन्य उप–पुलिस अधीक्षक के नेतृत्व में दो विभिन्न दिशाओं से उसी गांव की ओर बढ़ी जिससे स्थिति पर सही प्रकार से काबू पाया जा सके। लेकिन उप पुलिस अधीक्षक की पार्टी महिलाओं एवं बच्चों की भीड़ से घिर गई। घबराकर पुलिस पार्टी ने फायर किया जिसमें दस लोगों की जान चली गई जिसमें छह महिलाएं थीं। नक्सलवाड़ी क्षेत्र में स्थिति लगातार बिगड़ रही थी तथा पुलिस एवं किसानों के बीच दूरी लगातार बढ़ती जा रही थी।

10 जून, 1967 को 150 आंदोलनकारियों ने CPI (M) का झंडा लिये जोतदार नगेन राम चौधरी के घर पर हमला कर उसके अनाज,

आभूषण एवं बंदूक को लूट लिया तथा उसे अगवा कर लिया। बाद में उसकी हत्या कर दी गई। कानू सान्याल ने पंचायत में ''जन अदालत'' लगाकर नगेन राय चौधरी के खिलाफ मृत्युदंड का हुक्म दिया, क्योंकि उसने आंदोलनकारियों का विरोध करने के लिए लोगों को इक्ट्ठा किया था। उसी दिन एक अन्य जोतदार जयनंदन सिंह के घर पर भी आंदोलनकारियों की एक दूसरी इकाई ने आक्रमण किया तथा उसके अनाज, आभूषण एवं हथियार को लूट लिया।

स्थिति विस्फोटक होते देख 5 जुलाई को कैबिनेट मीटिंग में पश्चिम बंगाल सरकार ने आंदोलनकारियों के विरुद्ध पुलिस कारवाई की मंजूरी दी।

12 जुलाई से शुरू हुए पुलिस की कार्रवाई में 700 लोगों को गिरफ्तार किया गया। जगह–जगह छापा माारकर उनके अनेक ठिकानों को ध्वस्त कर दिया गया। जंगल संथाल को गिरफतार कर लिया गया। कानू सान्याल को अक्टूबर 1967 में गिरफ्तार किया गया। कुल मिलाकर 1486 लोगों की गिरफ्तारी हुई और 197 क्रिमिनल केस दर्ज किए गए। 1968 तक 103 लोगों को 20 क्रिमिनल केस में सजा हुई तथा 689 लोगों के खिलाफ 117 मुकदमे दर्ज किए गए। लेकिन 1968 के मध्यावधि चुनाव में यूनाईटेड फ्रंट की सरकार की वापसी के बाद सारे मुकदमे वापस कर लिए गए तथा कैदियों को रिहा कर दिया गया।

इस प्रकार सत्य और अहिंसा के व्यावहारिक प्रयोग से विश्व के समक्ष औपनिवेशिक परतंत्रता को समाप्त कर अंतिम रूप से स्वाधीनता को प्रदान करने के विकल्प को प्रस्तुत करने वाले राष्ट्र को ही अपनी आजादी के दो दशक के भीतर ही नक्सलवाड़ी में चारू मजूमदार, कानू सान्याल एवं जंगल संथाल के नेतृत्व में एक आंदोलन ने जन्म लिया, जिसे उस समय तो खत्म कर दिया गया लेकिन वर्षों बाद आज भी किसान एवं मजदूरों या चरमपंथी या माओवादियों के आंदोलन को नक्सलवाद के नाम से ही जाना जा रहा है। इस घटना की विवेचना विभिन्न वर्गों द्वारा अपने–अपने तरीके से की गई। डा. त्रिनाथ मिश्र, पूर्व पुलिस अधिकारी के अनुसार इस आंदोलन की असफलता के मुख्यतः तीन कारण थे– आंदोलन के कार्यकर्त्ताओं में विचार धारा के प्रति समर्पण का अभाव, गुरिल्ला युद्ध पद्धति का अनुभव न होना तथा

उपयुक्त हथियारों का अभाव। डा. मिश्र के अनुसार इन कारणों के साथ चारू मजूमदार को राज्य के कैबिनेट मंत्री की समिति से वार्ता और समझौता न करने की जिद् ने भी आंदोलन को वक्त से पहले ही खत्म करा दिया। वरना अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिए आंदोलनकारियों को वक्त तथा समर्थन मिल जाता।[8]

लेकिन कानू सान्याल ने आंदोलन को सफल बताया। उसके अनुसार किसानों के दार्जिलिंग तराई क्षेत्र में आंदोलन के दस फायदे हुए :–

(i) सदियों से चली आ रही पुरानी सामंती व्यवस्था टूटी।
(ii) जालसाजी से किए अनुबंध (deeds) एवं दस्तावेज जलाए गए।
(iii) किसानों एवं जोतदारों के बीच असमान्य agreement (समझौतों) को अमान्य घोषित किया गया (declared null and void)।
(iv) जमाखोरी के चावल जब्त किए गए।
(v) अत्याचारी जोतदारों का open trial किया गया।
(vi) जोतदारों का साथ देनेवाले गुंडों का सफाया किया गया।
(vii) किसानों को परंपरागत हथियारों एवं जोतदारों से छीनी बंदूकों से हथियारबंद किया गया।
(viii) कानून एवं व्यवस्था के लिए रात्रि में पहरेदार लगाए गए।
(ix) किसानों के राजनीतिक सत्ता के लिए क्रांतिकारी कमेटियां बनाई गईं।
(x) सामंती कानून एवं न्यायालय को निष्क्रिय किया गया।[9]

कानू सान्याल द्वारा उपरोक्त गिनाई गई उपलब्धियां भले ही वस्तुनिष्ठ न हों फिर भी इस आंदोलन से जिस प्रकार की निहित क्रांतिकारी महत्वकांक्षाएं थीं उसकी एक झलक मिल गई थी। जीवन–दशा में सुधार हेतु प्रारब्ध और अंतिम रूप से किसी 'दैवीय हस्तक्षेप' पर निर्भर करनेवाले भारतीय जनमानस को एक अन्य विकल्प के रूप में 'हिंसा' का खून लग गया था।

नवीं कांग्रेस (2007) जो 'एकता कांग्रेस' के तौर पर सामरिक रूप से ज्यादा महत्वपूर्ण है, के दौरान नक्सलवादियों ने इस घटना में विश्लेषण करते हुए लिखा –

''संशोधनवाद के खिलाफ लड़ते हुए और तेलंगाना सशस्त्र संघर्ष की विरासत को आगे बढ़ाते हुए महान नक्सलवाड़ी संघर्ष ने जन्म लिया। एक छोटे–से गांव से उठी चिनगारी ''बसंत का

शंखनाद'' बन गई और दावानल के रूप में पूरे देश में फैल गई। श्रीकाकुलम और कांकला, वीरभूम, देबरा–गोपीवल्लभपुरम् भोजपुर, मुसहरी, लखीमपुरखीरी होते हुए देश के कोने–कोने में इसी संघर्ष ने कीर्तिमान स्थापित किए। अतीत की ठंडी राख को झाड़ते हुए तमाम क्षेत्रों में लाल चिनगारियों के भड़क उठने पर सारा देश एक ही नारे से गूंज उठा– ''एक ही रास्ता, एक ही रास्ता – नक्सलवाड़ी, नक्सलवाड़ी।''

60 के दशक में, जब दुनिया भर में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में संशोधनवादियों के खिलाफ सुस्पष्ट विभाजन रेखा खींची जा रही थी, उसी समय भारत के कम्युनिस्ट आंदोलन में दशकों से गहरी जड़ें जमाए बैठे संशोधनवाद के विरुद्ध भी संघर्ष की सिंह गर्जना हुई। इस संघर्ष का नेतृत्व हमारे नेता, शिक्षक और पथप्रदर्शक कामरेड चारू मजूमदार और कामरेड कन्हाई चटर्जी ने किया। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) की सातवीं कांग्रेस द्वारा संशोधनवादी रास्ता अपनाए जाने के बाद और कामरेड़ चारू मजूमदार के संशोधनवाद के खिलाफ आठ दस्तावेज लिखते हुए नई किस्म की क्रांतिकारी पार्टी के गठन व महान नक्सलवाड़ी संघर्ष की नींव रखी।[10]

नक्सलवाड़ी की घटना भारतीय किसान एवं मजदूर आंदोलनों के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ रही। लेकिन तत्कालिक विद्रोह को जितनी आसानी से खत्म कर दिया गया था उसने अनेक सवाल भी खड़े किए कि क्या ऐसे आंदोलनों के लिए वैचारिक रूप से लोग सहमत और तैयार थे? क्या आंदोलनों की गति इतनी ही तीव्र होनी चाहिए या धीरे–धीरे इसे पनपने का अवसर देते रहना चाहिए तथा जब सर्वहारा वर्ग क्रांति के लिए तैयार हो तभी लोकयुद्ध को तेज करना चाहिए।

नक्सलवाड़ी से पहले और बाद में

वामपंथी विचारधारा का प्रभाव भारत में 20 वीं सदी के दूसरे दशक से शुरू हो गया था तथा 1920 में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना हुई। स्वतंत्रता आंदोलन में वामपंथियों के द्वारा किए गए कार्य बहुत प्रभावी नहीं रहे, बल्कि भारत छोड़ों आंदोलन का विरोध तथा पाकिस्तान की मांग का समर्थन और नेताजी सुभाष चंद्र बोस जैसे

लोकप्रिय नेता की अलोचना इत्यादि के कारण वामपंथियों की जनता में कोई पकड़ नहीं बन पाई। नक्सलवाड़ी में हुए आंदोलन को भूमि सुधार के साथ जोड़ा जाता है जो आज के माओवादियों के सीधे सशस्त्र क्रांति द्वारा राजनैतिक सत्ता हथियाने की कार्यनीति से भिन्न है। देश में भूमि संबंधी समानताएं तथा भेद–भाव वर्षों से रहा है तथा कृषि जीवन–यापन का मुख्य साधन होने के कारण भूमि संबंधी समस्याओं ने भी भारतीय ग्रामीण समाज को व्यापक स्तर पर प्रभावित किया है। नक्सलवाड़ी से पहले कृषक क्रांति की सबसे महत्वपूर्ण घटना थी तेलंगाना आंदोलन।

आंध्रप्रदेश में 1946 में 'आंध्र महासभा' के नेतृत्व में किसानों ने जमींदारों के मनमाने और अत्याचारी रवैए के विरोध में आंदोलन शुरू किया। हैदराबाद, जो आजादी के बाद भी कुछ महीनों तक एक अलग राज्य था तथा जिसका भारत में विलय नहीं हुआ था – के निजाम द्वारा भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को प्रतिबंधित किया गया था, इसलिए ''आंध्र महासभा'' जैसे संगठनों का गठन कर उसका इस्तेमाल किया गया। लोगों का आक्रोश बेगारी, जबरन मजदूरी, जमीन से गैर कानूनी बेदखली तथा गांव स्तर के कर्मचारियों द्वारा लोगों का शोषण इत्यादि के खिलाफ था। यह आंदोलन बहुत जल्द पूरे निजाम में फैलने लगा तथा सशस्त्र था। इसको दबाने के लिए निजाम ने ''रजाकार सेना'' गठित की वह उसकी सहायता हेतु, पुलिस व अपनी सेना लगा दी। इस प्रकार दोनों तरफ की हिंसा से आंदोलन खूनी संघर्ष में बदलता चला गया। धीरे–धीरे आंदोलन की प्रकृति कृषि भूमि सुधार से रूपान्तरित होकर निजाम के अत्याचारी शासन से मुक्ति की हो गई। किसानों की सेना बनाई गई जिसकी संख्या 5,000 तक पहुंच गई तथा लगभग 3,000 गांवों में ''ग्राम–राज्य'' इकाई स्थापित की गई व तेलंगाना का लगभग 1/6 हिस्सा विद्रोहियों के नियंत्रण में आ गया।

'रजाकर सेना' द्वारा सांप्रदायिक अत्याचारों एवं वामपंथियों के प्रतिरोध के कारण बिगड़े हालात को देखते हुए 13 सितम्बर 1948 को भारत सरकार ने पुलिस कार्रवाई करने के लिए सुरक्षा बलों को भेजा तथा पांच दिनों में स्थिति को नियंत्रण में कर लिया। निजाम को हटा दिया गया तथा हैदराबाद को भारत गणराज्य का हिस्सा बना दिया

गया। लेकिन वामपंथियों के दो गुटों में आंदोलन को जारी रखने के विषय पर मतभेद था। अतः उन्होंने तत्कालीन रूसी राष्ट्रपति व कम्युनिस्ट जोसेफ स्टालिन से परामर्श किया। रूस के कम्युनिस्ट पार्टी के मुखिया ने भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था को लोगों के हित में कार्य करने वाला मानते हुए भारतीय कम्युनिस्टों को आंदोलन को वापस लेने की सलाह दी। इस प्रकार पहला सशस्त्र कृषि आंदोलन 1951 तक समाप्त हो गया।

तेलंगाना आंदोलन ने यह स्पष्ट कर दिया कि अशिक्षित, संसाधनहीन, शोषित लोगों को एक जुटकर जन आंदोलन के लिए एक शक्ति बनाया जा सकता है तथा लोगों को बेहतर भविष्य के सपने दिखाकर क्रांतिकारी आंदोलन के लिए प्रेरित किया जा सकता है। अभाव, असमानता के शिकार लोगों को गोलबंद कर उनसे सशस्त्र क्रांति कराई जा सकती है। परन्तु इन सीखों के बावजूद भू–सुधार, वनों पर आदिवासियों के अधिकार, कृषि क्षेत्र इत्यादि में सरकारों द्वारा सुधारों की पर्याप्त कोशिशें नहीं की गईं। नतीजतन, वामपंथी उग्रवाद धीमे–धीमे देश के विभिन्न हिस्सों में अपना प्रसार करता रहा।

1964 में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी को मूलभूत सुधार के क्षेत्र में 'संशोधनवादी' करार देते हुए पार्टी के उग्र नेता जिसमें चारू मजूमदार, कानू सान्याल इत्यादि शामिल थे, ने अलग भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) पार्टी बनाई। नई पार्टी ने वादा किया कि वह परिवर्तन के लिए क्रांतिकारी रास्ता अपनाएगी।

चारू मजूमदार ने अपनी पार्टी में आनेवालों के लिए चार शर्तें रखी– पहला, उनके विचारों को ही मार्क्स तथा लेनिन के विचारों की सही व्याख्या माना जाएगा। दूसरा, पूरे भारत में क्रांति हेतु उपयुक्त जमीनी हालात मौजूद हैं। तीसरा, माओ के 'पीस मील सिद्धांत' को सही रणनीति के तौर पर अपनाया जाएगा तथा चौथा, गुरिल्ला युद्ध ही क्रांति के लिए सही रास्ता है।

नक्सलवाड़ी में 1967 में चारू मजुमदार ने पार्टी की सरकार होने के बावजूद आंदोलन का नेतृत्व कर एक के बाद एक अनेक हिंसक घटनाओं को अंजाम दिया। उन्होंने पार्टी द्वारा प्रस्तावित किसी भी प्रकार के समझौते को नहीं माना तथा अपने अनुयायियों के साथ क्रांति के लिए अलग रास्ता चुना।

CPI तथा CPI(M) में मतभेद बढ़ते ही गए। हालांकि उनके वैचारिक मतभेदों को स्थान देने के लिए पार्टी के अंदर ही ऑल इंडिया कोर्डिनेशन पार्टी ऑफ रेकुलशनरीज की स्थापना 1967 में की गई, लेकिन क्रमशः मतभेद तीव्र होते गए, परिणामतः चारू मजुमदार सहित अनेक नेता पार्टी से निलंबित किए गए।

1969 में चारू मजुमदार ने CPI (Markist-Leninist) पार्टी का गठन किया तथा अपने आदर्शों की प्राप्ति हेतु क्रांतिकारी रास्ता अपनाने का निश्चय किया तथा पार्टी अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हथियारबंद लड़ाई लड़ेगी जिससे वंचितों को समानता का हक मिल सके।

CPI(MIL) के गठन को चीन के कम्युनिस्टों का भरपूर समर्थन मिला। उसने नागा विद्रोहियों को CPI(MIL) को हथियार उपलब्ध कराने हेतु CPI(MIL) को निर्देशित किया। इसके पहले नक्सलबाड़ी की घटना को चीन में ''बसंत का वज्रनाद'' कहा गया था। उस दौरान हर हिंसक घटना को चीन बहादुरी का कार्य बताता रहा। चारू मजुमदार ने भी घोषणा की – ''चीन का चेयरमैन हमारा चेयरमैन है और चीन का रास्ता ही हमारा रास्ता है।''

छुटपुट नक्सली घटनाओं के कारण पश्चिम बंगाल में कानून व्यवस्था लगातार बिगड़ती रही। वामपंथी, कलकत्ता शहर में काफी वारदातें करने लगे थे, जो आम बंगाली शहरी के संवेदनशील और भावुक मानस के सर्वथा विपरीत थी परिणाम स्वरूप 1971 में वामपंथी इन्हीं हालातों के कारण चुनाव हार गए तथा राज्य में कांग्रेस की सरकार बनी। कांग्रेस सरकार ने जुलाई–अगस्त 1971 के बीच "Operation Steeplechase" नामक अभियान बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा में एक साथ चलाया, जिसमें सेना, अर्धसैनिक बल एवं पुलिस ने साथ मिलकर काम करना शुरू किया। पुलिस की इन टुकड़ियों द्वारा आंदोलन दो महीनों में ही खत्म कर दिया गया। अनेक लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया तथा मुकदमें दर्ज किए गए। चारू मजुमदार भी गिरफ्तार किए गए तथा 28 जुलाई 1972 को पुलिस हिरासत में उनकी मृत्यु हो गई। चारू मजुमदार की मृत्यु के बाद वामपंथी उग्रविचार के लोगों को सही मार्गदर्शन का अभाव रहा व यह नहीं समझ रहे थे कि आंदोलन को बढ़ाने हेतु क्या किया जाए। अप्रैल 1980 में कोंडापल्ली सीतारमैया ने इसी दौरान एक संगठन बनाया

जिसे CPI(MIL) पीपुल्स वार ग्रुप के नाम से जाना जाने लगा। इस पार्टी ने आंध्रप्रदेश में धीरे–धीरे गहरी पकड़ बना ली तथा सशस्त्र आंदोलन करने लगा। पहली बार इसके प्रभाव से आंदोलन शनैः– शनैः काफी हिंसक होता चला गया। दसूरी तरफ कन्हाई चटर्जी और अमूल्य सेन द्वारा चारू मजुमदार की मृत्यु के बाद ''दक्षिण देश'' नाम से एक संगठन चारू के विचारों को अक्षरशः आगे बढ़ाने के लिए गठित किया। धीमे–धीमे यह अपनी पकड़ बिहार वर्तमान (झारखंड) के पहाड़ी क्षेत्रों में बढ़ाने लगा तथा फिर गया वह औरंगाबाद क्षेत्र में। सत्तर के दशक तक आते–आते इसका नाम माओवादी कम्युनिस्ट सेंटर (MCC) कर दिया गया तथा उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, मध्यप्रदेश में आधार बनाने की कोशिश की गई। 2003 में इस पार्टी का नाम MCCI (माओवादी कम्युनिस्ट सेंटर ऑफ इंडिया) कर दिया गया।

सितंबर 2004 में इन्हीं दो प्रमुख पार्टी PWG एवं MCCI का विलय कर (माओवादी) का गठन किया गया। संप्रति यही पार्टी है जो नक्सली उग्रवाद से संबंधित लगभग 90 % घटनाओं को अंजाम देती है तथा कुल हत्याओं में लगभग 95% में इसी समूह की भूमिका होती है।

इन प्रमुख पार्टियों के अलावा भी अनेक छोटे–छोटे समूह अस्तित्व में रहे लेकिन उनकी पकड़ बहुत सीमित क्षेत्र तथा लोगों पर थी। सबके विचारों में न तो एकरूपता थी न ही स्थिरता। कइयों ने चुनावों में हिस्सा भी लिया तथा एक नियमित राजनैतिक पार्टी के रूप में रहने का भी प्रयास किया। इसमें से CPI-ML(Party unity) बिहार का एक शक्तिशाली गुट था जिसका 1998 में PWG विलय कर दिया गया। लगातार अस्सी के दशक से ही सारी गुटों के विलय के अभियान में लगा रहा।

नब्बे के दशक में एवं उनके बीच वर्चस्व की लड़ाई में दोनों पार्टियां कमजोर पड़ती गई तथा समाज पर इनका प्रभाव उतना व्यापक नहीं रहा। सुरक्षा बलों की सफलताएं भी उल्लेखनीय रही थी। वर्ष 2000 में पुलिस कारवाईयों के कारण अपनी स्थिति को कमजोर होता देख दोनों पार्टियों ने एक दूसरे पर आक्रमण न करने की संधि ा की तथा 2003 तक कुछ हद तक आपसी तालमेल स्थापित करने के लिए आम सहमति की ओर बढ़ने लगे। दोनों गुटों ने मार्क्स–लेनिन–माओ विचारधारा को अपनाने का निश्चय किया तथा पांच मसौदा दस्तावेज

तैयार किए और अंततः PWG सितंबर 2004 में विलय हो गया। 14 अक्टूबर 2004 को रामकृष्णन, के तत्कालीन राज्य सचिव द्वारा विलय की घोषणा की गई। यह वह दौर था जब आंध्र प्रदेश की कांग्रेस सरकार, ''सीजफायर'' घोषित कर नक्सलियों से शांति वार्ता कर रही थी। वस्तुतः नक्सलियों ने ''सीज फायर'' का फायदा उठाकर अपने संगठन तथा सैन्य शक्ति को संगठित किया तथा विलय के बाद शक्तिशाली इकाई के रूप में उभरे। पार्टी ने अपने सैनिक विंग को ''पीपुल्स गुरिल्ला आर्मी (PGA)'' का नाम दिया। इसका गठन PWG ने 2001 में किया गया था। PGA को संगठित कर और सैन्यीकरण करने का निश्चय किया गया। केंद्रीय समिति ने 2004 में PGA को PLGA में बदल दिया। वर्तमान में भारत में लगभग 39 नक्सली संगठन सक्रिय हैं लेकिन ज्यादातर सिर्फ कागजों पर ही अस्तित्व में हैं, सिर्फ CPI (माओवादी) ही सबसे प्रभावशाली पार्टी है।

1. नक्सलवाद : डा. एस.के.मिश्रा (2010) के. डब्लू पब्लिशर, नई दिल्ली।
2. Naxalism : causes and care, Dr. P.K. Agarwal, IAS, (lRetd) Manas Publications New Delhi.
3. Kanu sanyal, Report on the peasant movement in Terai Region' Liberation-11, No-1 (November1968) PP31-3.
4. Kanu sanyal, 'More about Naxalbari' in samar sen etal (eds), Naxalbari and After A Frontier Anthology 11, P.331.
5. Suniti Kumar Ghosh ; Naxalbari Before and after – Reminiscences and Appraisal (2009), New age publishes (P) Ltd.
6. Kanu Sanyal, 'Report on the peasant movement in Terai Region,' Liberation" No (November 1968)
7. Prakash Singh, The Naxalite Movement in India (Revised 2006) Rupa & Co.
8. Dr. Trinath Mishra, IPS (Retd.), Barrel of the Gun. The Maoist challenge and Indian Democracy-2007 Sheriden Book Company, New Delhi.
9. Liberation, November 1968 PP32.
10. नक्सलवादी साहित्य से – एकता कांग्रेस की कम्युनिष्ट पार्टी (माओवादी) की 9 वीं कांग्रेस।

नक्सलवाद-वर्तमान परिप्रेक्ष्य

राष्ट्रीय परिदृश्य में नक्सलवाद की समस्या लगातार विकराल रूप ग्रहण करती जा रही है। अपुष्ट अनुमानों के अनुसार इनका विस्तार एवं प्रभाव देश के 22 राज्यों के 220 जिलों में हो गया है। हालांकि इनमें से सिर्फ 90 जिलों को ही बुरी तरह प्रभावित माना गया है। लेकिन मध्य 1980 में सिर्फ सात राज्यों के 31 जिलों में तक सीमित रहने वाली एवं 2003 में 9 राज्यों के 55 जिलों में प्रभाव के बाद 2008 में 220 जिलों में प्रभाव तथा 2009 में गृहमंत्री भारत सरकार के अनुसार 20 राज्यों के 2000 पुलिस थानों में नक्सलियों के प्रभाव क्षेत्र की उत्तरोतर वृद्धि उनकी सफल रणनीति का द्योतक है। नक्सलियों की विस्तार योजना की समीक्षा करना इसलिए भी आवश्यक है कि ये अपने विस्तार एवं प्रभाव के लिए उपयुक्त राजनैतिक माहौल बनाते हैं। लोगों की समस्याओं से जुड़ने की कोशिश करते हैं तथा उसके लिए आंदोलन करते हैं।

तदोपरांत योग्य कर्मी को सक्रिय संगठनात्मक कार्य में लगाते हैं एवं योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ते हुए हिंसात्मक मंसूबों को अंजाम देते हैं जिससे एक भय एवं दहशत का वातावरण पैदा होता है। परिणामः अनेकानेक लोगों को जबरन नक्सलियों द्वारा अपने आंदोलन में शामिल कर लिया जाता है। राजनैतिक एवं संगठनात्मक पहलुओं को मजबूत कर क्रमशः सुरक्षा बलों के विरुद्ध छापामार युद्ध शुरू करते हैं तथा सारे क्षेत्रों में भय एवं आतंक का माहौल बनाने में और प्रशासन को निरूपाय व असहाय सिद्ध करने में सफल होते हैं।

नक्सलियों द्वारा देश के कुछ राज्यों खासकर छत्तीसगढ़, झारखंड एवं उड़ीसा में लगातार हिंसक आंदोलनों द्वारा असुरक्षा का वातावरण बनाया जा रहा है। साथ ही साथ प्रचार मीडिया का

उपयोग कर यह मिथ्य भी फैलाने की कोशिश की जा रही है कि हिंसा एवं हत्याएं सुरक्षा बलों के अतिवाद के विरुद्ध ही आम लोगों की प्रतिरक्षा का परिणाम हैं। नक्सली बारंबार अपनी युद्ध नीति को छापामार युद्ध से चलायमान युद्ध रणनीति में बदलने तथा पी.एल.जी.ए (PLGA) को पी.एल.ए (PLA) में बदलने का समय आ गया है बताकर अपने हताश कैडरों को उत्साहित एवं ऊर्जावान रखने का प्रयास कर रहे हैं, साथ ही वे अपनी नीतियों की सफलता और सामाजिक सफलताओं को अपने प्रचार तंत्र से प्रसारित कर सुरक्षा बलों को रक्षात्मक शैली अपनाने के लिए दबाव बनाने की कोशिश कर रहे हैं। नक्सलियों के इन नीतियों के परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक हो जाता है कि उनकी सैन्य–नीतियों एवं रणनीतियों की विस्तृत विवेचना की जाए तथा एकत्रित तथ्यों एवं निष्कर्षों के आधार पर उचित प्रतिकारक रणनीति तैयार की जाए।

सुरक्षा बलों के नक्सल–विरोधी अभियानों की सफलता में मात्रात्मक व गुणात्मक वृद्धि हो, इसके लिए आवश्यक है कि नक्सलियों की रणनीतियों को समझा जाए, उनके मजबूत आधार एवं कमजोरियों का पता लगाया जाए तथा उनसे 'पहल' एवं 'गोपनीयता' को छीन लिया जाए। आमतौर पर, जब सुरक्षा बलों को किसी आंतरिक सुरक्षा संबंधी समस्या के समाधान के लिए भेजा जाता है तो उस समस्या की पृष्ठभूमि के बारे में अधिक जानकारी नहीं होती है और न ही परिचितीकरण हेतु पर्याप्त समय होता है। सुरक्षा बल अनेक प्रयोग करती रहती है तथा सही रणनीति अपनाने में समय लग जाता है। अतः ज्यादातर समय किसी हिंसक आंदोलनों के दौर में जो सुरक्षा बल पहले पहुंचते हैं उन्हे काफी क्षति उठानी पड़ती है।

नक्सलवाद जनता की राजनीतिक सत्ता स्थापित करना चाहता है जिससे वर्ग–संघर्ष खत्म हो तथा सर्वहारा वर्ग का उत्थान हो। नक्सलवादी अपने इस प्रयास में लोकयुद्ध के सहारे सशस्त्र संघर्ष को महत्वपूर्ण मानते हैं तथा इन प्रयासों के क्रम में सैन्यीकरण को विशेष महत्व दिया जाता हैं। माओ की सिखलाई के अनुसार लोकयुद्ध के लिए एक नियमित सेना बनाना चाहते हैं जो उनकी राजनीतिक सत्ता एवं विचारों के अधीन हो। माओ के विचारों से प्रभावित नक्सलियों की अवधारणा है कि उनकी सेना पी.एल.जी.ए./पी.एल.ए. एक राजनीतिक

सेना है जो पार्टी के राजनीतिक सिद्धांतों एवं नेतृत्व के अधीन लोगों के हितों में बनाई गई है न कि किन्हीं अन्य उद्देश्यों के लिए। यह क्रांतिकारी सेना लोकयुद्ध को गति प्रदान करने के लिए हैं। दूसरी अवधारणा यह है कि इस बात को हमें मानना चाहिए कि हमारी सेना दुश्मनों से कमजोर है तथा छोटी है। अतः हमारी जीत सिर्फ दुश्मनों की कमजोरियों पर आघात कर तथा अपने संपूर्ण शक्ति को इकट्ठा कर लड़ने में ही जीत संभव है। जब दुश्मन हम पर हावी होने लगे तो हमें पीछे हट जाना चाहिए। माओवादियों के इसी गुरिल्ला युद्धनीति से एक आतंक एवं भय का माहौल जनमानस में फैलने लगती है तथा स्थिति को नियंत्रण करने के लिए आम लोगों का समर्थन भी नहीं मिल पाता।

नक्सली अपने सशस्त्र दस्तों को क्रमिक विकसित कर सशक्त करना चाहती है। अनियमित गुरिल्ला बल एवं जन निलिशिया से ग्राम रक्षा दल तथा स्थानीय गुरिल्ला दस्ता बना कर क्रमशः गुरिल्ला स्कैंड, गुरिल्ला प्लाटून एवं गुरिल्ला कंपनी विकसित कर रही है। छापामार युद्धों ने इन गुरिल्ला दस्तों को आवश्यकतानुसार एकत्रित कर समन्वित युद्ध करने के ध्येय से पी.एल.जी.ए. का गठन किया हैं जिसे नक्सली 'पी.एल.ए.' एवं 'बेस एरिया' के गठन के लिए पहला प्रयास मानते हैं। वर्तमान समय में माओवादी अपने युद्ध के स्वरूप को चलायमान युद्ध के स्तर तक विकसित करने का दावा करते हैं।

चलायमान युद्ध (Mobile warfare)

क्रांतिकारी युद्धनीति के अपने सिद्धांतों के तहत नक्सली छापामार युद्ध (Gureilla Warfare) को चलायमान युद्ध (Mobile Warfare) एवं तदोपरांत पोजीशनल युद्धनीति (Positional warfare) में क्रमिक विकास करना चाहते हैं। चलायमान युद्ध आजकल चर्चा का विषय है, क्योंकि नक्सली नेतृत्व यह मानने लगा है कि उनके छापामार युद्ध को चलायमान युद्ध में बदलने का समय आ गया है। चलायमान युद्ध का उनका मूल मंत्र हैं 'लड़ो जब तुम जीत सकते हो, और दूर निकल जाओ जब तुम नहीं जीत सकते। (Fight when you can win, move away when you can't)। चलायमान युद्ध में किसी खास स्थान पर कब्जा बनाये रखने के बदले प्रतिद्वंद्वी के सेना को

तबाह करने एवं आक्रमण करते रहने पर ज्यादा जोर दिया गया है। चलायमान युद्ध में क्रांतिकारी सेना के बयान के लिए त्वरित परिचालन एवं आक्रमण के साथ तुरंत एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में चले जाने (Move) की क्षमता पर बल दिया गया है। इस युद्धनीति के अनुसार बड़े क्षेत्रों में दुश्मन के रणनीति एवं क्षमता के अनुरूप एक जगह से दूसरे जगह बदलने एवं फुर्ती से पुनः एकत्रित होकर आक्रमण करने पर दुश्मनों का ज्यादा नुक्सान पहुंचाना है।

इस युद्ध नीति में स्थितियों के अनुसार हमेशा आवश्यक रणनीतियों में बदलाव एवं युद्ध की परिस्थितियों को अपनी सामर्थ्य के अनुसार ढालने की भी प्रक्रिया हैं। इसके लिए ज्यादा संख्या में योद्धा एवं नियमित तथा विशेष रूप से प्रशिक्षित सैनिक आधुनिक हथियारों से लैस होकर समन्वित युद्ध करते हैं । यह छापामार युद्ध से ज्यादा कठिन एवं जटिल है तथा इसके लिए बड़े ऊंचे दर्जे का अनुशासन एवं उच्च कोटि की नेतृत्व क्षमता की आवश्यकता होती है तथा नेतृत्वकर्ता का युद्धकौशल में निपुण होना आवश्यक है। इसमें ' पहल ' एवं ' सरप्राईज ' हमेशा उनके पास होता है जिनसे विरोधी सेना रणनीतियों को हमेशा बदलते रहने को विवश रहती है तथा ज्यादातर समय नक्सलियों के सैन्य दस्तों के खोज में ही लगे रहना पड़ता है।

छापामार युद्ध मुख्यतः 'आक्रमण करो और भाग जाओ' की नीति अपनाते हैं। जबकि चलायमान युद्ध छापामार युद्ध एवं नियमित युद्ध के बीच की रणनीति है। इसमें छापामार युद्ध से ज्यादा समय दुश्मनों पर आक्रमण करने में लगाया जाता है क्योंकि गुरिल्लों को समन्वित तरीके से एकत्र कर आक्रमण किया जाता हैं तथा सारी प्रक्रिया केंद्रित होती है। यह नक्सलियों द्वारा नियमित पी.एल.ए. विकसित करने के क्रम तथा दस्तों की बड़ी इकाइयों में ढालने के प्रयास की स्थितियां हैं। जबकि छापामार दस्तों के छोटी इकाइयां के अस्तित्व एवं उसमें स्थानीय कमांड में ज्यादा बदलाव किए बगैर बड़े इकाइयों द्वारा केंद्रित कमान के तहत आक्रमण करना एवं सुरक्षा बलों को परेशान करने की प्रक्रिया है। इस पद्धति में नक्सली सेकेंडरी एवं बेस फोर्स को एकत्रित कर आक्रमण को अंजाम देते हैं लेकिन उनका लक्ष्य अपने मेन फोर्स की संख्या को सीधे तौर पर बढ़ाकर मजबूत करने का भी होता है। अतएव, आज की परिस्थितियों में जहां वो चलायमान युद्ध में बदलाव

की बात कर रहे हैं वहीं स्पष्ट तौर अपने सामरिक सैन्य विकास की तरफ बढ़ने के लिए जमीनी तौर पर अनेक कार्य कर रहे हैं। जैसे अपने "Cadre Strength" को बढ़ाकर Main force में सीधे भर्ती करना। ऊंचे दर्जे के हथियारों को हासिल करना। सैन्य समन्वय के लिए आसूचना एवं सूचना तंत्र को विकसित करना। सैन्यीकरण को अपने राजनीतिक विचारधारा के अधीन रखने के लिए उचित अनुशासन, प्रशिक्षण एवं सिद्धांतों पर बल देने के लिए बराबर कैडर से संबंध बनाना एवं नजर रखना इत्यादि कार्यो में लगे हैं।

इन जटिल कार्यों में अनेक सिद्धांतकारों के अलावा प्रमुख नेता कैडर लगे हुए व जिससे नक्सलियों का निःसंदेह आवागमन एवं संचार नेटवक्र फैल रहा है तथा उनके एक्सपोज होने की संभावना भी बनी रहती हैं। शक्ति संवर्धन के प्रयासों को विफल करना सुरक्षा बलों का एक मुख्य लक्ष्य हो सकता है।

नक्सलियों द्वारा अपने सैन्य सशक्तिकरण के लिए आधुनिक हथियारों को हासिल करने पर विशेष बल दिया जा रहा है। विस्फोटकों को लूटकर सुरक्षा बलों के खिलाफ IED का इस्तेमाल कर, क्षति पहुंचाकर हथियार लूटना इनकी रणनीति का एक अहम पहलू है। एन.एम.डी.सी. के स्टोर से लूटे गए 20 टन विस्फोटकों से, नक्सलियों के अनुसार ही उन्हें काफी फायदा मिला। इन विस्फोटकों के बल पर उन्होंने, अनेक शस्त्रागार लूटे तथा सैन्य क्षमता को मजबूत किया। अतः विस्फोटकों के सुरक्षा एवं इसमें प्रयोग के बारे में सही रणनीति बनाने एवं अमल में लाने की जरूरत है। ज्यादातर नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में खाद्यानों की खुदाई एवं अन्य उद्योगों के लिए इसका उपयोग किया जाता है जहां से भ्रष्ट तरीकों से या लूटकर नक्सली विस्फोटकों को हासिल कर रहे हैं। जब तक इन विस्फोटकों का सही हिसाब–किताब एवं सुरक्षा नहीं की जाएगी तब तक नक्सलियों को विस्फोटकों को हासिल करने से नहीं रोका जा सकता है। इसके लिए उद्योग से जुड़े लोगों को विशेषतौर पर सचेत करने एवं संवेदनशील बनाने की आवश्यकता है। लैंड़ माइंस के द्वारा सुरक्षा बलों को नुकसान पहुंचाने के बाद नक्सली अब आधुनिक हथियारों से सशक्तिकरण पर अपनी नीति केंद्रित कर रहे हैं, क्योंकि अनुभवों एवं संसाधनों से पूर्ण सुरक्षा बल अब इस प्रकार के माइंस इत्यादि से बचाव में सक्षम

हैं। इस स्थिति में आमना–सामना होने पर हथियारों की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं।

जनवरी 2007 में माओवादियों द्वारा छापामार युद्ध को चलायमान युद्ध में रूपांतरित करने का निर्णय लिया था। नक्सलियों के अनुसार 'नयागढ़' पर आक्रमण को इस नई युद्धनीति के तहत पहला आक्रमण मानते हैं। लेकिन बड़ी इकाइयों के गठन में देरी होने से चलायमान युद्धनीति पूरी तरह से क्रियान्वित नहीं की जा सकी। हालांकि इस बीच नक्सलियों ने छापामार युद्ध एवं चलायमान युद्ध शैली को अपनाते हुए बड़े ही योजनाबद्ध तरीके से कभी एक क्षेत्र तो कभी उसके विपरीत क्षेत्र, फिर तीसरे क्षेत्र में वारदात को अंजाम दिया है। 29 जून को उड़ीसा के वालीमेना में 'ग्रे हाउंड' पर आक्रमण किया जिसमें 46 कर्मी शहीद हो गए। 16 जुलाई को मलकानगिरी में उड़ीसा पुलिस के एस.ओ.जी. (SOG) के लैड माइंस प्रूफ गाड़ी को विस्फोट कर 17 कार्मिकों की हत्या, 22 अक्टूबर, 2008 को बीजापुर में के.रि.पु.बल पर एंबुश कर 12 कर्मियों की हत्या तथा 1 फरवरी, 2009 को गढ़थिरौली में 15 पुलिस कर्मियों की हत्या कुछ प्रमुख बड़ी वारदाते हैं जिनमें (आंध्रप्रदेश नक्सल विरोधी विशेषज्ञ बल) नक्सलियों ने सुनियोजित तरीके से बड़े पैमाने पर आक्रमण कर नुकसान पहुंचाया है।

नक्सलियों की चलायमान युद्धनीति को गहराई से समझने के उपरांत इससे मुकाबला करने की नीति को योजनाबद्ध करने की आवश्यकता है। सुरक्षा बलों को अपने परिचालन के पूर्व नक्सलियों के तुरंत मूव करने की क्षमता, कैडर को एकत्रित कर एंबुश लगाने इत्यादि एवं आधुनिक हथियारों के साथ प्रशिक्षत सैनिकों की संभावना को ध्यान में रखते हुए बनाना है। प्रति नक्सली अभियानों में खास पहलू यह भी है कि नक्सली लंबी लड़ाई की बात करते हैं तथा धोखा, छल–कपट या अन्य तारीकों से सुरक्षा बलों को नुकसान पहुंचाना चाहते हैं। चाहे कृत्य कितना ही बर्बर या अमानवीय क्यों न हो। सिद्धांतों का आवरण ओढे–धूर्त एवं मूल्यहीन नक्सलियों की हिंसा को खत्म करने के लिए उन्हें दुश्मन की तरह समझना ही सरकार की एक उचित 'प्रतिकारक परिचालनिक रणनीति' होगी।

जहानाबाद जेल ब्रेक कांड नक्सलियों के ग्रामीण से शहर की

ओर जनाधार बढ़ाने तथा अपने सैन्य अभियान को शहरों के परिदृश्य में सफल बनाने का एक प्रयोग था। 2005 के इन दिनों में अन्य कई छोटे–छोटे सैन्य अभियानों की सफलता तथा कोरापुट के उदाहरण के साथ नक्सलियों ने काफी संख्या में स्थानीय एवं जनमिलिशिया को शामिल कर इसे राजनीतिक सैन्य अभियान के रूप में अपनी ताकत के परीक्षण करने की योजना बनाई। नक्सली इतिहास में यह एक इनके रणनीति में transition का फेज था तथा transition इस में देहाती जनाधार से शहरी जनाधार के तरफ बढ़ने की कोशिश। 2005 में 23 जून को बिहार के पश्चिमी चंपारण के मधुबन प्रखंड में दिन दहाड़े हमले कर अनेक महत्वपूर्ण ठिकानों का निशाना बनाया तथा पुलिस के साथ जमकर मुठभेड़ की। हालांकि इस घटना में 8 नक्सलियों को मार गिराया गया लेकिन इससे नक्सलियों ने यह समझना शुरू कर दिया कि किसी भी लक्ष्य को आजमाया जा सकता है और यहां अब उनकी पहुंच से दूर नहीं।

'नगरों की ओर' की सोच को विकसित करते हुए तथा घटनाओं को सफल क्रांतियों से जोड़ने के प्रयासों के तहत नक्सलियों द्वारा ही नवंबर का माह चुना गया। 11 नवंबर, को गिरिडिह शस्त्रागार की लूट तथा 13 नवंबर को जहानाबाद जेल ब्रेक कर नक्सली बार–बार 17 नवंबर 1917 की रूसी क्रांति को स्मरण कराना नहीं भूलते। अपनी क्रांति को लेनिन–स्थलिन की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक पार्टी) की सर्वहारा वर्ग की सशस्त्र क्रांति से जोड़कर अपने कैडरों को लोकयुद्ध में शामिल होकर समाजवाद की स्थापना को चुनौती देते नक्सली नेतृत्व को संघर्ष के लिए संकल्प कराने तथा क्रांतिकारी घोषणाएं करने के लिए एक आधार प्रदान करती रही। नक्सली कोरापुट, मधुबन व गिरिडीह सहित जहानाबाद जेल ब्रेक को छापामार युद्ध को चलायमान युद्ध में जाने का भविष्य के लिए एक सफल प्रयोग भी मानते हैं।

जहानाबाद जेल ब्रेक (13 नवंबर 2005)

रविवार 13 नवंबर 2005 की रात नक्सलियों ने जहानाबाद उप जेल पर आक्रमण कर 388 कैदियों को छुड़ा लिया तथा रणवीर सेना जिसे नक्सली अपना दुश्मन मानते हैं, से जुड़े नौ लोगों की हत्या कर

दी जिसमें उसके दो प्रमुख नेता भी शामिल थे। नक्सली इस जेल ब्रेक को सिर्फ अपने नेता अजय कानु एवं अन्य नक्सलियों को छुड़ाने का ही प्रयास नहीं मानती बल्कि जेल में बंद बंदियों के नारकीय जीवन एवं उनके मानवाधिकार न्याय पाने के कानूनी हक तथा जेल के बदतर हालात को प्रकाश में लाने की चेष्टा भी बताते हैं।

नक्सली इसे राजनीतिक एवं सामरिक जन प्रतिरोध का प्रतीक एवं प्रतिमान मानते हैं। नक्सलियों से लेकर उनकी समान रखनेवाले तथा घटनाओं को पलांश में शीर्षक देनेवाले अनेक बुद्धिजीवियों ने इसकी तुलना फ्रांसीसी क्रांति के बेस्टील की घटना से भी की। 14 जुलाई 1789 को बेस्टील पर क्रांतिकारियों ने हमला कर अपने कैदी साथियों को छुड़ाया था और तब से क्रांति को एक नई दिशा तथा जान मिली। वही प्रशासन जहानाबाद जेल ब्रेक को एक लचर प्रशासनिक व्यवस्था तथा जेल की सुरक्षा में खामियों का नतीजा मानता रहा। हालांकि प्रशासनिक स्तर पर दोषी अधिकारियों के खिलाफ कोई गंभीर कदम उठाए गए हों ऐसा नहीं प्रतीत होता है। यानि कि लचर व्यवस्था को और सड़ने के लिए छोड़ दिया गया।

पूरे देश में जेल प्रशासन अव्यवस्थित है तथा उसकी आधारभूत जरूरतों को पूरा करने में पूरी तरह से नाकाम है। जेल में कैदियों की दशा दयनीय है तथा जेलकर्मी व्याप्त भ्रष्टाचार में लिप्त हैं। जेल के अंदर भी गुंडाराज है। 2005 में बिहार में 55 जेल थे जिनमें 6 केंद्रीय, 24 जिला तथा 25 उपजेल थे। जिनकी कुल क्षमता लगभग 20 हजार कैदियों की थी जबकि उस समय लगभग 48 हजार कैदी इन जेलों में बंद थे। जेल में कैदियों के साथ असमान व्यवहार तथा मूलभूत सुविधाओं का अभाव एक प्रमाणिक सत्य है। इसका विश्लेषण इस दृष्टिकोण से करना इसलिए आवश्यक हो जाता है, क्योंकि इस घटना में इतने बड़े पैमाने पर लोगों के भाग लेने की खबर खुफिया विभाग क्यों नहीं लगा पाया? संभवतः शहर में इतने भारी तादाद में नक्सली उपस्थित रहे तथा आतंक फैलाने के बाद पास के गांवों में भाग गए। लेकिन पास के थानों एवं जिलों से पुलिस द्वार घेराबंदी एवं प्रभावी परिचालन को अंजाम नहीं दिया जाना प्रशासनिक विफलता का एक ज्वलंत उदाहरण है। जेल अव्यवस्था के खिलाफ लोगों का समर्थन नक्सलियों को मिला साथ ही हमले के दौरान नक्सलियों ने दहशत का ऐसा माहौल रच दिया था

जिससे प्रशासन एवं आम लोग सदमे में थे।

13 नवंबर, 2005 को तकरीबन 21.15 बजे बम के धमाकों के साथ नक्सलियों ने जहानाबाद जिला मुख्यालय के विभिन्न स्थानों पर फायरिंग एवं विस्फोट करना शुरू कर दिया। फायरिंग जिला उपायुक्त, पुलिस अधीक्षक के घरों पर, सी.आर.पी.एफ. कैंप, पुलिस लाइन और जेल के संतरियों पर एक साथ शुरू हुई। 21.15 बजे ब्लास्ट वास्तव में नक्सलियों द्वारा बम को लगाते हुए दुर्घटनावश हो गया जिसमें दो नक्सली मारे गए अन्यथा आक्रमण 21.30 बजे नियोजित किया गया था। जेल के संतरियों पर फायरिंग में संतरी जख्मी हो गए। नक्सलियों ने सारे संतरियों को आत्मसमर्पण करने को कहा। 03 सिपाही एं 01 हवलदार की गार्ड ने नक्सलियों की बड़ी संख्या को देखते हुए आत्मसमर्पण कर दिया। भगदड़ और शोर–गुल को सुनकर जेल वार्डन जो बैरक में खाना खा रहा था, वह बाहर निकलकर आया तथा संतरियों को हथियार मुहैया कराने के उद्देश्य से शस्त्तागार की तरफ बढ़ा।

लेकिन नक्सलियों की बड़ी संख्या को एकदम पास देख उसने शस्त्तागार की चाभी फेंक दी। नक्सलिों ने कोच की चाभी को लेने के लिए जेल वार्डन को जांघ में गोली भी मारी। लेकिन वार्डन ने चाभी की जानकारी नहीं दी। जिससे बड़ी मात्रा में हथियार एवं गोला बारूद नक्सलियों के हाथ लगने से बच गया। इसी बीच 8–10 नक्सली जेल की चाहरदीवारी पर बांस एवं रस्से की सीढ़ियों की सहायता से चढ़कर जेल के अंदर पहुंच गए। एक बार जब नक्सलियों का एक ग्रुप अंदर पहुंच गया तब जेल को खाली कराने की कमांड जेल में बंद नक्सली अजय कानु ने अपने हाथ में ले ली। उसने अपने नक्सली साथी से हथियार को लेकर सभी कैदियों को तुरंत जेल खाली करने को कहा।

ज्यादातर नक्सली कैदी तुरंत जेल के बाहर इक्ट्ठा हो गए। लेकिन रणवीर सेना से संबद्ध कैदियों ने इसका प्रतिरोध किया तथा जेल छोड़ने को तैयार नहीं हुए। प्रत्युत्तर में नक्सलियों ने रणवीर सेना के नेता को गोली मार दी तथा कई अन्य को अगवा कर लिया। नक्सली ने अपने पार्टी से जुड़े कैदियों को नजदीक के पिंजोरा गांव में जाने को कहा जहां उनके लिए तीन ट्रक और चार जीप तैयार थीं

और वहां से वे लोग बाराबारा पहाड़ की ओर रवाना हो गए। रात के 11 बजे तक जहानाबाद जेल ब्रेक ऑपरेशन नक्सलियों की तरफ से खत्म हो गया तथा सभी नक्सली जिला मुख्यालय से बाहर गांवों की तरफ भाग खड़े हुए।

इस जेल ब्रेक अभियान को संभवतः 250–300 नक्सलियों ने अंजाम दिया। हालांकि जेलकर्मी एवं जहानाबाद पुलिस इनकी संख्या एक हजार तक मानती है। इस अभियान का नेतृत्व सी.पी.आई. (माओवादी) के क्षेत्रीय कमांडरों ने किया, जिनमें से 2 कमांडर कुछ दिन पहले ही जेल से रिहा हुए थे जबकि जेल में ही था। जेल में रहने के कारण ये नक्सली नेता जेल की सुरक्षा व्यवस्था एवं गतिविधियों से वाकिफ थे तथा एक प्रभावी ''जेल ब्रेक'' की योजना बनाने में सफल हुए।

नक्सलियों के साहित्य एवं इस घटना पर उनके द्वारा केस स्टडी करने पर अनेक आश्चर्यजनक तथ्य प्रकाश में आते हैं। जहानाबाद जेल को ब्रेक करने की योजना नक्सलियों ने छः माह पहले ही बनाई थी। पहले योजना यह थी कि 28 जुलाई, 2005 को चारू मजूमदार की पुण्य तिथि पर यह आक्रमण किया जाए। लेकिन इसे योजनाबद्ध करते–करते 25 अगस्त तक का समय हो गया, जब बिहार–झारखंड स्पेशल एरिया मिलिटरी कमीशन (BISAMC) ने इसे सर्वसम्मति से पारित कर सेंट्रल मिलिटरी कमीशन को भेजा। 8 अक्टूबर, 2005 को इसे सेंट्रल मिलिटरी कमीशन ने पास किया तथा 13 नवंबर को 12 बजे सभी नक्सली पिंजोरा गांव में इकट्ठा हुए। नक्सलियों का जमावड़ा कुछ दिन पहले से ही शुरू हो गया था। लेकिन इतनी बड़ी संख्या में नक्सलियों के एकत्र होने तथा छः माह पहले की योजना होने के बावजूद खुफिया विभाग को इस की खबर नहीं हो पाई।

नक्सलियों की भाषा में इस क्रांतिकारी ऑपरेशन का प्रधान लक्ष्य था जेल में बंद कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों व समर्थकों को यातनागृह जहानाबाद कारागार से आजाद कराना। इसके अतिरिक्त इस जेल में सुरक्षित रह रहे विभिन्न जनसंहारों में संलिप्त सामंती गुंडावाहिनी 'रणवीर सेना' के कुछ चुनिंदे कुख्यात हत्यारे सरगनाओं को मृत्युदंड देना।''

नक्सली इसे राजनीतिक–सैन्य अभियान कहते हैं तथा इस बात

पर जोर देते हैं कि सैन्य अभियान में सारे छापापार योद्धा स्थानीय ही थे। उनके अनुसार सिर्फ मगध के कई एक प्लाटूनों, स्थानीय छापामार दस्तों (LOS) स्थानीय सांगठनिक दस्तों (LOS) तथा बड़े पैमाने पर जनमिलिशिया व ग्राम रक्षा दल (VDS) के लोगों तथा स्थानीय कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त आस–पास के कुछ कामरेडों ने इस मिशन को सफल है। उनके अनुसार इस अभियान में 33 प्रतिशत जनमिलिशिया व ग्राम रक्षा दल के लोग थे। गौरतलब है कि जनमिलिशिया की ऐसे अभियानों भागीदारिता में नक्सलियों की रणनीति का एक अहम हिस्सा है।

जहानाबाद जेल ब्रेक को नक्सली सी.पी.आई. (माओवादी) के गठन के बाद की पहला साझा अभियान मानते हैं जिसकी सफलता ने भविष्य में इनके अनेक सैन्य अभियानों हेतु प्रेरणा दी। ऑपरेशन जेल ब्रेक के ठीक दो दिन पहले 11 नवंबर 2005 को गिरिडिह जिले में होमगार्ड के प्रशिक्षण केंद्र पर छापा मारकर नक्सलियों ने 194 हथियार और काफी मात्रा में कारतूस कब्जा कर लिया था। 21 सितंबर 2004 को विलय के बाद से नक्सलियों का प्रयास रहा है कि हथियारों को लूटकर नवसृजित पार्टी के कैडरों को अधिक से अधिक संख्या में हथियारबंद किया जाए।

मुख्य हथियार हैं। अतः अपने सैन्य अभियानों में मुख्य बल के कैडरों जो अत्युधनिक हथियारों से लैस होते हैं की तैनाती आवश्यकतानुसार केंद्रीय मिलिटरी कमीशन द्वारा की जाती है।

सुरक्षाकर्मियों से लूटे गए हथियारों का विवरण

वर्ष	2007	2008	2009	2010
लूटे गए हथियार	233	1219	217	253

इसी प्रकार कैडरों की संख्या के बारे में भी एकमत राय नहीं है लेकिन नियमित पी.एल.जी.ए. के सैनिकों के अलावा संगठनों के विभिन्न स्तरों पर सक्रिय सदस्य हैं। ग्रामीण स्तर पर अनेक ग्रामीण इलाकों में संघम सदस्य तथा पार्टी सेल के सदस्य हैं जिनकी संख्या प्रभावित क्षेत्रों में काफी अधिक है।

कैडरों को संघटित करने के लिए जल, जमीन तथा खनिज एवं आदिवासियों के नाम पर संगठित कर धीरे–धीरे उन्हें पार्टी सेल तथा

सैन्य इकाइयों के लिए चुनकर उनकी भर्ती की जाती है। सभी नियमित सैनिक एवं कार्यकर्ता को प्रतिमाह तनख्वाह भी दी जाती है। नक्सली अपने कैडर को प्रशिक्षण देने के लिए कैंप लगाते हैं जहां उन्हें छापामार युद्ध के बारे में प्रशिक्षण दिया जाता है। विगत वर्षों में इस प्रकार के कैंपों की संख्या में लगातार वृद्धि हुई जो उनके बढ़ते हुए सैन्यीकरण को दर्शाता है।

वर्ष	2007	2008	2009	2010
सशस्त्र प्रशिक्षण केंद्र	48	52	61	94

एक अन्य शीर्ष माओवादी नेता अशोक पटनायक का दावा है कि संगठन के पास 10,000 सशस्त्र कैडर तथा 45,000 से 50,000 समर्थक हैं, तथा लगभग 900 ए.के.सीरीज के हथियार, 200 एल.एम.जी. के साथ–साथ भारी मात्रा में .303 राइफल एवं 7.62 एस.एल.आर. रायफल मौजूद है।

विस्फोटक

हथियारों में सबसे ज्यादा घातक तरीके से नक्सलियों द्वारा सुरक्षा बलों के विरूद्ध विस्फोटकों का प्रयोग किया गया है। नक्सलियों द्वारा 2010 में प्रभावित क्षेत्रों में 187 विस्फोट किए गए जबकि देश में कुल 338 विस्फोट हुए। वर्ष 2009 में 205 विस्फोट नक्सलियों द्वारा हुए जबकि देश में कुल 428 विस्फोट हुए।

छत्तीसगढ़ में नक्सलवाद की समीक्षा

पिछले दशक से छत्तीसगढ़ में जंगलों का सौंदर्य और इनका परिदृश्य ही नहीं बदला है अपितु इसके भीतर की सुगबुगाहट और इनके अंतर में पनपती गतिविधियों ने राष्ट्रीय परिदृश्य को ही बदलना आरंभ कर दिया है। कभी '' धान के कटोरे'' के रूप में विख्यात रहा छत्तीसगढ़ ''बारूद के कटोरे'' में बदलता चला गया।

छत्तीसगढ़ नक्सलियों की रणनीति का एक अहम हिस्सा है। इस राज्य के दक्षिणी भाग के बस्तर संभाग में नक्सलियों द्वारा अनेक हिंसात्मक कार्रवाइयों को अंजाम देकर सुरक्षा बलों को काफी नुकसान पहुंचाया गया है। नक्सलियों के सैन्यीकरण एवं युद्ध रणनीति ने सुरक्षा बलों के पराक्रम को चुनौती दी जिसे एक समेकित व योजनाबद्ध तरीके से नाकामयाब करने की जरूरत है। नक्सलियों द्वारा की गई

वारदातों की संख्या में वर्ष–2008 में 2007 की तुलना में कमी हुई है लेकिन इन वारदातों में गुणात्मक वृद्धि हुई जिसके कारण सुरक्षा बलों एवं नागरिकों के हताहतों की संख्या बढ़ी है। अगर राष्ट्रीय स्तर पर नक्सली समस्या की विवेचना करें तो पुनः 2009 एवं 2010 में वारदातों एवं हताहतों की संख्या बढ़ी। 2010 में कुल 625 वारदातें हुई, जिसमें 343 सुरक्षाकर्मी शहीद हुए एवं अन्य नागरिकों की हत्या कर दी गई। कुल नक्सली वारदातों का लगभग 51% सिर्फ छत्तीसगढ़ एवं झारखंड में होता है।

नक्सलियों की वारदातों की समीक्षा करना इसलिए भी आवश्यक है कि ये अपने विस्तार एवं प्रभाव के लिए उपयुक्त राजनैतिक माहौल बनाते हैं। लोगों की समस्याओं से जुड़ने की कोशिश करते हैं तथा उसके लिए आंदोलन करते हैं। तदोपरांत योग्य कर्मियों को सक्रिय संगठनात्मक कार्य में लगाते हैं एवं योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ते हुए हिंसात्मक मंसूबों को अंजाम देते हैं, जिससे एक भय एवं दहशत का वातावरण पैदा होता है और अनेकानेक लोगों को जबरन नक्सलियों द्वारा अपने आंदोलन में शामिल कर लिया जाता है। राजनैतिक एवं संगठनात्मक पहलुओं को मजबूत कर क्रमशः सुरक्षा बलों के विरुद्ध छापामार युद्ध लड़ा जाता है।

छापामार युद्ध में लोगों को समर्थन या 'जबरन' समर्थन हासिल करने के अलावा अनेक भौगोलिक, सामाजिक स्थानीय, राजनैतिक एवं भू–संरचना से जुड़े तत्वों की भी अहम भूमिका होती है। बस्तर क्षेत्र में नक्सलियों द्वारा इन परिस्थितियों का अपने तथाकथित क्रांतिकारी संघर्ष के लिए गुणात्मक उपयोग किया है। नक्सलियों के Compact Red Zone (रेड कॉरिडोर) में छत्तीसगढ़ की खासकर अबुजमाड क्षेत्र का सामरिक महत्व है। अतः इस क्षेत्र में सुरक्षा बलों के साथ होने वाली किसी भी मुठभेड़ में बल की हानि नक्सलियों के इरादों को मजबूत करती है। अतएव छत्तीसगढ़ में सुरक्षा बलों द्वारा चलाए जा रहे अभियानों में गुणात्मक बदलाव की आवश्यकता है जो नक्सलवादियों को समर्पण रूप से खत्म करें तथा सामरिक तौर पर उनके सैन्य शक्ति का विनाश करे। साथ ही साथ विकास के कार्यों में समन्वय स्थापित कर क्षेत्र के आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान के लिए सकारात्मक भूमिका निभाए।

छत्तीसगढ़ राज्य में अब तक के नक्सल संबंधित की गई घटनाओं का वर्षवार ब्यौरे निम्न हैं :–

वर्ष	2004	2005	2006	2007	2008	2009	2010
घटनाओं की संख्या	352	385	715	582	363	529	625
सुरक्षाकर्मियों की हत्या	08	47	84	198	52	58	132
अन्य नागरिकों की हत्या	75	121	304	171	95	101	152
मारे गए नक्सलियों की सं	15	32	74	66	45	113	79

राज्य में हो रही घटनाओं की विवेचना करने से नक्सलियों की रणनीतियों का स्पष्ट पता चलता है। ये लोग शासन के हरेक पहलुओं जिनसे इनके कार्यक्षेत्र में प्रभाव पड़ता है, का अध्ययन करते हैं एवं उसके अनुरूप ही स्थानीय लोगों को भड़काते हैं। ये सुरक्षा बलों की युद्ध कला एवं कार्यनीति की समग्रता से विवेचना कर अपनी युद्ध नीति को कार्यान्वित करते हैं। फलतः जब I.E.D. के नुक्सानों से बचकर सुरक्षा बलों ने जंगल एवं पहाड़ियों में पैदल चलना शुरू किया तो पुनः नक्सलियों ने घात लगाकर स्वचालित हथियारों के इस्तेमाल से नुक्सान पहुंचाने की रणनीति बनाई। I.E.D. के प्रभावी इस्तेमाल द्वारा नक्सलियों ने पिछले कुछ महीनों में सुरक्षा बलों के परिचालन को धीमा कर दिया है क्योंकि कहीं भी मूवमेंट करने के लिए गाड़ियों का इस्तेमाल न के बराबर किया जाता है। इसके लिए बल के पास पर्याप्त संख्या में एंटी लैंड माइन गाड़ियों की जरूरत पड़ेगी। इन परिचालनिक आवश्यकताओं ने सुरक्षा बलों के रणनीति के प्रभावशाली होने के लिए भौगोलिक अंकुश लगा दिया। इन क्षेत्रों में विस्फोटकों की बहुतायत ने यह आवश्यक कर दिया है कि बल के कार्मिक I.E.D. के खतरों का सामना करने के लिए पूर्ण रूप से प्रशिक्षित हों तभी उनकी तैनाती हो।

हाल ही में छत्तीसगढ़ में नक्सलियों से जब्त साहित्यों के विवेचना से यह निष्कर्ष निकलता है कि वे लोग सुरक्षा बलों द्वारा समन्वित संयुक्त अभियानों एवं संगठित सूचनातंत्र द्वारा सूचनाओं के आदान–प्रदान से खासे चिंतित हैं एवं अपने कैडर को सावधानियां बरतने को कह रहे हैं। सुरक्षा बलों के विशेष प्रशिक्षित दस्तों द्वारा

अभियान, (केरिपुबल की कोबरा बटालियन) टैक्टीकल संचालन एवं सीमावर्ती क्षेत्रों में समन्वय से नक्सलियों की युद्ध नीति प्रभावित हो रही हैं और वे इसका समाधान ढूंढ़ने का प्रयास कर रहे हैं। हालांकि उपर्युक्त वर्णित कदमों से सुरक्षा बलों को काफी फायदा होता है लेकिन सीमावर्ती क्षेत्रों में समन्वय एवं विशेष प्रशिक्षण की कमी ही नक्सलियों के विरुद्ध अभियान की सबसे बड़ी चुनौती है।

अगर छत्तीसगढ़ में नक्सलियों के विरुद्ध संघर्षरत सुरक्षा बलों के समक्ष चुनौतियों की बात करे तो आसूचना का अभाव ही सबसे बड़ी चुनौती है। नक्सलियों ने गुरिल्ला युद्ध पद्धति अपनाई है तथा ऐसे इलाकों को चुना जहां पर बिना एक्सपोज हुए आसूचना एकत्र करना बहुत ही कठिन है। जंगलों के बीच गांव के पास घात लगाना एवं पहाड़ों पर पनाह लेने के कारण सुरक्षा बलों को लगातार छापा मारते रहने पर भी पर्याप्त सफलता नहीं मिलती फिर नक्सलियों द्वारा ग्रामीणों को डरा–धमकाकर बड़े क्षेत्रों में प्रभाव स्थापित किया जाता है। सुरक्षा बलों के जिम्मेवारी का इलाका बहुत बड़ा होता है जिससे परिचालनिक प्रभाव में कमी होती है। नक्सली इसी का फायदा उठाते हैं। ऐसी परिस्थिति में सटीक सूचनाओं के आधार पर नक्सलियों की स्थिति एवं संकलन के बारे में जानकारी इकट्ठा करना नितांत आवश्यक है। इसके लिए उपयुक्त रणनीति सिर्फ सुरक्षा बलों द्वारा अपने ही सूचनातंत्र को मजबूत करने से नहीं होगी बल्कि नक्सलियों के सूचनातंत्र को तोड़ने की भी आवश्यकता है। नक्सली संघम सदस्यों, ग्रामीणों एवं अपने दस्तों के सदस्यों द्वारा सुरक्षा बलों के बारे में जानकारी इकट्ठा कर लेते हैं। हालांकि यह तंत्र असंगठित है लेकिन उनके अनुसार स्वतः स्फूर्तता से भरे पड़े हैं परंतु जन अदालतों द्वारा जिस प्रकार के भय का माहौल बनाया गया है इसके कारण यह सूचनातंत्र असंगठित होने के बावजूद कमजोर नहीं है।

नक्सलियों द्वारा बल के विरुद्ध अभियान करने से पहले जगह की रेकी की जाती है एवं नक्शा एवं रिपोर्ट तैयार की जाती है। इसके उपरांत बल की गतिविधियों संख्या, हथियार इत्यादि के बारे में अपने सक्रिय कैडरों द्वारा पता लगाते हैं। सुरक्षा बलों को सक्रिय आसूचना तंत्र से ग्रामीणों एवं नक्सलियों के गुप्तचरों के जाल से महत्वपूर्ण सूचनाओं को नक्सलियों के तरफ प्रवाह को रोकना होगा। आसूचना

तंत्र को विकसित एवं मजबूत करना, नक्सलियों की विरूद्ध अभियानों की सबसे प्राथमिक आवश्यकता है। इसके लिए स्थानीय सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुसार राज्य पुलिस के आसूचना तंत्र को फौरी तौर पर संगठित कर इसको प्रभावी बनाने की पहल आवश्यक है।

आसूचना सुरक्षा बलों को सटीक परिचालनिक रणनीति के कार्यान्वन में मदद पहुंचाती है। इसके बाद आवश्यकता होती है प्रशिक्षित रणबांकुरों की जो नक्सलियों की सैन्य योजनाओं को विफल कर दें। नक्सलियों द्वारा जंगल में छापामार युद्ध से लड़ने के लिए विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है जो सामान्य तौर पर राज्य पुलिस के कर्मियों को नहीं दी जाती है तथा प्रशिक्षित अर्धसैनिक बलों के लिए भी नक्सलियों से युद्ध की तैयारी नाकाफी सिद्ध रही है। अतः पुलिस एवं अर्धसैनिक कर्मियों को प्रशिक्षित करने की विशेष आवश्यकता है। नक्सलियों द्वारा चलायमान युद्ध कौशल में अपने को परिवर्तित करने का निश्चय उनके बढ़ते हौसले एवं विश्वास को दर्शाता है। चलायमान या छापामारी युद्ध को विफल करने के संगठित एवं प्रशिक्षित पुलिसकर्मियों द्वारा ही किया जा सकता है। हाल के दिनों में केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल के ''कोबरा बल'' के विशेष दस्तों द्वारा कार्रवाइयों में सफलता इस बात का परिचायक है। नक्सल विरोधी अभियान हेतु कार्मिकों में प्रशिक्षण हेतु केंद्रीय सरकार द्वारा केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की कमांड में नए प्रशिक्षण स्कूल खोलना एक अच्छा कदम है।

जनता एवं जनमिलिशिया के सक्रिय भागीदारी के बगैर नक्सलियों द्वारा अपना आंदोलन नहीं चलाया जा सकता है। इसके लिए वे सरकार के खिलाफ जनता में दुष्प्रचार कर आक्रोश पैदा करते हैं। वे जनता के पिछड़े वर्ग के लोगों को पूरा महत्व दे कर उनके सशक्तिकरण की बात करते हैं। जनमिलिशिया को संगठित करते हैं और प्रशिक्षण कैंप चलाते हैं तथाकथित तौर पर वे इस मासूम जनताओं को सरकारी दमनकारी नीतियों से बचाने की बात करते हैं। नक्सली जनमिलिशिया द्वारा सुरक्षा बलों के विरुद्ध अभियानों में आसूचना एकत्रित करवाने, अभियान में शामिल होने के अलावा बल को हैरान–परेशान करनेवाली अनेक गतिविधियों को अंजाम दिलवाते हैं।

गौरतलब यह है कि इन दुष्प्रचारों से ये लोगों को फुसला लेने में सफल होते है या 'जन अदालतों' द्वारा लोगों को प्रताड़ित कर भयभीत करते हैं तथा उन्हें अपने अभियान में शामिल होने के लिए विवश करते हैं। इन दुष्प्रचारों के विरुद्ध सरकारी तंत्र एवं प्रचार तंत्र को सक्रिय होने की आवश्यकता है। नक्सलियों के असली चेहरों को बेनकाब करना तथा लोगों के बीच यह जागरूकता पैदा करनी होगी कि इन लोगों का अंतिम मकसद अपनी राजनितिक आकांक्षाएं पूरी करनी है न कि किसी के राजनैतिक और समाजिक उत्थान के लिए कोई काम करना। लोगों को बताना होगा कि इनके प्रभाववाले इलाके में विकास का काम इन्होंने रोक रखा है, क्योंकि ये काम करनेवालों से चंदा वसूलते हैं और नाहक ही परेशान करते हैं तथा इन क्षेत्रों में सरकारी कर्मचारी, पुलिसकर्मियों इत्यादि को उनके द्वारा जनता के लिए किए गए कार्यों में बाधा पहुंचाने के उद्देश्य से हत्या कर देते हैं। नक्सलियों द्वारा बार–बार बिजली व्यवस्था को बाधित करना, बंद का आह्वान करना, रेल को रोकना एवं मोबाइल टावर को उड़ाना इत्यादि विकास विरोधी कार्य जनता को किस प्रकार वहां के जनता को लाभ पहुंचाएंगे? नक्सली इस तरह के जन विरोधी कार्य अपने स्वार्थ के लिए करते तथा दोष सरकार के ऊपर मढ़ देते हैं। सरकार एवं सुरक्षा बलों के समक्ष जनता को जागरूक बनाकर नक्सल विरोधी अभियान में शामिल करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य तो है लेकिन सफलता के लिए बहुत ही आवश्यक है।

नक्सलियों के युद्ध नीति में विस्फोटकों का खूब इस्तेमाल होता है। अतः विस्फोटकों की सही सुरक्षा एवं इसे गलत हाथों में जाने से रोकने हेतु प्रभावी कदम उठाना अति आवश्यक है। छत्तीसगढ़ में नक्सलियों के माइन प्रूफ गाड़ियों को भी विस्फोटकों से उड़ा सुरक्षाबलों को भी नुकसान पहुंचाया है। उनसे जब्त साहित्य से यह पता चलता है कि सही तकनीक अपनाते हुए माइन प्रूफ गाड़ियों को उड़ाकर वे सुरक्षा बलों द्वारा उनके क्षेत्रों में निडर होकर प्रवेश करते जवानों को रोकना चाहते हैं। उनका विचार है कि ऐसी गाड़ी में अक्सर ऑफिसर चलते हैं। अतः ऐसे काफिले पर हमला करने से अगर अधिकारी सुरक्षित रहते एवं जवान उनके निशाने बनें तो जवानों और अधिकारियों के बीच एक अंतर विरोध पैदा होगा। हालांकि उनके

ऐसे किसी भी सोच का बल के जवानों एवं अधिकारियों के बीच के संबंधों पर प्रभाव नहीं डाल सकता लेकिन माइन प्रूफ गाड़ियों को असुरक्षा के घेरे में ले लेने से बल की मारक क्षमता एवं संचलन में अवश्य कठिनाइयां होंगी। अतः इसके मूल में विस्फोटकों के गलत हाथों में जाने से रोकने का सफल प्रयास अति आवश्यक है।

नक्सलियों ने लैंड प्रूफ गाड़ियों के अलावा 2008 के उत्तरार्द्ध में ही 41वीं वाहिनी एवं 43वीं वाहिनी के गाड़ी को विस्फोट से उड़ाकर अपनी नृशंसता एवं हिंसक राणनीति को पुनः दोहराया है। गाड़ियों को विस्फोट करने के अलावा प्रेशर बम एवं अंबुश लगाने में भी ये विस्फोटकों का भरपूर इस्तेमाल कर रहे हैं। अतः बम निरोधक दस्ता का सुरक्षा बलों की वाहिनी के साथ संवेदनशील इलाकों में परिचालन के लिए होना जरूरी है। बमों को पहचानने में Sniffer Dogs की तैनाती एक कारगर नीति साबित हो सकती है।

सीमावर्ती क्षेत्रों में राज्यों द्वारा अपने–अपने क्षेत्रों में ही नक्सल विरोधी जिम्मेवारी की प्राथमिकता के कारण नक्सली अपनी गतिविधियों को एक राज्य में योजना बनाकर दूसरे राज्य में वारदात करते हैं तथा कहीं अन्य जगह पनाह ले लेते हैं। खासकर झारखंड से सटे छत्तीसगढ़ के सरगुजा क्षेत्र में नक्सली समस्या का मूल कारण इसका सीमावर्ती क्षेत्र होना है अन्यथा सुरक्षाबलों की प्रभावी कार्रवाई से उनका उन्मूलन संभव है। इस क्षेत्र के स्थानीय लोगों का नक्सलियों को समर्थन प्राप्त नहीं है अतः केंद्रीयकृत संयुक्त टास्क फोर्स या नियमित परिचालनिक समन्वय की नीति नक्सली विरोधी अभियानों के लिए सफल साबित होगी। हाल के दिनों में 4 सितंबर, 2008 को चुनचुना–पुंदाग में सरगुजा क्षेत्र में पहली बड़ी घटना को अंजाम देते हुए नक्सलियों ने केरिपुबल की टुकड़ी पर हमला किया जिसमें तीन कार्मिक शहीद हो गए एवं पांच घायल हुए। कुछ दिनों बाद ही पुनः राज्य पुलिस के महानिरीक्षक पर घात लगाकर हमला किया तथा उन्हें घायल कर दिया।

नक्सलियों द्वारा लगातार वारदात करने एवं सुरक्षा बलों के लोगों के हताहत होने के कारण छत्तीसगढ़ के दण्डकारण्य में नक्सली समझते हैं कि उनका एकछत्र प्रभाव/राज है। 29 अगस्त से 22 अक्टूबर, के समय सिर्फ केरिपुबल के खिलाफ ही चार बड़ी घटनाओं

को अंजाम दिया जिसमें लगभग 25 कार्मिक शहीद हो गए। इन घटनाओं से निःसंदेह नक्सलियों के एक 'अपराजेय' की छवि बनती है। लेकिन अगर समुचित बलों की उपस्थिति रहे एवं प्रभावी परिचालनों का संचालन किया जाए तो स्थिति कुछ अलग ही रहती है। इसी नवंबर में तमाम आशंकाओं के बावजूद राज्य विधानसभा के चुनाव में किसी प्रकार की कोई बड़ी घटना नहीं हुई। बाद में प्राप्त आसूचनाओं से भी स्पष्ट होता है कि नक्सलियों द्वारा हर जगह तमाम तैयारियों एवं कोशिशों के बावजूद सुरक्षा बलों की तैनाती ने कुछ नहीं होने दिया।

प्रभावी अभियान–संचालन एवं तैनाती से सुरक्षाबल बहुत हद तक नक्सली हिंसा पर काबू पा सकते हैं। हालांकि नक्सलवाद के खात्मे के लिए क्षेत्र का समग्र विकास, भू–सुधार नीति एवं राजनैतिक निर्णयों की आवश्यकता है। लेकिन अगर हम सुरक्षाबलों की भूमिका की बात करें तो उनके लिए एक प्रभावी और प्रेरणादायक नेतृत्व एवं नीति की आवश्यकता है। प्रायः नेतृत्व आक्रमक परिचालनों से बचना चाहता है एवं नई परिचालनिक पहल की कमी है। कर्मियों में लगातार एक परिचालनिक क्षेत्र से दूसरे परिचालनिक क्षेत्रों में पदस्थापना होते रहने से जोश की कमी है जो प्रायः निर्णायक तत्त्व होता है। इस क्षेत्र मे तैनाती पर कोई विशेष प्रोत्साहन भी नहीं दिया जा रहा है, न ही कार्मिकों को छत्तीसगढ़ पदस्थापना के बाद किसी प्रकार का लाभ उत्तरोत्तर पदस्थापना इत्यादि में दिया जा रहा है। जवानों एवं अधिकारियों के मनोबल को ऊंचा रखने के लिए सुरक्षाबलों के कार्मिक प्रबंधकों की भी महती भूमिका है जिसे संगठन को जल्द ही आत्मसात करने की जरूरत है। नक्सल विरोधी अभियान के लिए यह प्रेरणादायक सिद्ध होगी और प्रेरणा नए साहस का संचार करेगी।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि नक्सलियों द्वारा घृणित हिंसा के तांडव के कारण ''धान का कटोरा'' कहे जाने वाला छत्तीसगढ़ आज ''बारूद का कटोरा'' कहा जाने लगा है, जो बस्तर ''दशहरा'' के उत्सव को मनाने के लिए प्रसिद्ध था आज दहशत में है। बस्तर कला, जंगल एवं आदिवासियों की संस्कृति के सौंदर्य से ज्यादा ''लाल सलाम'' के राजनैतिक दुष्प्रचार एवं जनविरोधी कार्यों के लिए चर्चा में है। लेकिन यहां के स्थानीय लोगों में नैतिक साहस एवं

संकल्प है कि वे नक्सलियों का उन्मूलन कर सकते हैं। सलवा जुडूम आंदोलन उनका ऐसा ही एक प्रयास था। इस समय सुरक्षाबलों द्वारा प्रभावी परिचालन काफी कारगर सिद्ध हो सकता है। केरिपुबल की पदस्थापना के बाद काफी मार्गों को खोला गया है तथा आर्थिक विकास की गतिविधियों के लिए सुरक्षा प्रदान कर एक नए आयाम की तरफ इस क्षेत्र की दिशा को मोड़ दिया है। सुरक्षा हेतु भी समग्र नीतियों की आवश्यकता है जैसे राज्य सरकार में आसूचना तंत्र का विकास एवं सुरक्षा बलों के साथ समन्वय, विस्फोटकों पर नियंत्रण, नक्सली दुष्प्रचार के खिलाफ जनता को जागरूक करना इत्यादि शामिल है। यह क्षेत्र अभी भी असीम संभावनाओं से भरा–पड़ा है एवं लोगों में सफलताओं को छूने की इच्छा है। सुरक्षा बल भी इस क्षेत्र की कानून व्यवस्था को चुनौती मान नक्सलियों के हिंसा पर काबू पाने को तैयार हैं। समग्र विकास, समग्र सुरक्षा एवं जागरूक जनता छत्तीसगढ़ को पुनः खोई हुई शांति, संपूर्ण सौंदर्य एवं संपन्नता के साथ लौटा सकती है।

नक्सलियों का अर्थतंत्र

नक्सलियों द्वारा अपने तथाकथित आंदोलन व क्रांतिपूर्ण गतिविधियों के समुचित संचालन के लिए एक प्रभावी और सुसंगठित अर्थतंत्र को विकसित किया गया है और सर्वाधिक प्रभावी साधन के रूप में नक्सलियों द्वारा अपने प्रभाव क्षेत्रों में हर स्तर पर धन उगाही की जाती है। एक अनुमान के अनुसार नक्सलियों द्वारा लगभग रू. 1500 करोड़ से ज्यादा की धन उगाही प्रत्येक वर्ष की जाती है। नक्सलियों के पार्टी संविधान की धारा–60 के अनुसार ''पार्टी फंड सदस्यता शुल्क, लेवी, चंदा, टैक्स तथा जुर्माने के द्वारा प्राप्त किया जाएगा।'' धारा–61 के अनुसार, ''पार्टी सदस्यों द्वारा ली जाने वाली लेवी का निर्धारण और कलेक्शन उनकी अपनी राज्य समितियों द्वारा किया जाएगा।''

नक्सली अपने प्रभाव वाले क्षेत्रों में सड़क निर्माण के ठेकेदारों, वन उत्पाद बेचने वालों के ठेकेदार, तेन्दुपत्ता, स्मगलरों तथा गैरकानूनी काम करनेवालों से 10% से 40% तक लेवी वसूल करते हैं। विकास कार्यों में लगे संगठनों से लेवी वसूलना, धन उगाही के डर से विकास

कार्यों को करने हेतु कोई ठेकेदार तैयार नहीं होता है। नक्सलियों द्वारा धन उगाही के स्रोत निम्नवत हैं :–

- सदस्यता–शुल्क।
- समर्थकों द्वारा चंदा।
- व्यापारियों तथा अधिकारियों को अगवा कर फिरौती मांगना।
- बैंकों की लूट।
- नक्सलियों द्वारा धन उगाही के लिए ड्रग्स का धंधा करने व अफीम की खेती इत्यादि की भी आसूचना है।
- गैर कानूनी उत्खनन को प्रोत्साहित करना व टैक्स वसूलना।
- प्रभावित इलाके के सदस्यों से अनाज के रूप में योगदान।
- धनी व्यापारिकों एवं धनी जमीन का इस्तेमाल कर धन उगाही।
- वन उत्पादों, खनिजों तथा सरकारी गोदामों में लूट व चोरी द्वारा धन–संग्रहण इत्यादि।

धन–उगाही की जिम्मेदारी राज्य समितियों की होती है तथा उसके लिए संगठनात्मक व्यवस्था होती है। पैसों का सही लेखा–जोखा रखा जाता है तथा केंद्रीय नेताओं की मंजूरी से कोष का प्रयोग किया जाता है। हालांकि कभी–कभी महत्वपूर्ण समिति सदस्यों द्वारा धन–उगाही के बाद पैसे को लेकर भाग जाने की खबरें भी आती है। इसलिए केंद्रीय समिति नियमित तौर पर अपने स्तर के पार्टी संगठनों के धन की रिपोर्ट तथा खर्चों का लिखित ब्यौरा लेते हैं। कैडरों को लगभग रू. 3000/– माहवार की तनख्वाह दी जाती है। कैडरों के खर्चों तथा उपयोग की जानेवाले सामानों की अधिकृत सूची होती है उसी के अनुसार उन्हें सामान दिया जाता है या खर्च करने की अनुमति होती है।

नक्सलियों द्वारा धन–उगाही के लिए अपराध करना यहां तक हत्या करना भी आम बात है। 'लेवी के लिए नक्सलियों ने 2009 में 77 वारदात मात्र झारखंड में कीं जिसमें 10 लोगों की हत्या हुई, साथ ही बिहार में 28 वारदातों में 6 लोगों की हत्या की गई। वर्ष 2009 में 'लेवी' वसूली में प्रतिरोध के कारण 116 हिंसक वारदातें हुईं तथा 17 लोगों की हत्या की गई।

गिरफ्तार नक्सलियों से पूछ–ताछ में जब्त दस्तावेजों/कंप्यूटर इत्यादि से इनके धन उगाही के नेटवक्र का खुलासा होता है। केंद्रीय

समिति के सदस्य मिसिर मिश्रा के दस्तावेजों से पता चलता है कि माओवादियों ने 2007 में रू. 1000 करोड़ वसूलने का लक्ष्य राज्य समितियों के समक्ष रखा था तथा 2008 में यह लक्ष्य रू. 1125 करोड़ का था। पार्टी महासचिव गणपति ने 2007 में लगभग 285 करोड़ धन की उगाही की। यह भी कहा जाता है कि ड्रग्स की खेती से लगभग उनकी कुल आय का 40 प्रतिशत धन आता है। बहरहाल, इन आंकलनों का आधार नक्सलियों के गिरफतारी के बाद पूछ–ताछ एवं जब्त दस्तावेज हैं। सत्य ये है कि धन की उगाही रू. 1500–2000 करोड़ तक होती है इसके अलावा भी व्यक्तिगत तौर पर कई नक्सली नेता अपने क्षेत्रों में धन उगाही में लगे हैं तथा असुरक्षित माहौल का फायदा उठा रहे है। नक्सलियों में ''लेवी'' इकट्ठा करने तथा उसकी रसीद दिए जाने का प्रमाण भी पुलिस के हाथ लगा है।

1.	कच्ची सड़क	10 प्रतिशत
2.	प्रखंड से ग्राम विकास के लिए मिला कच्चा सड़क	07 प्रतिशत
3.	पुल (छोटा हो या बड़ा)	05 प्रतिशत
4.	पुलिया व छिलका	05 प्रतिशत
5.	बड़ा डैम–चैकडैम व नहर	05 प्रतिशत

नोटः सिंचाई परियोजनाओं में आवश्यकतानुसार लचीलापन बरता जा सकता है।

6.	बड़ा भवन	07 प्रतिशत
7.	सामुदायिक भवन, आंगनबाड़ी भवन	07 प्रतिशत
8.	रेलवे ट्रेक बिछाने व मरम्मत करने	05 प्रतिशत
9.	रेलवे में नीलामी	10 प्रतिशत
10.	मुख्य सड़क से जोड़ने वाला पी.सी.सी. सड़क	07 प्रतिशत
11.	क्रेंसर (मैनुअल) –	8000 रूपया सालाना
12.	क्रेंसर (मैकेमांईन्ड) –	16000 रूपया सालाना

नोटः ईंट भट्ठा (चिमनी) – एक चिमनी पर 15,000 रूपया सालाना बरता जा सकता है।

13.	बालू घाट पर – बालू निकलने पर तथा लीज कितने में लिया है उसके आधार पर लिया जाएगा।	

14.	पहाड़लीज(1KMX1KM)	100000 रूपया सलाना
15.	पेट्रोल पम्प	25000 रूपया सलाना
16.	बॉक्साईट माईंस	
(क)	बड़ा पूंजीपति	10 रूपया प्रतिटन
(ख)	मंझोला पूंजीपति	8 रूपया प्रतिटन
(ग)	छोटा पूंजीपति	6 रूपया प्रतिटन

नोटः कोयला व लोहा खदान में जैसे तय है वैसे ही चलेगा और अध्ययन के बाद परिवर्तन होगा।

17.	कोयला साइडिंग	70000 प्रतिमाह
18.	कोयला का लोकलसेल	12 रूपया प्रतिटन
19.	जी.टी. रोड	2 प्रतिशत

नक्सलियों का खर्च हथियारों की खरीदारी में तथा सैन्य साजो सामानों की खरीद व कैडरों को वेतन देने में होता है। पार्टी साहित्य तथा प्रचार के अन्य साधनों व अन्य क्षेत्रों में प्रभाव बढ़ाने के लिए होने वाले क्रियाकलापों के लिए भी पार्टी प्रचुर मात्रा में खर्च करती है। कैडर के इलाज तथा मौत के बाद संबंधित परिवारों को सहयोग राशि इत्यादि का खर्च भी पार्टी कोष से ही किया जाता है।

नक्सलियों से जब्त दस्तावेजों एवं सदस्यों के खुलासे से स्पष्ट होता है कि इस संबंध में स्पष्ट या किस प्रकार के कार्यों में लगे व्यक्ति को निर्देश दिए जाते हैं कि कितना प्रतिशत लेवी लेना है निम्नलिखित सारणी इस संबंध में संकेत उपलब्ध कराती है :–

क्र. सं.	कार्य जिससे 'लेवी' वसूली जाती है	दर (प्रतिशत में)
1.	पक्के सड़क का निर्माण	10%
2.	कच्चे सड़क का निर्माण	10%
3.	गांवों के विकास के लिए सड़क निमार्ण	07%
4.	पुल का निर्माण	05%
5.	पुलिया का निर्माण	05%
6.	बड़े डैम, चेक डैम तथा नहरों का निर्माण	05% (लचीला दर)
7.	भवनों का निर्माण	07%

8.	कम्युनिटी सेंटर तथा आंगनवाड़ी भवनों का निर्माण	07%
9.	रेलवे ट्रेक का निर्माण एवं रिपेयर	05%
10.	रेलवे की नीलामी	10%
11.	बड़े सड़क निर्माण के बड़े प्रोजेक्ट	10%
12.	क्रशर (मैनुअल)	रू.8,000/–प्रत्येक वर्ष
13.	क्रशर (मैकेनाईज्ड)	रू.16,000/–प्रत्येक वर्ष
14.	ईंट की भट्टी (प्रत्येक चिमनी)	रू.15,000/–(लचीला)
15.	पहाड़ी इलाका का लीज (1कि.मी.x1किमी.)	रू.1,00,000/– प्रत्येक वर्ष
16.	पेट्रोल पम्प	रू.25,000/–प्रत्येक वर्ष
17.	बॉक्साईट माइन्स	
	बड़े व्यापारी	रू.10/–प्रत्येक टन
	मध्यम व्यापारी	रू.8/– प्रत्येक टन
	छोटे व्यापारी	रू.6/– प्रत्येक टन
18.	कोयला खनन	रू.70,000/– प्रत्येक टन
19.	बड़े स्तर पर कोयले का खनन	रू. 12/– प्रत्येक टन
20.	जी.टी.रोड	02%

एक अन्य दस्तावेज से पता चलता है कि 2007 में केंद्रीय समिति का सालाना बजट 160 करोड़ रूपये है। लेकिन धन उगाही की रकम का आंकलन 2007 में रू. 1000 करोड़ के लगभग किया गया। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि शायद सिर्फ केंद्रीय समिति के पास निचले स्तर के खर्चों के बाद इतनी धन राशि पहुंची। अन्य दस्तावेजों से पता चलता है कि धीरे–धीरे केंद्रीय समिति धन उगाही एवं खर्चों पर नियंत्रण बढ़ा रही है। निचले स्तर के संगठनों को सिर्फ आवश्यक खर्च हेतु धन रखने की इजाजत है तथा शेष वे ऊपर के पार्टी स्तर को स्थानांतरित करते हैं। कुछ हालातों में आपातकालीन जरूरतों हेतु 30 प्रतिशत रिजर्व फंड भी निचले स्तर पर इकाइयों को दिया जाता है तथा एक साल तक का रिजर्व फंड भी रखने की अनुमति दी जाती है। इसके अलावा बचा हुआ समस्त धन राज्य समितियां हिसाब–किताब पर केंद्रीय समिति को भेज देती है।

हथियार एवं कैडर

नक्सलियों के हथियार एवं कैडरों के बारे में अनुमान है कि संभवतः उनके पास विभिन्न प्रकार के 20,000 हथियार सशस्त्र कैडर व लगभग 25–40 हजार सक्रिय समर्थक हैं। सेंट्रल मिलिटरी कमीशन के सदस्य आशुतोष जिसे 2009 में गिरफ्तार किया गया था के अनुसार निम्नलिखित हथियार भाकपा (माओवादी) के पास है

एल.एम.जी	–	50
ऐ.के. सीरीज	–	300
इंसास राइफल	–	2000
एस.एल.आर.	–	4000
.303 राइफल	–	10000
पिस्तौल और अन्य	–	2000

लेकिन यह आंकड़ें अतिरंजित प्रतीत होते हैं क्योंकि नक्सलियों के हथियारों का सबसे बड़ा स्रोत पुलिस एवं सुरक्षा–बलों से लूटे हथियार हैं। अन्य आतंकी संगठनों से उनके द्वारा हथियारों की खरीद बहुत कम ही है। अतः यह अनुमान लगाया जाता है कि नक्सलियों के पास 4000 हथियार होंगे जिसमें उच्चस्तरीय हथियारों की संख्या आधी ही होगी। नक्सलियों की पास बहुत मात्रा में देशी हथियार ज्यादातर, विस्फोटक गैर कानूनी तरीके तथा लूट–पाट द्वारा इक्ट्ठा किया जाता है। विस्फोटकों के चोरी को रोकने के लिए सही कार्रवाई की अनुपस्थिति में नक्सलियों ने झारखंड, छत्तीसगढ़ तथा उड़ीसा में काफी मात्रा में विस्फोटक इक्ट्ठा कर रखा है तथा इनका उपयोग कर सड़कों पर सैकड़ों किलोमीटर में लैंड माइंस बिछा रखी है। गैर कानूनी खदान कार्य के लिए भी विस्फोटकों को आसानी से प्राप्त कर लिया जाता है।

संसद में केंद्रीय खदान मंत्री ने 8 मार्च 2010 को एक प्रश्न के उत्तर में सूचित किया कि 17 राज्य सरकारों ने 2006 से 2009 के बीच 1,61,040 गैर कानूनी खदान गतिविधियों का संज्ञान लिया किंतु मात्र लेखा–जोखा नहीं लिया गया। इस अवधि के दौरान एक अनुमान के अनुसार माओवादियों ने ऐसी जगहों से 54,500 किलो विस्फोटक लूटा। अप्रैल–जून 2010 में राजस्थान से 61 ट्रकों में 300 टन विस्फोटक के गायब होने की खबर मीडिया में आई वह इसके

अतिरिक्त है।

नक्सलियों द्वारा ''टैक्स'' या ''लैवी'' सिर्फ मौद्रिक स्वरूप तक ही सीमित नहीं है, अपितु उद्योगों द्वारा नक्सलियों को विस्फोटकों की आपूर्ति करने की अपुष्ट सूचनाएं है। यद्यपि Explosives Act 1884 और Explosives Rules (revise) 2008 में इस प्रकार के प्रावधान हैं कि जिस कार्य के लिए विस्फोटक लिए गए हैं उसी के लिए इसका इस्तेमाल किया जाए। लेकिन कानून का सख्ती से पालन नहीं हो रहा है। प्रशासन के अन्य विभागों के साथ–साथ पुलिस द्वारा भी इनके प्रावधानों को सख्ती से लागू कराने की इच्छा शक्ति का अभाव है।

विस्फोटकों की खरीद और आपूर्ति के लिए स्वीकृति पेट्रोलियम तथा एक्सप्लोसिव सेफ्टी ऑरगेनाइजेशन जो वाणिज्य मंत्रालय के अधीन है, द्वारा दी जाती है जबकि नक्सल समस्या से निपटने वाले गृह मंत्रालय को इसकी जानकारी नहीं होती। सुरक्षा बलों द्वारा प्रभावित क्षेत्रों में अभियानों के दौरान भारी मात्रा में विस्फोटक तथा डेटोनेटर जब्त किए जा रहे हैं, लेकिन फिर भी विस्फोटकों की मांग, आपूर्ति एवं उपयोग को नियंत्रित करने के लिए कोई भी प्रभावी प्रक्रिया नहीं है जिससे कि राष्ट्रविरोधी तत्वों को इसकी पहुंच से दूर रखा जाए।

यह विडम्बना ही है कि सुरक्षा बल लगातार भारी मात्रा में विस्फोटक बरामद कर रहे हैं फिर भी विध्वंस कम नहीं किया जा पा रहा है क्योंकि माओवादियों के पास इसकी उपलब्धता प्रचुर है। उदाहरण स्वरूप, 09 अगस्त 2010 को पुलिस ने गया जिला (बिहार) में 30 बैगों में 12,000 डेटोनेटर जब्त किए। 5 जून 2010 को सोनभद्र (उ.प्र.) से पुलिस ने 16 टन अमोनियम नाइट्रेट और विस्फोटक बनाने वाली अन्य सामग्री नवाडीह ब्लॉक, बोकारो (झारखंड) में बरामद की। दिसम्बर 2009 में बिहार पुलिस ने रोहतास जिले में छापा मारकर एक गोदाम से 40,000–45,000 डेटोनेटर, 10 क्विंटल अमोनियम नाईट्रेट, 100 जिलेटिन स्टिक तथा फ्यूज वायर बरामद किया। इसके पहले नवम्बर 2009 में बिहार एवं झारखंड पुलिस ने पटना, गया, रोहतास तथा बोकारो में छापा मार कर लगभग 100,000 किलो अमोनियम नाइट्रेट जब्त किया।

विस्फोटकों की इतनी बड़ी मात्रा में नक्सलियों के पास

उपलब्धता के कारण ही 3 मई 2011 को लोहरदग्गा जिले में 2 किलोमीटर तक सघन लैंड माईंस बिछा कर हमला किया गया। जिसमें नक्सलियों ने 11 सुरक्षाकर्मियों की हत्या कर दी थी।

महिला नक्सली –

नक्सलियों के संगठन में बड़ी संख्या में महिला कैडर, पार्टी स्तर तथा पी.एल.जी.ए. में कार्य कर रहे हैं। महिला कैडर सशस्त्र कार्रवाइयों में हिस्सा लेता है तथा इसके लिए पुरुष नक्सलियों के साथ प्रशिक्षण प्राप्त करता है। अनेक घोषित संगठनों का फोकस महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक उत्थान पर है। समाज में महिलाएं जाति व्यवस्था, सम्पति के अधिकार से वंचना तथा संस्कृति के क्षेत्र में पितृसत्ता का प्रभुत्व होने के कारण अनेक भेदभाव का शिकार होती हैं। इन्हें बराबर मजदूरी नहीं मिलती तथा यौन उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता है। नक्सलियों का विचार है, – ''महिलाएं आधे आसमान की मालकिन है तथा महिलाओं में जमे आक्रोश को क्रांति की जबर्दस्त ताकत से मुक्त किए बिना क्रांति में विजय हासिल कर पाना असंभव है।''

नक्सलियों में बढ़ते महिला कैडर की संख्या को समाज में व्यापक भेद–भाव का परिणाम माना जाता है। नक्सली सोची समझी रणनीति के तहत उन्हें अपने संगठन में लुभाने के अनेक प्रयास करते हैं और प्रत्येक बदलाव में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हैं, किन्तु सारे आदर्शों के बावजूद अनेक महिला नक्सलियों ने आत्म समर्पण या गिरफ्तार होने पर पूछ–ताछ में बताया कि उनका साथी कैडरों द्वारा शोषण किया जाता है। यौन उत्पीड़न से लेकर अन्य असमानताएं उन्हें हर स्तर पर झेलनी पड़ती हैं। नक्सलियों के साहित्य से हालांकि यह भी पता चलता है कि इस तरह की शिकायतों को केंद्रीय समिति सख्ती से निपटाया करती है।''

नक्सलवाद परिदृश्य विभिन्न राज्यों में– 2010–11

नक्सल से संबंधित हिंसक वारदातें 2006 से लगातार बढ़ रही हैं। घटनाओं में वृद्धि के साथ–साथ नक्सली वारदातों की हिंसात्मकता एवं नृशंसता में भी वृद्धि हुई है। राज्यों के आर्थिक परिदृश्य बदल रहे हैं। सुरक्षा की कमी आम जनता के मन में भय एवं आतंक का माहौल बना रही है। 2010 में 2212 नक्सल वारदातों में 1003 आदमियों की

हत्या कर दी गई जिसमें 718 सिविलियन तथा 285 सुरक्षाकर्मी थे। सुरक्षा बलों की सफलता की बात करें तो वर्ष 2009 में 219 नक्सली मारे गए तथा 1981 गिरफ्तार किए गए जबकि 2010 में 172 नक्सली मारे गए एवं 2916 गिरफ्तार किए गए। 2010 में हताहतों की संख्या में वृद्धि का कारण 06 अप्रैल, 2010 को एक नक्सल अटैक की घटना में 76 के.रि.पु.बल कर्मियों की शहादत है। पुलिसकर्मी तथा नक्सलियों की मौत का अनुपात 2005 में 1:0.60 रह गया। आंकड़ों के अनुसार पुलिस की नक्सलियों के विरुद्ध मारक क्षमता में कमी आई है।

इसके अतिरिक्त नक्सलियों के आतंक प्रसार का संकेत है कि 2010 में 75 जन अदालतों में इन्होंने 36 लोगों की हत्याएं कर दीं जबकि 2009 में 50 जन अदालत में 13 लोगों की हत्याएं कीं। 2010 में देश के महत्वपूर्ण आर्थिक ठिकानों पर आक्रमण एवं विध्वंस की घटनाएं जारी रहीं तथा ऐसी 365 वारदातें रिपोर्ट की गईं। 2009 में नक्सलियों ने 61 सशस्त्र कैम्प कैडरों के प्रशिक्षण के लिए चलाए वहीं 2010 में 94 ऐसे कैंप चलाए। 2010 में नक्सलियों ने अपनी सैन्य क्षमता को बढ़ाने के लिए अपनी संगठनात्मक शक्ति को विशेष रूप से केंद्रित किया ।

राज्यवार नक्सलवाद की समीक्षा

गंभीर नक्सल प्रभावित राज्यों में छत्तीसगढ़ सबसे ज्यादा चिंता का कारण बना रहा। देश के कुल नक्सल हिंसक वारदातें एवं हत्याओं में छत्तीसगढ में क्रमशः 28% तथा 34% रहे। झारखंड लगभग 22.6% कुल हिंसक वारदातों एवं 15.7% हत्याएं के साथ दूसरे तथा बिहार 14% तथा 10% के साथ तीसरे तथा उड़ीसा 10% वारदातों एवं 8% हत्याएं के साथ चौथे स्थान पर रहा।

राज्य	2007		2008		2009		2010	
	घटनाएं	मौत	घटनाएं	मौत	घटनाएं	मौत	घटनाएं	मौत
आंध्र प्रदेश	138	45	92	46	66	18	100	24
बिहार	135	67	164	73	232	72	307	97
छत्तीसगढ़	582	369	620	242	529	290	625	343
झारखंड	482	157	484	207	742	208	501	157
महाराष्ट्र	94	25	68	22	154	93	94	45
मध्य प्रदेश	32	6	35	26	1	.	7	1
उड़ीसा	67	17	103	101	266	67	218	79
उत्तर प्रदेश	9	3	4	.	8	2	6	1
पश्चिम बंगाल	32	6	35	26	255	158	350	256
अन्य	17	5	14	4	5	.	4	0
कुल	1565	696	1591	721	2258	908	2212	1003

छत्तीसगढ़ :–

पिछले दशक से ही छत्तीसगढ़ राज्य का दक्षिणी भाग एवं उससे सटे उडीसा, महाराष्ट्र एवं आंध्र प्रदेश का सीमांत क्षेत्र नक्सली हिंसा का केंद्र बना रहा। राज्य के 16 जिलों के 152 थानों में नक्सली वारदातों की घटनाएं घटीं जिनमें से 11 जिलों के 85 थानों में हिंसक वारदातों की रिपोर्ट हुई। 2009 में 16 जिलों के 183 थानों से नक्सली वारदात की घटनाएं हुईं जिनमें 12 जिलों के 96 थानों में नक्सली हिंसा की रिपोर्ट हुई। राज्य में वर्ष 2010 में 625 घटनाएं हुईं जिनमें 343 लोग मारे गए। वर्ष 2010–11 में घटी कुछ हिंसक घटनाओं का संक्षिप्त ब्योरा निम्नलिखित है–

- 06 अप्रैल 2010 – ताड़मेटला चितंलनार, दंतेवाड़ा छत्तीसगढ़ में नक्सलियों ने घात लगाकर के.रि.पु.बल 62 बटालियन की एक कंपनी पर हमला किया जिसमें एक राज्य पुलिसकर्मी सहित कुल 76 सुरक्षाकर्मी शहीद हुए। यह घटना युद्ध या शांति के समय में एक टुकड़ी के इतने बड़ी संख्या में हताहत होने की सबसे बड़ी घटना है।

छत्तीसगढ़ में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) का एक मात्र सक्रिय ग्रुप है। राज्य में नक्सलियों ने तथाकथित तौर पर अबुझमाड में आधार–क्षेत्र स्थापित कर लिया है। राज्य में नक्सलियों का नेटवक्र सेंट्रल रीजनल ब्यूरो (Central Regional Bureau) की कमान में आता है। दक्षिणी छत्तीसगढ़ में दण्डकारण्य स्पेशल जोन समिति (DKSZC) तथा उत्तर छत्तीसगढ़ में, बिहार–झारखण्ड नार्थ छत्तीसगढ़ स्पेशल एरिया समिति (DJNCSAC) व राज्य स्तर की इकाइयां हैं।

राज्य में नक्सली अपनी 09 कंपनियों को गठित करने का दावा

करते हैं तथा कुछ क्षेत्रों में ''जनताना सरकार'' भी स्थापित करने की बात करते हैं। राज्य में लोगों को संगठित करने हेतु मुख्य मुद्दे राजघाट आयरन माइनिंग प्रोजेक्ट– कांकेर, दिल्ली–रजहरा–राजघाट–जगदलपुर रेलवे प्रोजेक्ट, सलवा–जुडूम तथा छत्तीसगढ़ स्पेशल पब्लिक सिक्युरिटी अधिनियम 2005 रहे हैं। इसके अलावा वन उत्पाद, भू–सुधार, खनिज उत्खनन इत्यादि भी मुख्य मुद्दे हैं।

झारखंड

झारखंड नक्सल वारदातों एवं हिंसा के मामले में देश का दूसरा सबसे गंभीर प्रभावित राज्य है। 2009 में नक्सल वारदातों के मामलों मे यह सबसे ज्यादा प्रभावित था। यहां 2009 में 742 घटनाएं घटी जिसमें 157 लोगों की जान गई। राज्य के 23 जिलों के 187 थानों से नक्सल वारदातों की रिपोर्ट हुई जिसमें से 19 जिलों के 128 थानों से हिंसक वारदातों की सूचना दर्ज कराई गईं। 2009 में 24 जिलों के 222 थानों से वारदातों की खबर थी जिसमें से 21 जिलों के 134 थानो से हिंसक घटनाएं घटीं। वर्ष 2010 में कुछ गंभीर नक्सल घटनाओं का संक्षिप्त व्यौरा निम्न है :–

झारखंड राज्य में सक्रिय नक्सली संगठन

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) – CPI (Maoist)
तृतीय सम्मेलन प्रस्तुति कमेटि – TSPC
पीपुल्स लिबरेशन फ्रन्ट ऑफ इंडिया – PLFI
झारखण्ड प्रस्तुति समिति – JPC
झारखंड सशस्त्र जन मुक्ति मोर्चा – JSJMM
सशस्त्र पीपुल्स मोर्चा – SPM
झारखंड छत्तीसगढ़ सीमांत समिति – JCBSC

झारखंड़ मं भी भाकपा (माओवादी) सबसे सक्रिय है लेकिन PLFI, TSPL एंव JPC भी अनेक वारदातों में शामिल रहे हैं। CPI (माओवादी) ने 2009 में 559, PLFI ने 88 TSPL ने 49, JPC ने 23, JSJMM ने 6 तथा SPM ने 6 घटनाओं को अंजाम दिया।

झारखंड राज्य माओवादियों के पूर्वी रीजनल ब्यूरो (Eastern Regional Bureau) की कमान में है। बिहार–झारखंड, नार्थ छत्तीसगढ़ स्पेशल एरिया समिति राज्य स्तर की इकाई है। राज्य में PLGA की तीन

कम्पनियां हैं जो प्लाटूनों में विभाजित कर विभिन्न क्षेत्रों में तैनात की गई हैं। प्रथम कंपनी जिसे (Eastern Regional Bureau) कंपनी के रूप में पहचाना जाता है तथा जिसके कार्य का क्षेत्र लोहरदगा एवं लातेहर जिला है। तीसरी कंपनी का कमाण्डर कुंदन पहाड़ी है तथा यह सारंडा एवं पोराहट क्षेत्रों में सक्रिय है। प्लाटूनें कंपनियों का हिस्सा हैं तथा एक कंपनी में तीन प्लाटूनें होती हैं, जिसमें तीसरी प्लाटून अभियान किए जानेवाले क्षेत्रों की स्थानीय गुरिल्ला स्कवाड होती है। झारखंड में पी.एल.जी.ए. की क्रमशः प्लाटून संख्या– 41 गढ़वा, संख्या – 42 उत्तरी लातेहर, संख्या, 43 दक्षिणी लातेहर, संख्या –44 उत्तरी लोहरदगा, संख्या –45 गुमला, संख्या –46 सिमडेगा के क्षेत्रों में सक्रिय है।

राज्य में लोगों को नक्सली आंदोलन से जोड़ने व उनका समर्थन जुटाने हेतु कोयल–कारो प्रोजेक्ट, नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज, बेरमों कोल फील्ड, यूरेनियम कॉरपोरेशन प्रोजेक्ट तथा तेनुघाट डैम और थर्मल पावर प्रोजेक्ट इत्यादि से विस्थापन तथा जीविका जैसे मुद्दे प्रमुख रहे हैं जिनके नाम पर आंदोलन हेतु जनसमर्थन जुटाया जाता रहा है। राज्य में विकास कार्यों को आदिवासियों के हितों के विरूद्ध बताकर जन–समर्थन जुटाने का प्रयास नक्सलियों द्वारा किया जाता है।

पश्चिम बंगाल

वर्ष 2010 में पश्चिम बंगाल में नक्सलवाद की घटनाओं में बेतहाशा (Sharp increase) वृद्धि हुई। राज्य में 350 नक्सल घटनाओं में 256 लोगों की जानें गईं। इस प्रकार देश में कुल नक्सली हिंसक वारदातों को 15.8 प्रति एवं कुल नक्सली हत्याओं की 25.5 प्रति. घटनाएं पश्चिम बंगाल में हुईं। घटनाओं के साथ–साथ पश्चिम बंगाल में नक्सलियों ने अपने गढ़ मजबूत किए। कैडरों के लिए अनेक शस्त्र प्रशिक्षण केंद्र लगाए तथा धन की उगाही के लिए अनेक पूंजीपतिओं एवं संस्थानों को धमकाया। राज्य के अनेक क्षेत्रों में नक्सलियों ने खुलेआम पोस्टर चस्पां किए। पश्चिमी एवं पूर्वी मेदिनीपुर में CPI (माओवादी) ने अनेक आंदोलन छेड़ने की कोशिश की। खुले तौर पर माओवादियों का विरोध करनेवालों की हत्याएं कीं तथा मेदनीपुर के

अनेक क्षेत्रों में दहशत का माहौल बनाए रखने में कामयाब रहे। राज्य में 2011 के अप्रैल–मई में राज्य विधान सभा के चुनाव तथा वामपंथी पार्टियों एवं तृणमूल कांग्रेस की चिर प्रतिद्वंद्विता से स्थितियां और बिगड़ीं तथा राज्य की कानून व्यवस्था खराब रही।

पश्चिम बंगाल में सक्रिय नक्सली संगठन

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) – CPI(Maoist)
भारत की कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–
लेनिनवादी (महादेव मुखर्जी) – CPML(MM)
भारत की कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–
लेनिनवादी–लिबरेशन – CPML-Lib
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी–
(शांति पाल) – CPML(SP)

राज्य में सबसे प्रमुख नक्सली संगठन भाकपा (माओवादी) ही है। यह क्षेत्र उनके पूर्वी रीजनल ब्यूरो के कमान में है तथा राज्य स्तरीय इकाई पश्चिम बंगाल स्टेट समिति है। राज्य के पुरूलिया, बांकुरा, पश्चिम मेदनीपुर सबसे ज्यादा प्रभावित जिले हैं। हाल के दिनों में राज्य में नक्सली घटनाओं में काफी बढ़ोतरी हुई है।

बिहार

बिहार में नक्सलवाद की स्थितियां अनेक तथ्यों से प्रभावित होती रही हैं। राज्य में पिछले चार–पांच दशकों से भू–सुधार की कोई प्रभावी रणनीति अपनाई गई हो ऐसा जमीनी हालात से नहीं लगता। राज्य में माओवादियों का आंदोलन जाति के भेद–भाव से प्रभावित रहा है। फिर दो दशक पहले दलितों एवं पिछड़ों का राजनीतिक एवं सामाजिक सशक्तिकरण हुआ है तो वर्तमान में राज्य के देहाती एवं दूर–दराज के इलाकों में विकास की गति अपेक्षाकृत संतोषजनक है। लेकिन पिछले तीन सालों से नक्सली घटनाओं में यहां लगातार वृद्धि हो रही है। 2007 में 135 घटनाओं में 67 जानें गईं तो 2010 में 307 घटनाओं में 97 लोगों की जानें गईं।

राज्य में जाति पर आधारित उच्च जाति में रणवीर सेना इत्यादियों की भी नक्सलियों के साथ आपसी झड़पें होती रही हैं जिससे नक्सलवाद एकाधिकार के साथ फैलने में नाकाम भी रहा तथा

इसके कारण जाति आधारित हिंसक घटनाएं भी खूब घटीं। वर्ष 2010 में बिहार के चुनावों का नक्सलवादियों ने बहिष्कार किया तथा चुनाव के दौरान सुरक्षा बलों पर अनेक आक्रमण किए। राज्य के नेपाल तथा झारखंड एवं पश्चिम बंगाल से सटे सीमांत क्षेत्र में नक्सलियों का प्रभाव ज्यादा है।

बिहार में सक्रिय नक्सली संगठन

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) – CPI(M)
भारत की कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–
लेनिनवादी–लिबरेशन – CPML-Lib
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी–
न्यू डेमोक्रेसी – CPML(SP)
रेवूलेशनरी कम्युनिस्ट सेंटर – RCC
सशस्त्र पीपुल्स मोर्चा – SPM

बिहार में सबसे ज्यादा हिंसक घटनाएं भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) द्वारा की गई हैं। पार्टी ने अपनी इकाइयों को दक्षिणी बिहार तथा उत्तर प्रदेश से सटे क्षेत्रों में काफी मजबूत किया है। हालांकि विलय से पहले के माओवादी कम्युनिस्ट सेंटर ऑफ इंडिया तथा पीपुल्स वार ग्रुप की अंतर्कलह अभी भी है। CPML-Lib तथा RCC दो अन्य ग्रुप हैं जो सिवान, अरवल जिलों में सक्रिय हैं। औरंगाबाद तथा रोहतास जिलों में सक्रिय हैं।

बिहार, माकपा (माओवादी) के पूर्वी रीजनल ब्यूरो (Eastern Regional Bureau) की कमान में आता है तथा इसमें दो इकाइयां बिहार झारखंड, उत्तरी छत्तीसगढ़ स्पेशल एरिया समिति (BJNCSAC) और उत्तरांच, उत्तर प्रदेश तथा उत्तर बिहार स्पेशल एरिया समिति (USAC) है। USAC नार्थन रीजनल ब्यूरो (Northen Regional Bureau) के अधीन है।

बिहार में नक्सलियों की एक कंपनी तथा 17 प्लाटूनें सक्रिय हैं तथा लगभग 1200 हथियारबंद कैडर हैं। लोगों को संगठित करने का मुख्य मुद्दा कोशी–गंगा सिंचाई योजना, भूमि–सुधार, सरकार में भ्रष्टाचार, जेल में कैदियों के हालात तथा किसानों की समस्याएं रही हैं।

उडीसा

उड़ीसा में नक्सलवाद एक सिलसिलेवार तरीके से लगातार

अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। उड़ीसा देश में सबसे प्रभावित पांच राज्यों में से एक है। 2010 में घटनाओं की संख्या (218 घटनाएं) में 2009 की तुलना (266 घटनाओं) में कमी आई लेकिन ये घटनाएं अब ज्यादा हिंसक एवं नृशंस हो गईं। 2010 में कुल 79 लोगों की जानें गईं जबकि 2009 में कुल 67 लोगों की हत्याएं हुईं। वर्ष 2010 में नवरंगपुर बोलंगिर, बारगढ़ एवं कालाहांडी जिले माओवादियों की चपेट में आए। वर्ष 2010 में 23 जिलों के 105 थानों में नक्सली घटनाएं हुईं जिनमें से 14 जिलों के 57 थानों में ये हिंसक थे। जबकि 2009 में 19 जिलों के 94 थानों में ये हिंसक थे।

उड़ीसा में सक्रिय नक्सली संगठन

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) – CPI(M)
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी –जनशक्ति/कुर्रा राजन्ना – CPML-JSKR
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी–लिबरेशन – CPML-Lib
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी–न्यू डेमोक्रेसी – CPI-ML-ND
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी – CPML-को–ओर्डीनेशन समिति – Coordination Committee
चासी मुलिसा आदिवासी संघ – CMAS

राज्य, भाकपा (माओवादी) के सेंट्रल रीजनल ब्यूरो की कमान में है। राज्य स्तर की तीन इकाइयां –आंध्र–उड़ीसा बार्डर स्पेशल जोन समिति पश्चिम बंगाल राज्य समिति के बंगाल–झारखंड–उड़ीसा सीमा रीजनल समिति तथा उड़ीसी स्टेट ऑरगानाईजिंग समिति है। राज्य में मलकानगिरी, कोरापुट, रायगढ़, गंजाम, गजपति नक्सलवाद से गंभीर रूप से प्रभावित जिले हैं।

आंध्रप्रदेश

एक समय में नक्सलवाद से सबसे ज्यादा प्रभावित आंध्रप्रदेश में पिछले कुछ वर्षों से नक्सली वारदातों एवं हिंसा में काफी कमी आई है। 2007 में 138 घटनाएं घटीं जिनमें 67 जानें

गईं। वर्ष 2010 में 100 घटनाओं में 24 लोगों की जानें गईं। 2009 में सिर्फ 66 घटनाएं घटी तथा 18 लोगों की जानें गईं। प्रदेश में नक्सली तेलंगाना के मुद्दों पर भी राजनीतिक आंदोलनों का फायदा उठाकर हिंसक घटनाएं करने की कोशिश में लगे रहते हैं। लेकिन राज्य में ग्रे–हाउड्स एवं SIB के प्रभावी आसूचना तंत्र एवं अभियानों से नक्सलवाद पर बहुत हद तक शिकंजा कसा जा रहा है। राज्य पुलिस ने पिछले कुछ वर्षों में अनेक शीर्ष नक्सली नेताओं को गिरफ्तार/उदासीन करने में अहम भूमिका निभाई है जिससे नक्सलियों की शक्ति में काफी कमी हुई है।

आंध्र प्रदेश में सक्रिय नक्सली संगठन

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) – CPI(Maoist)
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–प्रजा प्रतिघटना – CPML-PRG
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी–प्रतिघटना – CPML-PRG
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी–न्यू डेमोक्रेसी – CPI-ML-ND
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी–लिबरेशन – CPML-Lib
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी–जनशक्ति/कुर्रा राजन्ना – CPML-JSKR
कम्युनिस्ट पार्टी युनाइटेट स्टेटस ऑफ इंडिया/बहुजन कम्युनिस्ट पार्टी – CPUSBCP

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) इन सभी संगठनों में सबसे ज्यादा सक्रिय है। आंध्र प्रदेश केंद्रीय रीजनल ब्यूरो द्वारा संचालित क्षेत्र है। पार्टी राज्य एवं इसके नजदीकी क्षेत्रों में तीन मुख्य सांगठनिक क्षेत्रों में बंटा है।

आंध्र प्रदेश स्टेट समिति (APSC), उत्तरी तेलंगाना स्पेशल जोन (NTSZC) समिति और आंध्र उड़ीसा बार्डर स्पेशल जोन समिति (APSC)। हाल के वर्षों में आंध्र प्रदेश स्टेट समिति में कैड़रों के संख्या में कमी के कारण इसे स्टेट समिति से घटाकर क्षेत्रीय समिति (रीजनल समिति) का दर्जा दे दिये गया है तथा इसे आंध्र–उड़ीसा बार्डर

स्पेशल जोन समिति के साथ जोड़ दिया गया है।

आंध्र प्रदेश में NTSZC के अर्न्तगत आदिलाबाद, करीमनगर, खम्मम और वारंगल तथा AOBSZC के अन्तर्गत विशाखापत्तनम, पूर्वी गोदावरी तथा विजयनगरम् जिले में नक्सली काफी सक्रिय हैं। अक्सर दण्डाकारण्य क्षेत्र में अपने अभियानों को गतिमान रखने के लिए इस क्षेत्र से कैडरों को भेजा जाता है। महाराष्ट्र के गढ़चिरौली जिलों से सटे महादेवपुर वन क्षेत्र जो करीमनगर जिले में है में नक्सली काफी सक्रिय है। नक्सलवादी जंगलों में अपनी खोई हुई शक्ति को दुबारा पाने हेतु ''नल्लामाला फारेस्ट डिवीजन समिति'' के अधीन काफी सक्रिय है तथा कैडरों के भर्ती पर जोर देते रहे हैं।

आंध्र प्रदेश इकाई रीजनल कमांड की सैन्य शक्ति के अधीन कार्रवाई करती है। इस कमान के पास एक बटालियन, 09 कंपनी तथा 40 प्लाटून हैं। 4–5 सक्रिय प्लाटून हैं। इस क्षेत्र में हथियारों की संख्या 1200 आंकी जाती है।

आंध्र प्रदेश में नक्सलियों द्वारा लोगों को आंदोलन के लिए लामबंद करने हेतु निम्नलिखित मुद्दों का उपयोग किया जाता रहा है।

पीलयारम सिंचाई योजना, पश्चिमी गोदावरी जिला।
ओपन कास्ट प्रोजेक्ट माइंस एवं सिंगरेली कोलियरी कंपनी में मजदूरों के अधिकार।
तेलंगाना राज्य की मांग।
भूमि सुधार (भू–पोरतम)।
बाक्साइट माइनिंग– (विशाखापत्तनम् जिला)
विशेष आर्थिक क्षेत्र की नीति।
रचकोंडा फील्ड़ रेंज की स्थापना से विस्थापन– (नालगोंडा जिला)

महाराष्ट्र

महाराष्ट्र के गढ़चिरौली तथा गोदिंया जिले के कुछ हिस्सों में नक्सलियों के प्रभाव में वृद्धि होने की लगातार खबरें आ रही हैं। खासकर छत्तीसगढ़ राज्य से सटे क्षेत्रों में स्थिति खराब है। नक्सलियों ने राज्य में अनेक बार कैड़रों की भर्ती के लिए विशेष प्रयास किए। वर्ष

2010 में राज्य में 94 नक्सली घटनाओं में 45 लोगों की जानें गईं। वर्ष 2009 में जबकि 154 घटनाएं घटी थी तथा 93 लोगों की जानें गईं।

महाराष्ट्र में सक्रिय नक्सली संगठन

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) – CPI(Maoist)
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–प्रजा प्रतिघटना – CPML-PRG
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी लिबरेशन – CPML-Lb
कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी–लेनिनवादी – CPML

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) इन सभी संगठनों में सबसे ज्यादा सक्रिय है। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) द्वारा महाराष्ट्र स्टेट समिति (MSC) और दण्डकारण्य स्पेशल जोन समिति (DKSZC) संचालित है, जो दक्षिणी गढ़चिरौली जिले में सक्रिय हैं। नक्सल विदर्भ के इलाके में तीसरा मोर्चा खड़ा करना चाहते थे, परन्तु कुछ कमियों के कारण इस योजना में बढ़ोत्तरी नहीं हो सकी। विदर्भ इलाके में गोंदिया, गढ़चिरौली, चन्द्रपुर, यवतमल, वासिम, बुलड़ाना अकोला, अमरावती, वर्धा, नागपुर एवं भण्डारा जिला आते हैं। महाराष्ट्र स्टेट समिति दो डिवीजनल समिति में बंटी हुई है। पहली, फारेस्ट जिसमें उत्तरी गढ़चिरौली, गोंदिया, बालाघाट हैं, दूसरी, उरेगन डिवीजनल समिति है जिसमें उत्तरी चन्द्रपुर, सूरत और मुम्बई के इलाके हैं। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के इलाके हैं जो मालाजखण्ड, दारेकासा, देवरी, क्रोची, एवं कुरखेड़ा हैं।

माओवादियों के सात स्थानीय संगठनात्मक स्क्वाड एवं एक स्थानीय गुरिल्ला स्क्वाड है। इनके 300 सशस्त्र कैडर हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार एक और संगठन सीमांत क्षेत्र में सक्रिय है, जो दण्डकारण्य स्पेशल जोन समिति (DKSZC) के साथ उत्तरी गढ़चिरौली डिवीजनल समिति के रूप में कार्य कर रही है।

इस क्षेत्र में माओवादियों की गतिविधियां लगातार बढ़ी हैं, जो 2008 में 118 से बढ़कर 2009 में 323 हो गई। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) ने वर्ष 2009 में गढ़चिरौली जिले के 14 थानार्न्तगत एंव गोंदिया जिले के 4 थानार्न्तगत 153 घटनाओं को अंजाम दिया, जबकि वर्ष 2008 में इन जिलों के 12 थानार्न्तगत 68 घटनाएं ही घटी

थीं। माओवादियों की शक्ति 2008 की अपेक्षा 2009 में 10 गुना ज्यादा बढ़ गई। आम नागरिकों को मारने की क्षमता में 141 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वर्ष 2009 में 41 आम नागरिक एवं 52 सुरक्षाकर्मी मारे गए थे जबकि 2008 में 17 आम नागरिक एवं 5 सुरक्षाकर्मी मारे गए। आम नागरिक में 85 प्रतिशत पुलिस के गुप्तचर होने के संदेह में मारे गए। सबसे बड़ी घटना 2009 में पुराडा–थाना, गढ़चिरौली–जिले में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी माओवादी द्वारा अम्बुश के रूप में हुई, जिसमें 15 सुरक्षाकर्मी शहीद हुए एवं 16 हथियार लूट लिए गए। इसी तरह धनोर थानार्न्तगत 16 सुरक्षाकर्मी मारे गए एवं 18 हथियार लूट लिए गए तथा भैरमगढ़ थानार्न्तगत 17 पुलिस कर्मी शहीद हो गए एवं 19 हथियार लूट लिए गए।

सुरक्षाकर्मियों के जाल को तोड़ने में कामयाबी नहीं मिली, जबकि अपेक्षाकृत रूप से माओवादी ज्यादा होते गए। जहां 2008 की अपेक्षा 2009 में सुरक्षाकर्मियों ने 55 प्रतिशत सफलता प्राप्त की वहीं सन 2009 में सुरक्षाबलों ने 26 आक्रमण किए, जिसमें मात्र 4 माओवादी मारे गए जबकि 2008 में 24 आक्रमणों में 9 माओवादी मारे गए थे।

नक्सलवाद–आंदोलन से समस्या तक

अपने प्रादुर्भाव–काल से ही 'नक्सलवाद' ने भारतीय समाज विशेषकर बौद्धिक–मानस के समक्ष यह प्रश्न उपस्थित किया है कि इस विचाराधारा में सन्निहत आदर्शों, सिद्धांतों और अंतिम रूप से गतिविधियों को 'आंदोलन' से अभिहित किया जाए या 'समस्या' से। वस्तुतः समस्या व आंदोलन की लड़ाई ही है। मार्क्सवाद अपनी बुनियादी सोच में मात्र साध्य की पवित्रता पर ही जोर देता है। माओ के अनुसार साधन 'अन्यथा' हो सकते हैं, लगभग यही सत्य नक्सलवाद के साथ भी है। जहां तक आदर्शों और सिद्धांतों की बात है यह विचारधारा आंदोलन प्रतीत होती है किंतु जैसे ही 'क्रियान्वयन' का प्रश्न आता है, यह 'समस्या' बन जाती है और क्योंकि वर्तमान समय में हर सिद्धांत और आदर्श द्वितीय हो गए हैं और हिंसा प्राथमिक हो गई है अतएव यह विचारधारा 'आंदोलन' से अधिक 'समस्या' के रूप में ही अधिक संबोधित की जा रही है।

3 मार्च, 1967 को लापा किशन, सांगु किशन और रतिया किशन ने सी.पी.आई. (मार्क्सवादी) के 150 अन्य समर्थकों के साथ लाठी–भालों एवं तीर कमान से लैस होकर जोतदार के अनाज भंडार से अनाज को लूट लिया। यह लूटपाट खेतीहीन किसान के हक के लिए आंदोलन की पराकाष्ठा जो शांतिपूर्ण तरीकों से अनुकूल परिणाम नहीं मिलने के कारण की गई। नक्सलवाड़ी आंदोलन के तीनों प्रमुख नेताओं चारू मजूमदार, कानू सान्याल एवं जंगल संथाल के अनुसार यह सशस्त्र लड़ाई अब जमीन के लिए नहीं बल्कि सर्वहारा वर्ग की सत्ता के लिए

है। प्रारंभ में नक्सलवादी आंदोलन के तीन घोषित उद्देश्य थे –

1. खेत जोतनेवाले को खेत पर अधिकार मिले।
2. विदेशी पूंजी की शक्ति को समाप्त किया जाए।
3. वर्ग एवं जाति के विरुद्ध जन आंदोलन किया जाए।

नक्सलवाड़ी आंदोलन के मुखिया चारू मजूमदार का कहना है कि वर्ग संघर्ष एकमात्र गरीब, भूमिहीन किसान, मजदूर तथा आदिवासी ही चला सकते हैं। कानू सान्याल वर्षों बाद नक्सलवाड़ी घटना के बारे में कहता है कि आंदोलन की कोई तैयारी नहीं थी। बस यूं समझिए कि जमीन तैयार थी। जमींदारों के खिलाफ मोर्चा खोलने के नाम पर किसान एकजुट थे। इस काम के लिए हथियार उठाने की योजना नहीं थी लेकिन बाद में यह जरूरी हो गया।''

यदि हम वर्तमान परिदृश्य में देखें तो लालगढ़ में भी कुछ ऐसा ही होता गया। अंतर यह था कि नक्सलवाड़ी आंदोलन को 52 दिनों में खत्म करा दिया गया। लेकिन लालगढ़ में घटना गंभीर होकर ''मुक्तांचल'' की घोषणा तक आ पहुंची।

लालगढ़ में परिस्थितियों ने आंदोलन का रूप 02 नवंबर, 2008 की घटना के बाद से लेना शुरू किया, जब उस दिन माओवादियों ने बंगाल के मुख्यमंत्री के कानवाय को लैंडमाइंस से ब्लास्ट करने की कोशिश की। प्रति उत्तर में कार्रवाइ करते हुए पुलिस ने इस क्षेत्र में व्यापक धर–पकड़ की तथा इस सिलसिले में काफी लोगों को गिरफ्तार किया जिनमें तीन नाबाालिग विद्यार्थी उबेन मुरमुर, गौतम पात्रा एवं बुद्धदेव पात्रा भी शामिल थे। स्थानीय आदिवासियों ने पुलिस पर बर्बरतापूर्वक व्यवहार एवं अत्याचार का आरोप लगाया। 06 नवंबर को आदिवासियों ने लालगढ़ पुलिस स्टेशन का घेराव किया। 07 नवंबर को इन लोगों ने तीर–धनुष से पुलिस पर उनके ज्यादतियों के विरोध में आक्रमण किया।

इस प्रकार इस समस्या ने विकराल रूप लेना शुरू कर दिया। स्थानीय लोगों ने पुलिस का बहिष्कार किया तथा पुलिस को किसी भी प्रकार की सुविधा देने या सामान बेचने पर स्वतः प्रतिबंध लगा लिया। इसी बीच नक्सलियों ने मौके का फायदा उठाकर पी.सी.पी.ए. के गठन में सक्रिय रूप से भाग लिया तथा इसे मुखौटा संगठन के रूप में इस्तेमाल करते हुए अपनी गतिविधियों को आगे बढ़ाना शुरू कर दिया।

हालांकि नक्सलियों द्वारा इस क्षेत्र में हिंसक गतिविधियों का इतिहास काफी पुराना है। पश्चिमी मेदनीपुर जिला पुलिस के रिकार्ड के अनुसार 2002 से कुल 111 आदमियों की हत्या नक्सलियों ने जिले भर में कीं, जिनमें ज्यादातर हत्याएं बीनपुर एवं सालबोनी ब्लॉक में की गईं। मीडिया रिपोर्ट के अनुसार नवंबर 2007 से 69 सी.पी.एम. कार्यकर्ताओं एवं 10 ग्रामीणों की हत्या माओवादियों द्वारा पश्चिमी मेदनीपुर जिले में की गई। 2002 से जिले में हत्याओं में 74 सी.पी.एम. कार्यकर्ता, 23 पुलिसकर्मी, 05 आदिवासी, 01 कांग्रेसी कार्यकर्ता तथा 01 पूर्व नक्सली था।

इस दौरान किसी भी नक्सली के पुलिस अभियान में मारे जाने का कोई रिकार्ड नहीं है। इन हत्याओं का दुःखद पहलू यह है कि मारे गए ज्यादातर लोग गरीब आदिवासी हैं जिनके नाम एवं रक्षा हेतु नक्सलियों में वर्तमान में लालगढ़ आंदोलन को हवा दी है।

लालगढ़, पश्चिम बंगाल के पश्चिमी मिदनापुर जिले के झारग्राम सब डिवीजन में बिनपुर–1 कम्यूनिटी डेवलपमेंट ब्लॉक के अंतर्गत एक गांव है। यह गांव निकटतम प्रमुख रेलवे स्टेशन मिदनापुर से 45 किलोमीटर है। यह क्षेत्र जंगलमहल का हिस्सा है तथा आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र है। यहां के लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती है तथा कुछेक लोग पत्तों की प्लेट बनाकर बेचकर अपना जीवन यापन करते हैं। यहां के ज्यादातर किसानों के पास अपनी ज़मीन नहीं है तथा वे दूसरों के खेतों पर खेती कर उत्पादन से अपना हिस्सा कमाते हैं। यहां की भौगोलिक स्थिति भी कुछ ज्यादा लाभकारी नहीं है और किसान सामान्यतः साल में एक ही फसल उगा पाते हैं। बाकी समय में यहां के लोग जंगली उत्पादों पर जीवनयापन की कोशिश करते हैं।

यहां रोजगार के अवसर सरकारी या गैर सरकारी प्रयासों द्वारा न के बराबर उपलब्ध कराए गए हैं। कुछ शब्दों में कहें तो लालगढ़ पश्चिम बंगाल या छत्तीसगढ़ के बस्तर या उड़ीसा, बिहार एवं झारखंड राज्यों के उन क्षेत्रों की ही तरह है जहां भुखमरी, व्यवसाय में अवसरों की कमी, पिछड़ापन एवं भूमिहीन किसानों/मजदूरों के बहुतायात ने नक्सलियों को अपने पांव पसारने के लिए तैयार सी जमीन मुहैया कराई है।

लालगढ़ में ''पुलिस उत्पीड़न विरोधी जन समिति'' (पीपुल्स

समिति अगेंस्ट पुलिस एट्रोसीटीज) संस्था के नेतृत्व में हरेक प्रकार के हथकंड़ा अपनाकर माओवादियों ने नवंबर 2008 से वहां एक विद्रोह का मनोविज्ञान तैयार कर रखा है। नक्सलियों द्वारा इसे आम जनता के उत्पीड़न के विरोध की पृष्ठभूमि में पूरे क्षेत्र को ''लिबरेशन जोन'' (मुक्तांचल) घोषित कर सनसनी फैला दी। नक्सलियों के 42 वर्षों के इतिहास में 24 मई, 1967 में दार्जिलिंग जिले के नक्सलवादी आंदोलन के बाद यह राज्य की शक्ति को सीधे चुनौती देने का दुःसाहस भले ही उसके बड़बोलेपन का उदाहरण है, लेकिन घटनाओं के क्रम का इस प्रकार का रूप लेना तथा देश के नागरिकों को मीडिया द्वारा जून के महीने में इस समाचार का लगातार परोसा जाना आम नागरिकों को अवश्य चितिंत करता है।

सर्वाधिक चिंताजनक बात यह है कि नक्सलियों द्वारा लालगढ़ एवं इसके आस–पास के क्षेत्रों में जैसे कोकराझार, धर्मपुर, भादुताला, बेलतीली, बेलपहाड़ी, बॉसपहाड़ी, रामगढ़, काटापहाड़ी इत्यादि जगहों पर एक टैक्टीकल घेराबंदी करने से लेकर लोगों को बहकाने में तथा क्षेत्र के सुरक्षा बलों के आगमन को रोकने के लिए रास्तों पर लैंडमाइंस बिछाने में काफी वक्त तथा संसाधन लगे होंगे। लेकिन आसूचना तंत्र द्वारा या राज्य पुलिस तंत्र द्वारा इस बात का खबर न लगना राजनैतिक एवं प्रशासनिक उदासीनता को दर्शाता है, जो कि नक्सलवाद के पनपने का मूल कारण है।

लालगढ़ के संदर्भ में इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि माओवादियों ने यहां अपना आधार धीरे–धीरे आम जनता की आकांक्षाओं के अनुसार ही आंदोलन को दिशा देकर बनाया था। इसलिए उन्होंने लोगों को सैन्य तरीके से ''दलम'' इत्यादि में संगठित कर सीधे राज्य के खिलाफ भड़काना उचित नहीं समझा। लालगढ़ आंदोलन में इसलिए मुख्य रणनीतिक प्रत्यक्षतः पी.सी.पी.ए. के नेता छत्रधर महतो ही रहे। माओवादियों ने जबकि नवंबर से पांच महीने तक क्षेत्र के लोगों में सामुदायिक कार्यों में हाथ बंटाया तथा ट्यूब वेल गाड़ने, रिजर्वायर तथा सड़क बनाने इत्यादि कार्यों को अंजाम दिया। कोलकात्ता स्थित गैरसरकारी संस्था 'सनहति' ने पैसा इकट्ठा कर लालगढ़ क्षेत्र में एक ''स्वास्थ केंद्र'' स्थापित करने में मदद की। अतएव, प्रशासन द्वारा उठाए जानेवाला हरेक कदम गैर सरकारी संस्थाओं या लोगों

द्वारा उठाए गए। इस प्रशासनिक उदासीनता ने लोगों की मनोस्थिति को सैद्वांतिक रूप से माओवाद के प्रति नरम एवं दोस्ताना रूख को विकसित होने का अवसर दिया।

पश्चिम बंगाल में माओवादियों की हिंसात्मक गतिविधियों में लगातार वृद्धि हो रही है जिसकी पुष्टि राज्य में हो रही हत्याओं से पता होती है। डब्ल्यू.डब्ल्यू.डब्ल्यू.एसएटीपी.आर्ग वेबसाइट के अनुसार समाचार–पत्रों की रिपोर्ट के अनुसार हिंसक घटनाओं में 26 जून, 2009 तक 35 हत्याएं की गईं जबकि 2008 में यह संख्या 24 थी।

पश्चिम बंगाल में नक्सली हिंसा में मृत्यु

वर्ष आम	नागरिक	सुरक्षाबल	नक्सली	कुल
2006	9	7	4	20
2007	6	0	1	7
2008	19	4	1	24
26 जून 2009 तक	30	5	1	36

2009 में यह संख्या गंभीर नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में आम नागरिकों की हत्याओं के काफी करीब है :–

26 जून, 2009 तक विभिन्न राज्यों में नक्सली हिंसा

राज्य	आम नागरिक	सुरक्षाबल	नक्सली	कुल
पश्चिम बंगाल	30	5	1	36
आंध्रप्रदेश	5	0	7	12
उड़ीसा	16	28	12	56
बिहार	12	19	13	44
झारखंड	30	52	35	117
छत्तीसगढ़	40	71	55	166

(स्रोत :– www.satp.org)

06 नवंबर, 2008 को लालगढ़ थाना का घेराव कर आदिवासियों ने सारे रास्तों पर अवरोधक खड़े कर दिए, रास्तों को काट दिया तथा पुलिस स्टेशन की बिजली भी काट दी। 07 नवंबर 2008 को रात में आंदोलनकारियों ने टेलीफोन भी काट दिया तथा उस क्षेत्र को सरकार के प्रभाव एवं पहुंच से काफी दूर कर दिया।

माओवादियों ने योजनाबद्ध तरीके से अपनी नीतियों के अनुसार स्थानीय लोगों को उनकी समस्याओं तथा भावनात्मक आघातों को राज्य के खिलाफ उपयोग करने का सफल प्रयोग किया। स्थानीय आदिवासियों ने परंपरागत तरीके से दोषियों को कान पकड़ उठक–बैठक तथा गलियों में नाक घसीटते हुए चलना, जहां गरीबों का उत्पीड़न किया गया था तथा घायलों को मुआवजा देने की मांग की। लेकिन इन मांगों को न ही गंभीरता से लिया गया और न ही स्थिति पर काबू पाने के लिए प्रभावी कदम उठाए गए।

10 नवंबर, 2008 को स्थानीय आदिवासियों ने दहीझूरी में रास्ते को अवरुद्ध किया जिस पर पुलिस ने कार्रवाई करते हुए 'लाठी चार्ज' किया तथा कई लोगों को गिरफ्तार कर लिया। इसी समय से स्थिति बिगड़नी शुरू हो गई। आदिवासियों ने परंपरागत हथियारों तीर–धनुष इत्यादि से लैस होकर पुलिस कर्मियों का घेराव किया। औरतें भी इसमें झाड़ू तथा डंडे के साथ शामिल हो गईं। नतीजन, पुलिस कर्मियों को पीछे हटना पड़ा तथा गिरफ्तार लोगों को छोड़ना पड़ा। धीरे–धीरे स्थिति एक आंदोलन का रूप लेने लगी तथा आंदोलन आस–पास के क्षेत्रों में फैलने लगा।

स्थानीय तथा तत्कालिक शिकायतों के साथ–साथ दीर्घ कालीन मुद्दे जैसे कि भूमि सुधार, विस्थापितों की दुर्दशा, अविवेकी औद्योगीकरण तथा राज्य के कर्मचारियो द्वारा गरीबों का शोषण आदि मुद्दों को उठाया जाने लगा। प्रत्यक्ष तौर पर स्थानीय लोगों ने सभी राजनीतिक पार्टी को अपने आंदोलन से दूर रखा, लेकिन इन शोषित वर्गों को इन मुद्दों पर लड़ने के लिए प्रेरित करने का कार्य निःसंदेह किसी न किसी खास वर्ग के लोगों द्वारा ही किया होगा। धीरे–धीरे स्थितियों का आंदोलन का रूप लेना, व्यापक क्षेत्र में प्रभाव तथा बाहरी लोगों का हस्तक्षेप इत्यादि होता रहा लेकिन गुप्तचर विभाग को इसकी खबर न होना, सुरक्षा तंत्र की कमजोरी रही होगी या राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव जो आंतरिक सुरक्षा के लिए बड़ी ही घातक है।

14–15 नवंबर तक झारग्राम सब–डिवीजन को रास्ता अवरूद्ध कर मेदनीपुर से अपहुंच बना दिया। प्रशासनिक एवं पुलिस कार्रवाई इस समय अपेक्षित थी। लेकिन ऐसा कोई कदम नहीं उठाया गया। स्थानीय लोगों ने आंदोलन को तेज करने तथा अपने आंदोलन से जुड़े

नेताओं को लक्ष्य देने के लिए कई संगठनों का निर्माण कर प्रशासन से कड़ा रूख रखने के लिए बाध्य रखा। जब उन्हें लगा कि ''भारत जकात मांझी मीरवा'' संगठन उसके हितों का सही ख्याल नहीं रख रही है तो उन्होंने ''पुलिसी संत्रास विरोधी जोनों सधारणर समिति'' पी.सी.पी.ए. का गठन किया तथा सीघु सोरेन को इसका सचिव बनाया। इस समिति ने सरकार के सामने 11 मांगे रखीं। ऐसा नहीं था कि मार्ग इत्यादि अवरुद्ध करने के लिए सभी स्थानीय लोगों में सहमति थी। लेकिन इसका विरोध करने का साहस भी किसी में नहीं था।

संभवतः माओवादियों ने स्थानीय लोगों में अपनी विचारधारा से सहानुभूति रखनेवाले लोगों को प्रेरित कर रखा हो या माओवादियों की हिंसक गतिविधियों के प्रति राज्य पुलिस की नाकामी शायद लोगों के जेहन में हो। अतः मांगों में गिरफ्तार माओवादियों को छोड़ने की बात भी शामिल की गई क्योंकि समिति का कहना है कि हर घटना के बाद निर्दोष आदिवासियों को माओवादी बताकर गिरफ्तार कर लिया जाता है। यह भी मांग रखी गई कि रात में ''पुलिस टहलदारी'' पुलिस द्वारा गश्त भी बंद कर दिया जाए। इस प्रकार 02 नवंबर से ब्लास्ट के बाद पुलिस द्वारा चोटोपेसिया गांव में तथाकथित माओवादियों की धर–पकड़ ने महज कुछ गांववालों के विरोध से विकसित होकर एक बड़े क्षेत्र में पहले आंदोलन ने सैद्धांतिक आवरण ओढ़ा तथा फिर पूर्णतः माओवाद में बदलता चला गया और वह भी महज 15 दिनों में।

स्थानीय जनता का विरोध किस प्रकार एक संगठित आंदोलन का रूप लेता है। इसका अध्ययन सुरक्षा बलों के लिए अपनी रणनीति बनाने के लिए आवश्यक है, क्योंकि इस प्रकार के आंदोलनों एवं राज्य के प्रति विरोध में लोग भावनात्मक तौर से जुड़ जाते हैं तथा काफी संख्या में महिलाएं, बूढ़े एवं बच्चे भी शामिल हो जाते हैं फिर इन लोगों को असमाजिक तत्व अपनी ढ़ाल बनाकर इस्तेमाल करते हैं। कोई भी सुरक्षा बल इन वर्गों के खिलाफ सख्त कदम नहीं उठा सकता, अतः इस प्रकार माओवादियों के खिलाफ कार्रवाई मुश्किल हो जाएगी। स्थानीय लोगों जिनमें ज्यादातर आदिवासी एवं पिछड़े वर्ग के लोग हैं, उन्होंने भी आंदोलन को एक योजना के तहत आगे बढ़ाने के लिए कई संगठन बनाए। ''कुर्मी छात्र संग्राम समिति, जुमिट गोक्ता, भारत

जकात मांझी मड़वा, जुआ गोंटा इत्यादि।

ज्यादातर संगठनों ने विलय कर ''पुलिस समिति 'अगेंस्ट पुलिस ऑपरेशन'' बनाया तथा इसका नेतृत्व परंपरागत तौर पर अन्य संगठनों में बुजुर्गों के बदले युवाओं के हाथ में चला गया। लोक आंदोलन से अन्य तबकों एवं व्यवसाय से जुड़े इससे लोग जुड़ने लगे। इसके बाद बंद का आह्वान, रेल ट्रैक को बाधित करना इत्यादि अनेक प्रकार से विरोध दर्ज कराने लगे तथा अपनी मांगों के प्रति अडिग रहे। माओवादियों के पश्चिम बंगाल राज्य समिति के सचिव कंचन ने 16 मांगें सरकार के सामने रख पुलिस दमन को रोकने को कहा। कंचन का बयान माओवादियों की भागीदारी को प्रत्यक्षतः प्रमाणित करता है।

07 दिसंबर 2008 को प्रशासन एवं पी.सी.पी.ए. के बीच वार्ता के बाद जिसमें आंदोलनकर्ताओं 12 में से 10 मांगो को मानने के बाद लालगढ़ का ब्लोकेट खत्म कर दिया गया। लोगों द्वारा रास्तों पर जो अवरोध खड़े किए गए उसे वापस हटा लिया। प्रशासन ने लोगों के पुलिस अत्याचार की शिकायतों को निष्पक्ष तौर पर देखने का आश्वासन दिया। इस प्रकार लालगढ़ में कुछ दिनों के लिए शांति स्थापित हुई प्रतीत होने लगी। लेकिन म्युनिसिपल चुनाव के बाद (सी. पी.आई.एम.) कार्यकर्ताओं एवं ग्रामीणों के बीच पुनः तनाव बढ़ने लगा। इस बार के विवाद में आदिवासियों के खिलाफ जिन्होंने पहले आंदोलन किया था– ''जनप्रतिरोध समिति'' संगठन बनाया गया। इस विवाद ने जल्द ही हिंसक रूप ले लिया तथा माओवादियों ने मौके का फायदा उठाते हुए बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया तथा आंदोलन को हिंसक रूप देना शुरू कर दिया। यह सब कुछ दिसंबर में ही शुरू हो गया।

माओवादी कांटापहाड़ी, जो लालगढ़–रामगढ़ के बीच है में अपना मुख्यालय स्थापित कर न सिर्फ वहां आंदोलन को चला रहे थे, बल्कि सुरक्षा बलों के संभावित अभियान के खिलाफ रणनीति तैयार कर लैंडमाइंस इत्यादि भी लगा रहे थे। इसमें लालगढ़ से रामगढ़ तक को 11 किलोमीटर के इलाके के अलावा जो अन्य क्षेत्र माओवादियों ने पूर्णतः अपने प्रभाव में ले रखे थे उनमें औलिया गांव जो छत्रधर महतो–पी.सी.पी.ए. नेता का गांव था, छोटोपेलिया, बोड़ोपेलिया इत्यादि प्रमुख थे।

लालगढ़ क्षेत्र के आदिवासियों–मूलवासियों का आंदोलन एवं प्रशासन से दूरी जनवरी, फरवरी–मार्च 2009 में भी जारी रहा। लोकसभा चुनाव के दौरान अप्रैल 2009 में प्रशासन शांतिपूर्वक चुनाव हेतु बिना पुलिस के तैनाती की शर्त पर वोटिंग करवाने में सफल हुआ। लेकिन स्थिति मध्य जून में पुनः बिगड़ गई जब आंदोलन के क्रम में शांति मार्च, प्रोसेशन इत्यादि सी.पी.एम. कार्यकर्ता एवं पी.सी.पी. ए. के कार्यकर्ताओं के बीच हिंसक झड़पों में बदलने लगी। माओवादियों ने खुले तौर पर 14 जून को पी.सी.पी.ए. की रैली में शामिल होकर अपने आधुनिक हथियारों से कई सी.पी.एम. कार्यकर्ताओं पर हमले किए, उनके घरों को तोड़ा तथा लूटमार एवं आगजनी की। तीन सी. पी.एम. कार्यकर्ता एवं एक पी.सी.पी.ए. कार्यकर्ता की इस झड़प में मौत हुई।

इस हिंसक दौर में तथाकथित तौर पर राजनीतिक पार्टियों के कार्यकर्ता खुलेआम शामिल हुए तथा यह एक प्रकार से वर्चस्व की लड़ाई बन गई। इस प्रकार की आपसी ईर्ष्या एवं मतभेदों को माओवादी हरसंभव हिंसक रूप देने लगे तथा कई लोगों की हत्याएं कर दीं। आम लोगों के आंदोलन को गुरिल्ला युद्ध बताकर मुक्तांचल (लिबरेटेड जोन) की बात करने लगे। इससे तुरंत कार्रवाई हेतु केंद्र सरकार से हस्तक्षेप की आवश्यकता के बाद के.रि.पु.बल ने मोर्चा संभाला।

लालगढ़ घटना के कारणों का विश्लेषण करने से पहले एक ''गृहयुद्ध जैसी स्थिति'' जो मीडिया के द्वारा प्रसारित की गई पर किस प्रकार काबू पाया गया इसकी मीमांसा जरूरी है। ''आपरेशन लालगढ़''– सुरक्षा बलों जिसमें केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की बृहत भूमिका रही, की रणनीतिक सूझ–बूझ का एक अनुकरणीय उदाहरण रहा है। 16 जून को के.रि.पु.बल की कंपनियां मिदनापुर में पहुंच गई तथा अभियान के लिए तैयार थी। राज्य पुलिस को अभियान हेतु तैयारियों के लिए संसाधनों को मुहैया कराने के बाद यह अभियान शुरू किया गया। अभियान के महज 10 दिनों में लालगढ़, रामगढ़, झारग्राम तक जाने का रास्ता, बेलपहाड़ी पूर्णतः नक्सलियों के चंगुल से मुक्त करा दिया गया और वह भी बिना किसी हिंसात्मक घटनाओं को अंजाम दिए हुए। प्रभावी तौर पर के.रि.पु.बल 48 घंटों के अंदर ही

लालगढ़ पहुंच गया तथा जो ''लिबरेटेड जोन'' (मुक्तांचल) का नक्सलियों ने एक ''मनोवैज्ञानिक हाइप'' निर्मित कर रखा था, उसे ध्वस्त कर दिया। बाद में इस पूरे क्षेत्र को विस्फोटकों इत्यादि से मुक्त करने हेतु सीमा सुरक्षा बल भी अभियान में लगाया गया। नक्सलियों के सफाए के लिए नव–निर्मित के.रि.पु.बल की कोबरा बटालियन के कमांडोज को पदस्थापित करने की आवश्यकता नहीं पड़ी, क्योंकि के. रि.पु.बल की टुकड़ियों ने बड़े ही प्रभावी ढंग से अभियान को पूरा कर लिया।

बल की रणनीति से घबराकर नक्सलियों के आतंकी नेता कोटेश्वर राव (किशन जी), छत्रधर महतो, विकास इत्यादि सुरक्षा बलों के अभियान शुरू करते ही भाग खड़े हुए। पीरकाटा गांव में बल के पहुंचने पर नक्सलियों के इन नेताओं ने वहां से 30 कि.मी. बोड़ोपेलिया चौक पर सभा कर गांववालों को मुकाबला करने के लिए उकसाया। लेकिन सुरक्षा बल द्वारा अश्रुगैस का पहला गोला दागने के महज कुछ मिनटों बाद ही ये भाग खड़े हुए। बल के द्वारा अभियान में नक्सली यह आस लगाए हुए थे कि भारी पैमाने पर रणनीतिक एवं राजनीतिक चूक होगी जिसमें आम जनता को नुकसान उठाना पड़ेगा। लेकिन राजनीतिक संशयों के बावजूद जो अभियान की रणनीति बनाई गई उसमें जनता को बिना नुकसान पहुंचाए प्रभावी अभियान ने के.रि.पु.बल को सिर्फ सफल ही नहीं बनाया बल्कि आम जनता के दिलों को जीतने में भी कामयाबी हासिल की।

माओवादियों ने कांटापहाड़ी जो लालगढ़–रामगढ़ के बीच है वहां अपना मुख्यालय स्थापित कर न सिर्फ आंदोलन को चला रहे थे बल्कि सुरक्षा बलों के संभावित अभियान के खिलाफ रणनीति तैयार कर लैंडमाइंस इत्यादि भी लगा रहे थे। इससे लालगढ़ से रामगढ़ तक के 11 किलोमीटर के क्षेत्र के अलावा जो अन्य क्षेत्र माओवादियों ने पूर्णतः अपने प्रभाव में ले रखा था वह औलिया गांव जो छत्रधर महतो–पी.सी.पी.ए. नेता का गांव है, छोटोपेलिया, बोड़ोपेलिया इत्यादि था। 165 वाहिनी के.रि.पु.बल के कमांडेंट श्री डी.टी.बनर्जी ने सुरक्षा बल द्वारा 18 जून को अभियान शुरू करने से पहले नक्सलियों की सारी संभावित योजनाओं की प्रत्याशा पर विमर्श कर एक प्रभावी रणनीति तैयार की जिसके फलस्वरूप के.रि.पु.बल ने बिना कोई

नुकसान उठाए एक बड़ी रणनीतिक सफलता हासिल की।

हालांकि पीपुल्स समिति अगेंस्ट पुलिस एट्रोसीटीज (पी.सी.पी.ए.) अपने संगठन को नक्सलियों से अलग आम जनता हितार्थ मानती है तथा सभी प्रकार की हिंसा का विरोध करती है, बताती है। लेकिन इस पूरे घटनाक्रम में नक्सलियों ने पी.सी.पी.ए. को ढाल बनाते हुए सभी प्रकार की हिंसक एवं घृणित घटनाओं को अंजाम दिया जिसमें सुरक्षा बलों द्वारा कार्रवाई की स्थिति में औरतों एवं बच्चों को ढाल बनाने की भी बात कही।

लालगढ़ में सुरक्षाबलों द्वारा बृहत् तौर पर अभियान का तात्कालिक कारण 14 जून, 2009 को धरमपुर में सी.पी.एम. के तीन एवं पी.सी.पी.ए. के एक कार्यकर्ता की आपसी हिंसक मुठभेड़ में हत्या तथा सी.पी.एम. के अन्य कई कार्यकर्ताओं लापता होना था। लालगढ़ में स्थित पुलिस चौकी को आंदोलनकारियों द्वारा अपने नियंत्रण में कर लेना तथा मृतकों के शवों को परीक्षण हेतु उठा पाने से नक्सलियों द्वारा रोकना, 17 जून को झारग्राम शहर में आम जनता के सामने अभिजीत महतो, अनिल महतो एवं लीलाधर महतो जिसमें की अभिजीत महतो ट्रकों के पाक्रिंग स्थल का चौकीदार था, को सी.पी.एम. कार्यकर्ता बताकर हत्या करना आदि अन्य कारण भी थे। नचीपुर सी.पी.एम. स्थानीय समिति के सचिव चंडी करण के घर को जलाना, सी.पी.एम. नेता अनूप पांडेय एवं उसके भाई हरीना ग्राम पंचायत सदस्य दलिम पांडेय के घर पर आक्रमण इत्यादि को सभी देशवासियों ने इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से देखा जो कि अपने आप में अराजकता का द्योतक था। इसके अलावा सी.पी.एम. कार्यकर्ताओं से मारपीट, लूटमार एवं उनके घरों को जलाना इत्यादि घटनाओं के कारण राज्य सरकार को त्वरित कार्रवाई हेतु के.रि.पु.बल की आवश्यकता महसूस हुई।

लालगढ़ में सुरक्षा बलों के प्रभावी अभियान से यह स्पष्ट है कि नक्सलियों की हिंसक चुनौतियों का सामना सफलतापूर्वक किया जा सकता है। स्थानीय लोगों द्वारा केंद्र के सुरक्षा बलों का जिस प्रकार स्वागत किया गया वह बतलाता है कि ''पुलिस अत्याचार'' से लड़ने के लिए आंदोलन करनेवाली जनता को के.रि.पु.बल में काफी भरोसा एवं विश्वास है। नक्सली जल, जंगल और जमीन के नाम पर जिस तरह विस्फोटों से जमीन तथा हिंसा से लोगों का जीवन बर्बाद कर रहे

हैं उस स्थिति से सभी उबरना चाहते हैं। सैद्धांतिक मतभेदों एवं राजनीतिक संशयों से ऊपर उठकर ऐसी किसी भी स्थिति से निपटने में केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल निःसंदेह रणनीतिक रूप से तैयार है और प्रभावी कार्रवाई कर सकती है, लेकिन दीर्घ समाधान तो सामाजिक एवं आर्थिक विकास से ही संभव हैं। काफी लम्बे समय तक इन क्षेत्रों में सुरक्षा बलों की तैनाती न तो स्थानीय लोगों द्वारा अपेक्षित है और न ही उचित है। ऐसी मिट्टी जहां बगावत एवं बारूद का बीज रोपा जा चुका है अगर तुरंत ही उसे विकास के लिए प्रयोग नहीं किया गया तो वह सिर्फ सडांध एवं बदबू ही पैदा करेगी तथा आम आदिवासियों के साथ–साथ इसका नुकसान बल के कार्मिकों को शहादत से चुकाना पड़ता है।

लालगढ़ में भले ही सुरक्षा बलों ने स्थिति पर नियंत्रण पा लिया तथा वहां कानून व्यवस्था में सुधार हो रहा है। लेकिन इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए वहां 2010 से केंद्रीय रिजर्व पुलिस की चार बटालियनें तथा अन्य सशस्त्र पुलिसकर्मी तैनात हैं। नक्सलवाड़ी में उग्र वामपंथियों के प्रयोग अनाज लूटने तथा जोतदारों के प्रति हिंसा एवं पुलिस के प्रति जबावी कार्रवाई की नीति थी। लेकिन लालगढ़ में लोगों के असंतोष को नक्सली ने क्षेत्र को राज्य से छीन ''मुक्त क्षेत्र'' घोषित करने के अंजाम तक ले गए। निःसंदेह उनके प्रयोग अधिक साहसिक व महत्वाकांक्षी होते जा रहे हैं। लालगढ़ नक्सलवाद के आंदोलन से समस्या तक का सटीक उदाहरण है।

अब नक्सलियों का मुख्य उद्देश्य जमीन पर खेतिहरों के लिए कब्जा नहीं रहा। अब वे संपूर्ण सत्ता हथियाना चाहते हैं। नक्सली यानी सी.पी.आई.(माओवादी) ने पार्टी संविधान में लक्ष्य और उद्देश्य को धारा–4 में वर्णन निम्न प्रकार से किया–

''पार्टी का फौरी लक्ष्य केवल दीर्घकालीन लोकयुद्ध द्वारा साम्राज्यवाद, सामंतवाद तथा दलाल नौकरशाह पूंजीवाद को उखाड़ फेंककर नव जनवादी क्रांति को पूरा करना तथा सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में जनता के जनवादी अधिनायकत्व की स्थापना करना है। यह भविष्य में समाजवाद की स्थापना के लिए संघर्ष करेगी। पार्टी का अंतिम लक्ष्य, सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में क्रांति को निरंतर जारी रखते हुए साम्यवाद की स्थापना करना और इस तरह दुनिया से मानव द्वारा

मानव के शोषण की व्यवस्था को समाप्त करना है। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) स्वयं को जनता और क्रांति की सेवा के लिए समर्पित करती है, जनता के प्रति अपार स्नेह आदर रखती है, यह जनता पर भरोसा रखती है तथा उनसे सीखने के प्रति गंभीर है। पार्टी सभी प्रतिक्रियावादी साजिशों तथा संशोधनवादी तिकड़मों के प्रति सचेत है।'' **(पार्टी संविधान, अध्याय–2, केंद्रीय समिति (अस्थाई) भारत की कम्युनिस्ट पार्टी माओवादी)**

नक्सली किस प्रकार की व्यवस्था के लिए आंदोलन कर रहे हैं यह उनके द्वारा प्रकाशित साहित्य से पता चलता है कि जिसे वे ''आंदोलनकारी क्रांति'' मान रहे हैं वे नीतियां जिस प्रकार गलत होने के कारण टकराव पैदा कर रही हैं तथा समस्या का रूप ले रही हैं।

1947 के बाद भारत सरकार द्वारा देश के विकास के नाम पर जो बड़ी–बड़ी पंचवर्षीय योजनाएं बनाई गई थीं उसके मुताबिक जितने भी आर्थिक ढांचे खड़े किए गए थे– चाहे उद्योग संबंधी हो या कृषि या व्यापार संबंधी, चाहे पब्लिक सेक्टर हो या प्राइवेट सेक्टर – सभी साम्राज्यवादियों के नियंत्रण व ठोस निर्देशन में, उन्हीं की पूंजी व टेक्नोलॉजी साम्राज्यवादी तथा फिर एक समाजवादी देश से एक सामाजिक साम्राज्यवादी देश में पतित हो जाने के बाद तत्कालीन सोवियत संघ पर। इसके लिए विश्व बैंक व सोवियत संघ से योजनाएं आती रहीं। इसके लिए भारत सरकार एक के बाद एक असमान संधियां भी करती रही। वह बहुराष्ट्रीय कंपनियों तथा दलाल पूंजीपतियों को पूंजी लगाने तथा भारतीय बाजार को नियंत्रित करने की छूट देती रही। फलस्वरूप, देश में बड़े–बड़े कल कारखाने व खदान खुल गए, विद्युत व सिंचाई की बड़ी–बड़ी परियोजनाएं चालू हो गईं। बड़े–बड़े डैम व बांध बन गए।

सारे के सारे आर्थिक ढांचे भारत में, सस्ते मजदूर व कच्चे माल भारत के व इसे संचालित करनेवाले लोग भारत के। इससे सचमुच, देशवासियों को ऐसा लगा–मानो अपना देश तेजी से प्रगति के पथ पर अग्रसर है। लेकिन वास्तव में इसका हश्र क्या हुआ? इससे होनेवाले अधिकांश फायदे बहुराष्ट्रीय कंपनियों, साम्राज्यवादियों तथा उसमें दलाल, पूंजीपतियों की तिजोरियों में कैद होते रहे। वे मालामाल होते गए मगर देश कंगाल होता गया। देश एक बार कर्जखोर बना कि

लगातार कर्जखोर बनता गया–कर्ज के बोझ से दबता गया। अमीरी–गरीबी के बीच लगातार खाई बढ़ती गई। बेरोजगारी व महंगाई आसमान छूती गई। आत्मनिर्भता घटती गई– पर निर्भरता बढ़ती गई। देश के ऊपर दिन–पर–दिन साम्राज्यवादियों का शिकंजा कसता गया।

देश में खड़े किए गए 'विकास' के 'साम्राज्यवादी मॉडल' का यही निकला नतीजा। सन् 1947 के बाद में देश जो भी सरकारें बनीं, सभी साम्राज्यवादियों की दलाली करती रहीं। विकास के नाम पर साम्रज्यवादी नीतियों को अपने देश पर बेशर्मी से थोपती रही और इसी को देश में विकास का ढिंढोरा पीटती रही है जब से साम्राज्यवादियों के सरगना तथा विश्व की जनता का दुश्मन नंबर एक अमेरिका साम्राज्यवाद से वैश्वीकरण का औपनिवेशिक सिद्धांत दुनिया के सामने लाया है, तब से भारत की सभी सरकारें निर्लज्जतापूर्वक उसका पक्ष पोषण कर रही हैं – भारत सहित तीसरी दुनिया के पिछड़े तमाम देशों को गुलामी व दिवालियापन की ओर ले जानेवाली उसकी उदारीकरण व निजीकरण की साम्राज्यवादी रणनीतियों का बेशर्मी के साथ अनुसरण कर रही हैं। वैश्वीकरण, उदारीकरण व निजीकरण की साम्राज्यवादी शोषण–उत्पीड़न में और भी तेजी आई है। सरकारी कारखाने जो जनता की संपत्ति हैं, उन्हें औने–पौने दामों पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों व दलाल पूंजीपतियों के हाथों धड़ल्ले से बेचा जा रहा है। भारत के बाजार को विदेशियों के लिए पूरी तौर पर खोल दिया गया है। भारत के सकल उत्पाद का आधे से अधिक हिस्सा प्रतिवर्ष साम्राज्यवादी देशों में जा रहा है।

स्पष्ट है कि अब तक बनी केंद्र व प्रांत की सभी सरकारों ने जो विकास का मॉडल देश में खड़ा किया है, वह मूलतः साम्राज्यवाद परस्त नीतियों पर ही आधारित रहा है। देश के विकास के नाम पर वह पूंजी के जरिए तमाम बहुराष्ट्रीय कंपनियों, साम्राज्यवादियों व उसके दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों को लूट की छूट देती रही है। हम माओवादी 'विकास' के इस साम्राज्यवादी मॉडल को सिरे से खारिज करते हैं।

हम चाहते हैं कि साम्राज्यवादी पूंजी के सभी बैंकों, व्यावसायिक उद्यमों व कंपनियों को जब्त कर लिया जाए। सभी साम्राज्यवादी कर्जों

को रद्द कर दिया जाए। साम्राज्यवादी देशों के साथ की गई सभी असमान संधियों और समझौतों को रद्द कर दिया जाए।

हम यह भी चाहते हैं कि दलाल नौकरशाह पूंजीपति वर्ग के सभी उद्योगों, उनकी पूंजी और चल–अचल संपत्ति को जब्त कर लिया जाए। पूंजी को नियंत्रित करने के उसूल के आधार पर क्रांतिकारी सरकार को सभी इजारेदार उद्योगों और व्यापारों का नियंत्रण और प्रशासन अपने हाथ में ले लेना चाहिए ।

हम चाहते हैं कि जमींदारों और धार्मिक संस्थाओं की संपूर्ण जमीन को जब्त कर लिया जाए और उसे 'जोतने वाले को जमीन' के नारे के आधार पर भूमिहीन–गरीब किसानों और खेतिहर मजदूरों में बांट दिया जाए।

हम चाहते हैं कि कृषि विकास के लिए सभी सुविधाओं को तथा कृषि उत्पादों की फायदेमंद कीमतों को सुनिश्चित किया जाए। कृषि–सहकारिता में विकास को बढ़ावा दिया जाए तथा कृषि को नींव के रूप में रखते हुए एक मजबूत औद्योगिक व्यवस्था का निर्माण की तरफ बढ़ा जाए।

शहर से लेकर देहात तक लघु उद्योगों का जाल बिछा दिया जाए। मंझोले उद्योग धंधों को सीमित व नियंत्रित किया जाए। इस प्रकार सामंतवाद–साम्राज्यवाद–दलाल नौकरशाह पूंजीवाद से एकदम मुक्त, स्वतंत्र, आत्मनिर्भर व खुशहाल नव नतवादी अर्थव्यवस्था का निर्माण किया जाए तथा समाजवादी व्यवस्था के निर्माण के लिए रास्ता प्रशस्त किया जाए।

लेकिन, देश के विकास का उपरोक्त क्रांतिकारी मॉडल को देश–व्यापी पैमाने पर लागू करना तब तक संभव नहीं है जब तक मौजूदा अर्ध–औपनिवेशिक साजसता की जगह पर नव जनवादी राजसता का निर्माण नहीं हो जाता है और यह संसदीय रास्ते से कभी संभव नहीं है। संसदीय रास्ते से सिर्फ सरकारें बदलती हैं –राज व्यवस्था नहीं। जिस प्रकार गंगा का जल कितना भी पावन, स्वच्छ व मृदुल क्यों न हो, वह विशाल सागर में जाकर उसके खारेपन को दूर कर मीठा नहीं बना सकता, बल्कि वह खुद खारा बन जाता है, उसी प्रकार क्रांतिकारी लोग भी संसदीय रास्ते में जाकर आलीशान राज व्यवस्था के सामंतवादी–साम्राज्यवादी व भ्रष्ट चरित्र को कभी नहीं

बदल सकते हैं, बल्कि उसके चरित्र के अनुरूप उन्हें अपने चरित्र को ढाल लेना होता है।

यह तो एक मात्र क्रांतिकारी तरीके से ही पुरानी व्यवस्था को ध्वस्त कर नव जनवादी राजसता का निर्माण करना संभव है। इसके लिए हमारी पार्टी के पास राजनीतिक, आर्थिक व सैन्य कार्यक्रम का एक समग्र एजेंडा है और उन एजेडों को लागू करने के लिए हम कृतसंकल्प हैं।

दण्डकारण्य – नक्सलवाद का भयावह चेहरा

दंडकारण्य क्षेत्र में नक्सली आतंक अकथनीय दरिद्रता और विकराल गरीबी का कारण है। समकालीन भारत में नक्सलियों ने तथाकथित वर्ग संघर्ष बढ़ाकर मानवता का मान घटाया है। दंडकारण्य क्षेत्र में दक्षिणी छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश तथा उड़ीसा का सीमांत इलाका शामिल है। यह इलाका इतना ही बड़ा है जितना त्रिपुरा और प्रत्यक्ष रूप से कई यूरोपीय देशों से बड़ा है तथा प्राचीन काल से ही यह अभिशप्त रहा है। दुर्भाग्य से माओवादियों को इस भूभाग में प्रशासन की अनुपस्थिति और लोगों के दुःख के कारण जनता की सहानुभूति मिली जिसके कारण यह क्षेत्र जातीय संघर्ष और सशस्त्र संघर्ष का सुरक्षित केंद्र बिंदु बना। भारत के मानचित्र में यह सबसे गरीब एवं आर्थिक रूप से पूरी तरह उपेक्षित क्षेत्र है। यह आश्चर्यजनक तथ्य नहीं, हैरान होने की बात नहीं है कि अधिकतर लोग आज भी आदिम (अपरिष्कृत) हालत में रह रहे हैं और अधिकांश वन उत्पाद पर निर्भर हैं। इस परिस्थिति का नक्सलियों ने लाभ उठाया। नक्सलवाद पर नियंत्रण एवं अच्छे शासन के लिए प्रदेश को ठीक से समझने हेतु इसकी प्रभावित सामाजिक अर्थव्यवस्था, भूभाग, संस्कृति और नक्सलियों के जड़ जमाने की सतत् कोशिश के महत्व को समझना जरूरी है।

दंडकारण्य का क्षेत्र 92,000 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है और इसमें दक्षिणी छत्तीसगढ़ अर्थात् कांकेर, बस्तर, दंतेवाड़ा, नारायणपुर, बीजापुर, राजनांदगांव सटा हुआ महाराष्ट्र सीमांत क्षेत्र यानी गढ़चिरौली जिला, मध्यप्रदेश में बालाघाट जिले का उत्तरी हिस्सा, उड़ीसा का मलकानगिरी जिला एवं कोरापुट का हिस्सा तथा आंध्रप्रदेश के सीमांत

भाग का कुछ भू–खंड शामिल है। यह आकार में केरल के पहाड़ी एवं जंगली, नदी नालों के इलाके से दोगुना है। नक्सलियों ने इस संबद्ध इलाके दंडकारण्य को चिह्नित किया है तथा इसे 'दंडकारण्य विशेष अंचल समिति' के अधीन रखा है। यह उनके ठोस क्रांतिकारी अंचल का महत्वपूर्ण अंश है और इसमें अबूझमाड़ की पहाड़ियों का इलाका है जहां सी.पी.आई. माओवादियों के शीर्ष नेता छिपे रहते हैं तथा राज्य के विरुद्ध खूनी लड़ाई का मार्गदर्शन/संचालन करते हैं।

ऐतिहासिक तौर से लोककथाओं के अनुसार भगवान राम ने वनवास के दौरान 13 वर्ष तक यहां प्रवास करने के बावजूद भी यह रक्तरंजित है। विकिपीडिया के अनुसार दंडकारण्य 35,600 वर्गमील (92,200 वर्ग कि.मी.) में फैला क्षेत्र है। जिसके पश्चिम में अबूझमाड़ पहाड़ी शामिल है। दंडकारण्य की सीमाएं पूर्व में पूर्वीघाट जिसमें उड़ीसा और आंध्र प्रदेश का हिस्सा, दक्षिण छत्तीसगढ़ शामिल है। इसका विस्तार उत्तर से दक्षिण लगभग 200 मील (320 कि.मी.) तथा पूर्व से पश्चिम 300 मील (480 कि.मी.) है। दण्डकारण्य जनजातियों जैसे– गोटी, कोयास और गोंड का घर है जिनकी भाषा कोया होने के कारण कोया डोरा के नाम से जानी जाती हैं।

दंडकारण्य का अभिप्राय दंडों का जंगल (अरण्य) है। रामायण के समय में यह जानलेवा (खतरनाक) जीव–जंतुओं और दैत्य (राक्षसों) का घर था। निर्वासित (देश निकाला) लोग यहां रहते थे और संत (ऋषि) यहां से होकर विंध्याचल की पहाड़ियों में जाते थे। हिंदू महाकाव्य के अनुसार दण्डकारण्य अंचल रामायण में मोड़ देनेवाला अंचल है। इस भूमि से इस रचना का सूत्रपात हुआ। तथ्यों के अनुसार दण्डकारण्य का लगभग 47000 वर्ग कि.मी. का इलाका छत्तीसगढ़ और सीमांत हिस्सा महाराष्ट्र में पड़ता है। राजस्व सर्वेक्षण के द्वारा दण्डकारण्य के पूरे क्षेत्र का भारतीय सर्वे नहीं किया गया है। इस क्षेत्र में अभी भी बीस हजार के आस पास जनजातीय परिवार बहुत ही आदिम (अपरिष्कृत) 237 गांवों में रहते हैं। यहां तक कि ब्रिटिश शासक ने भी अपना प्रशासन यहां तक नहीं बढ़ाया और केवल शरणार्थियों के रहने (विस्थापित करने) के लिए इसे उपयुक्त बताते हुए अपने गजट में प्रकाशित किया।

दण्डकारण्य अंचल नक्सलवाद जैसे किसी भी हिंसक आंदोलन

के उत्पाद के लिए पूरी तरह से उपयुक्त स्थल है। पिछले अनुभवों में इस क्षेत्र को लोगों के लिए शासित करने का किसी ने ध्यान नहीं दिया। इस दूर–दराज के क्षेत्र में प्रगतिशील गतिविधियों जिनमें स्वास्थ्य देखभाल, पीने का पानी, बिजली, सड़क, रेल और शिक्षा सुविधा मुहैया नहीं कराई गईं जिसके कारण लोग सरकारी तंत्र के विरुद्ध हो गए। लेफ्टिनेंट जनरल के.एम. सेठ ने यह विश्लेषण किया है कि नक्सलियों ने इस अवसर का लाभ उठाया और सरकार की क्षमता को कम करने एवं संसदीय लोकतांत्रिक शासन प्रणाली को विफल करने के उद्देश्य से गरीबों और उपेक्षितों की सहायता की। इन सब चीजों और जन–जागरण तथा कुछ उन्नति एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के द्वारा जनता पर नियंत्रण स्थापित किया ।

दण्डकारण्य का इतिहास भुखमरी, निरादर और द्वेष भाव से भरा हुआ है। यह पूरी उदासीनता उपेक्षिता और शोषण से परिपूर्ण है। यह क्षेत्र प्रायः वर्षों से अकाल झेलता रहा इसीलिए यहां नदियों का अभाव है। इंद्रावती , प्रणुलता, गोदावरी, सबरी और कई छोटी नदी और नाले इस क्षेत्र से होकर गुजरते हैं। बहुत बार इस क्षेत्र में लोग पेड़ की छाल पर जिंदा रहे हैं। शिक्षा और अन्य करुणामूलक हस्तक्षेप के द्वारा मडिया गोंडों की क्षमता बढ़ाने के लिए आधुनिक भारत के सकारात्मक रवैये पर सामुदायिक नेतृत्व के लिए रमन मैगसायसे पदक विजेता डा. प्रकाश और मंदाकिनी आमटे को याद किया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि 30 वर्ष पहले जब वे महाराष्ट्र के दण्डकारण्य के जंगलों में पिकनिक पर गए थे तब मडिया गोंडों की दुर्दशा देखी थी। गोंडों अनपढ़ और कुपोषित थे तथा सूखे पत्ते एवं जिंदा चींटी खाकर जीवन यापन करते थे। कोढ़, तपेदिक और अन्य संक्रमित बीमारियां मौजूद थीं किंतु उपचार नहीं था ।

दंडकारण्य देश का बहुत ही अविकसित क्षेत्र है। यहां तक कि छत्तीसगढ़ राज्य के स्तर से भी यह क्षेत्र पिछड़ा है। छत्तीसगढ़ का साक्षरता दर 65.12% है जबकि दण्डकारण्य के एक जिले बस्तर की यह दर 45.48% है। इस जिले में केवल 1326 गांव का विद्युतीकरण हुआ है जो कि 8755 वर्ग कि.मी. का क्षेत्र है और केवल 64 प्राथमिक चिकित्सा इकाइयां हैं। ठीक इसी प्रकार दण्डकारण्य के दूसरे जिले दंतेवाड़ा का यह क्षेत्र 9046.29 वर्ग कि.मी. है जिसमें केवल 202 कि.

मी. राजकीय राजमार्ग है ,42 कि.मी. राष्ट्रीय राजमार्ग और 478 कि. मी. पक्का रोड है। इस जिले में 12 सरकारी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय और 16 सेकेंडरी स्कूल हैं। इन दो जिलों की तुलना में दण्डकारण्य के दूसरे जिलों जैसे बीजापुर, कांकेर, नारायणपुर का आर्थिक विकास सूचकांक और भी चौंकाने वाले हैं।

दंडकारण्य में नक्सली छापामारी

1979 में नक्सली नेता कोंडापल्ली सीतारमैया जिन्होंने 1980 में पीपुल्स वार ग्रुप की स्थापना की थी, ने यह निर्णय लिया कि दण्डकारण्य में एक गुरिल्ला अंचल बनाया जाए और जिसके लिए एक स्क्वाड (दस्ता) भेजा जाए। इसके अनुसरण में 1980 में पांच स्क्वाड भेजे गए। वे केवल प्रशासन के विरूद्ध लोगों को संगठित करने की योजना ही नहीं बनाएंगे अपितु कृषि एवं अन्य सामाजिक, आर्थिक क्रिया–कलापों में भी उनकी सहायता के भी उपाय करेंगे। वे कृषि के लिए झील खोदेंगे, हल चलाने, खाद और तंबाकू की खेती के बढ़ावे की कामचलाऊ व्यवस्था करेंगे। इस क्षेत्र में 1980 में नक्सलियों ने खेतिहर (किसान) संघर्ष शुरू करने और लोगों के संघर्ष के माध्यम से मूलभूत परिवर्तन करने पर ध्यान केंद्रित किया। नक्सली दण्डकारण्य में बस्तर के तरफ से नहीं अपितु गढ़चिरौली के हिस्से से आए। शनैःशनैः करीमनगर/आदिलाबाद क्रान्तिकारी अभियान संवर्ग(केडर) ने दण्डकारण्य में पैर फैलाना शुरू किया। दूसरी टीम दण्डकारण्य में वारंगल से बस्तर तक बीचों–बीच फैल गई। कुल 6 छोटे गुरिल्ला स्क्वाडों ने दण्डकारण्य में प्रवेश किया। 1980 में महाराष्ट्र पुलिस ने पहले कैडर को गढ़चिरौली में मारा था। अब तक इस क्षेत्र में वे अपने 350 कैडरों को खो चुके थे। पुलिस के अनुसार वास्तविक आंकड़े इससे अधिक थे।

नक्सलियों का कहना है कि 1995 तक दण्डकारण्य में 60,000 सदस्यों का एक संगठन था जो बढ़कर वर्तमान में लगभग डेढ़ लाख हो गया। 1989 से नक्सलियों ने दक्षिण से उत्तर की ओर बस्तर जिले में फैलना शुरू किया। उन्होंने अपना फैलाव हथियारों के हस्तक्षेप (बल) पर शुरू किया। इसके परिणाम स्वरूप 1990 से सुरक्षा बलों एवं नक्सलियों में सशस्त्र मुठभेड़ शरू हुई। नक्सलियों ने सुरक्षा बलों पर

विधिवत अटैक शुरू किए। नक्सलियों ने 1993 में सुरक्षा बलों पर हमला करने के लिए विशेष गुरिल्ला स्क्वाड का गठन किया जो 1995 में प्लाटून के रूप में उन्नत हुआ। 28 जुलाई, 2004 में पहली कंपनी बनाई गई। हथियारों एवं गोलाबारूद्व आपूर्ति के लिए पड़ोसी राज्य उड़ीसा का कोरापुट शस्त्रागार एक महत्वपूर्ण स्रोत रहा। नक्सलियों का कहना है कि 2 दिसंबर 2000 को पिपुल्स गुरिल्ला आर्मी (अब पी. एल.ओ.ए. कहा जाता है) बनने के पश्चात और भूतपूर्व पी.डब्ल्यू.पार्टी का विलय होने पर उन्होंने दण्डकारण्य में मूल क्षेत्र का टास्क निश्चित कर दिया और समस्त इलाके में पक्का सैन्य क्षेत्र बनना शुरू हुआ।

दण्डकारण्य नक्सली अभियान और उनके कांपैक्ट रिवयुलशनरी जोन के त्रि–आयामी चित्रण का केंद्र बिंदु है। इसलिए इसके इस इलाके में संगठित होने से उन्होंने लोकसंघर्ष के भविष्य के मूलस्वरूप की व्यवस्था की। उन्होंने क्रान्तिकारी लोक समिति (आर.पी.सी.) की प्रारम्भिक प्रशासनिक इकाई जो निम्नस्तर पर लोगों में नई शक्ति को उन्नत करेगी, को बनाने का प्रयास किया। नक्सलियों ने ग्रामीणों के साथ मासिक बैठकें कीं और अपने अभियान के लिए प्रत्येक परिवार से एक सदस्य लिया। उन्होंने टैक्सों की वसूली की, सभी के लिए न्याय, सुरक्षा, शिक्षा जैसे विभागों को उन्नत किया जिससे 'जनता ना सरकार' प्रशासनिक यूनिट में लोगों का विश्वास बढ़े। सी.पी.आई. (माओवादी) ने अपनी सेना का शस्त्र विंग उन्नत किया और हिंसक शोषणों का अंत कर दिया। इन्होंने प्रायः इसे बड़े तानाशाह लोगों से अलग क्षेत्र बनाने का दावा किया । पिछले 25 वर्षों से उनका संघर्ष जारी है किन्तु दण्डकारण्य के लोगों के जीवन में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। बल्कि इसके विपरीत जबरदस्त तंगहाली उत्पन हुई जैसा कि नक्सलियों ने इलाके में वास्तविक प्रगति के लिए कार्यशील इकाइयां विकसित नहीं कीं जबकि राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था शीर्ष पर थी। लोग जाल में फंस गए और सुरक्षा बलों और गुरिल्ला के बीच प्रचण्ड हिंसा से उम्मीद की किरण खो गई ।

भारत में नक्सलवाद के पनपने के लिए दण्डकारण्य अंचल काफी उचित माहौल देता है। काफी समय से क्षेत्र की हालत ज्यों की त्यों बनी रही और जिस चीज में तबदीली हुई वह थी तंगहाली और निराशा का बढ़ना। लोग अधिकांशतः अपरिष्कृत अस्तित्व में वन उत्पाद पर जीते

हैं। जनता अधिकांशतः अपने वास्तविक हकों से वंचित है और वन्य अधिकारियों, पुलिस और धनी व्यक्तियों द्वारा उन्हें परेशान किया जाता है। उन्हें अनेक छोटे–छोटे बनावटी मामलों के आधार पर वन्य नियमों को तोड़ने के लिए गिरफ्तार किया जाता है। प्रायः देखने में आया है कि व्यापारी और सूदखोर (ऋणदाता) वन्य उत्पाद जैसे लकड़ी, महुआ, शहद इत्यादि बहुत ही कम दाम पर खरीदकर ऊंचे दामों पर बेचना चाहते हैं। शराब का उपयोग अत्यधिक है इसीलिए लोगों का शोषण प्रभावशाली व्यक्तियों जैसे जिनके पास ताकत है और जो उन्हें धन और दिहाड़ी देते हैं के द्वारा किया जाता हैं। दण्डकारण्य में नक्सलियों ने स्थानीय सामन्त राजा ,जैसे गढ़चिरौली का विश्वेश्वर अतरम और बोड़हा मंजीह (महेंद्र कर्मा का पिता) को जनजातियों की स्थाई गरीबी के लिए दोषी माना जाता है।

क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए बिल्कुल उपयुक्त परिस्थितियों के अतिरिक्त भ्रष्ट वन्य कार्मिकों के विरुद्ध भावना जागृत हुई जिसके परिणामस्वरूप नक्सलियों में अभियान को बल मिला। उन्होंने सशस्त्र संघर्ष की कार्यसूची को प्रसारित किया और सरकार को उखाड़ फेंका। अन्य कारणों जैसे स्थानीय भद्र लोगों एवं गांव के बूढ़ों, पुजारी तथा चिकित्सकों का उत्पीड़न आदि से हालात बदतर हुए तथाकथित रूप से सभ्य तथा आधुनिक समाजों के कुचक्रों और शोषण से त्रस्त आम आदिवासी जीवन की प्रताड़नाओं के परिहार के रूप में इन इलाकों में नक्सलियों द्वारा 'जन–अदालत' का विकल्प प्रस्तुत किया गया, जिनकी त्वरित और सादी न्याय–व्यवस्था ने 'जन–अदालतों का प्रभाव बढ़ाया। ये 'कंगारू कोर्ट' अपराधियों की न्यायिक जांच और उन्हें दंड देने के लिए इस्तेमाल किए गए। इस तरह प्रभावित क्षेत्र में किसी भी मतभेद, के समापन व विरोधी आवाज को शांत करने के लिए इस तकनीक का नक्सलवादियों ने बुद्धिमत्ता से उपयोग किया।

फिर भी नक्सलवादियों ने अनेक सामाजिक मुद्दों जैसे पत्नी को पीटना, जबरन शादी और शराब के प्रचलन इत्यादि को उठाया। इससे उन्होंने औरतों का भरोसा जीता। संघर्ष में औरतों के शामिल हो जाने से अभियान को लंबे समय तक चलने के लिए बल मिला। बच्चों को स्थानीय क्रिया कलापों, व्यक्तियों को भाईचारा एवं मान देकर अभियान में शामिल किया। औरतों का विश्वास कायम रखने के लिए उन्होंने

विशेषकर स्वास्थ्य पर ध्यान केंद्रित किया। औरत जन समूह का विशेष ध्यान रखा गया और जबरन विवाह पर रोक लगा दी गई। इन सभी उपायों से सामाजिक, सांस्कृतिक प्रगति के लिए दो गुट ''आदिवासी किसान मजदूर संघ ''और क्रांतिकारी आदिवासी महिला संघ'' बने। क्षेत्र के 'क्रांतिकारी महिला संघ' ने काफी संघर्षों के बाद शादीशुदा महिलाओं द्वारा ब्लाउज पहनने के अधिकार को जीता। इस प्रकार से नक्सलियों ने अपनी जड़ों को मजबूत किया और अपने कैडर को सशस्त्र मिलिशिया उन्नत कर लिया ।

यद्यपि नक्सलियों के प्रभावों के विरोध और आंदोलनों के विस्थापितों अनिच्छुकों की बढ़ती संख्या के कारण सलवा जुडुम बैनर के नीचे विरोधी गुट का उदय हुआ। सरकार की सहायता से इस गुट का उदय एक महत्वपूर्ण मुद्दा था किन्तु यह नक्सलियों के गलत झांसों/चाल में फंस गया।

नक्सली कुछ समय तक चुप रहे और सोचते रहे कि इस पर कैसे प्रतिघात किया जाए। इस चुप्पी से सुरक्षा बलों और आदिवासियों के विरुद्ध अहिंसा को बल मिला। उनके द्वारा सलवा जुडुम को मारने का लक्ष्य आदिवासियों का आदिवासियों के विरूद्ध होना था। इससे नक्सलवादियों ने सर्वहारा वर्ग के विश्वास को खो दिया। देश में आतंकी हमलों के कारण नक्सलियों की दंतेवाड़ा में साख गिर गई। क्षेत्र में सभी वर्गों के लोगों को पता चला कि नक्सली उनकी क्रूरता और हिंसा के नशे में चूर हैं। नक्सलियों ने इस क्षेत्र में सैन्य कार्रवाई के लिए दण्डकारण्य स्पेशल जोनल समिति का गठन किया तथा सुरक्षा बलों के विरुद्व केंद्रित होकर कार्रवाई की।

नक्सलियों का डी.के.एस.जेड.सी. संगठन

दंडकारण्य विशेष अंचल समिति :

उत्तरी बस्तर दक्षिणी बस्तर पश्चिमी बस्तर अंबुजामद गढचिरोली मनपुर डरबा

डिवीजन	डिवीजन	डिवीजन	डिवीजन	डिवीजन	डिवीजन	डिवीजन
पामेड एरिया समिति	पामेड एरिया समिति	राष्ट्रीय पाक्र एरिया समिति	इंदरावती एरिया समिति	पामेड एरिया समिति	टिपागढ एरिया समिति	

दंडकारण्य में नक्सलियों की मुखौटा संस्थाएं : (Frontal Organisations)

- डी.के. आदिवासी मजदूर किसान संघ
- क्रांतिकारी आदिवासी महिला संगठन
- क्रांतिकारी किसान समिति
- महिला मुक्ति मंच
- चेतना नाट्य मंच
- क्रांतिकारी लोगों की समिति
- जंगल बचाओ समिति
- माओइस्ट विकास
- सिविल स्वतंत्रता के लिए लोगों की यूनियन

दण्डकारण्य में आदिवासियों द्वारा संघर्ष की ऐतिहासिक विरासत

दण्डकारण्य में स्थानीय आदिवासियों के संघर्ष के लंबे इतिहास को जानने के लिए यह आवश्यक है कि जब भी उन्होंने (आदिवासियों ने) यह महसूस किया है कि महत्वपूर्ण आदिवासियों के इलाके में उन्हें वंचित किया जा रहा है या उन पर कोई चीज थोपी जा रही है तो संघर्ष हुआ है। बीते समय में बस्तर विद्रोह का केंद्र रहा है। क्षेत्र में आदिवासियों का पहला विद्रोह 18वीं सदी में हलबा विद्रोह था।

हल्बा विद्रोह (1774–1779)

यह विद्रोह ब्रिटिश और मराठों के विरुद्ध था तथा 1774 से 1779 तक चला। यह विशेषतौर पर चालुक्य राजवंश को अस्वीकार करने के लिए चला। संगठित होकर प्रतिरोध करने का मुख्य कारण मूलतः अर्थव्यवस्था थी। वहां लंबे समय तक अकाल पड़े जिसके कारण भुखमरी और बहुत गरीबी थी। मराठा शासकों में मतभेद और साथ ही ईस्ट इंडिया कंपनी के घुसपैठियों का शोषण और उनकी तानाशाही शासन प्रणाली से गुस्साए लोगों ने उनके विरुद्ध विद्रोह किया। यद्यपि ब्रिटिशों ने बस्तर गणराज्य के शासकों की मदद की और मराठों ने हल्बा आदिवासियों को मारकर विद्रोह को कुचल दिया।

परालकोट विद्रोह (1825)

अबूझमाड़ के मारिया गोंड ने महसूस किया कि मराठा और ब्रिटिशों ने उनका शोषण किया है। उन्होंने महसूस किया कि उनकी पहचान और संस्कृति घुसपैठियों के हाथों, खतरे में है। इसलिए 1825 में जेंड सिंह के नेतृत्व में उन्होंने प्रतिरोध शुरू किया। उस समय उनकी नाराजगी का मुख्य कारण मराठा शासकों द्वारा बहुत भारी कर लगाना था। सबबालटन इतिहासज्ञों के अनुसार इस विद्रोह का सार तत्व दखलंदाजी और बस्तर का नियंत्रण था और इसका उद्देश्य बस्तर की पुनः स्वतंत्रता बहाल करना था।

तारापुर विद्रोह (1824–54)

सामाजिक क्षेत्रीय परंपराओं व लोगों के आर्थिक एवं राजनैतिक जीवन में क्षेत्रीय एंग्लो–मराठा शासकों की बढ़ती दखलंदाजी के कारण आदिवासी परेशान हो गए। यह एंग्लो मराठा शासन के दबाव में लगाए गए करों के विरोध में शुरू हुआ। स्थानीय दीवान अत्याचार और आदिवासियों के गुस्से को भड़काने का प्रतीक बन गए।

मारिया विद्रोह (प्रथम स्वतंत्रता संग्राम)

मारिया विद्रोह स्थानीय आदिवासियों का उनकी चाहत के विपरीत विश्वास एवं परंपरा में बलात् प्रवेश के बढ़ावे का प्रतिरोध था। यह अपनी परंपरा और भूमि बचाने के लिए कुछ–कुछ बचावी प्रतिरोध था। स्पष्टतः यह विद्रोह मानव बलिदानों में अमानवीय कृत्यों के भी प्रति था।

1857 का विद्रोह (प्रथम स्वतंत्रता संग्राम)

बस्तर के आदिवासी प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में बढ़–चढ़कर शामिल हुए। दक्षिण बस्तर का संघर्ष ध्रुवराव के नेतृत्व में गूंजा। ध्रुवराव मारिया आदिवासी था जो डोरला के नाम से जाना जाता था और आदिवासी व्यक्तियों द्वारा उसे सहारा दिया गया था।

आगे चलकर 1858 में गोंड लोगों ने ब्रिटिशों को कई लड़ाइयों में चुनौती दी। 1859 में दक्षिण बस्तर में आदिवासियों के साथ मिलकर ठेकेदारों को साल के पेड़ काटने से मना करने का विद्रोह साकार हुआ। इस जमींदारी के लोग कोआ और कोया कहलाते थे। यह

विद्रोह हैदराबाद में ब्रिटिशों द्वारा ठेकेदारों से ठेके पर पेड़ कटवाने हेतु लिए गए निर्णय के विरुद्ध था। ये ठेकेदार भी आदिवासियों के शोषण के लिए जिम्मेदार थे। 1859 में स्थानीय आदिवासियों ने यह निर्णय लिया कि एक भी पेड़ गिराने की अनुमति नहीं दी जाएगी। ब्रिटिशों ने इसे राज्य के प्रति चुनौती समझा और इसे कुचलने के लिए बल का प्रयोग किया।

1876 का मुरियो विद्रोह (बगावत) (murio revolt of 1876)

यह विद्रोह (बगावत) राजा द्वारा बस्तर राज्य के दीवान को हटाने से मना करने के बाद हुआ। यह दीवान 1867 में नियुक्त हुआ था और आदिवासियों के शोषण का प्रतीक बन गया। विद्रोही आदिवासी को जगदलपुर में 2 मार्च, 1876 को घेर लिया गया। उड़ीसा के शासक (रेजीडेंट) द्वारा भेजी गई मजबूत सेना ने विद्रोह को कुचल दिया ।

1910 का भुमका विद्रोह

बस्तर में यह विद्रोह पुनः संस्कृति के मुद्दे पर था। यह बहुत तेजी से फैला और इसने आधे से अधिक बस्तर को प्रभावित किया। ये दिन प्रतिदिन की जिंदगी में परंपराओं व दखलंदाजी के विरुद्ध प्रतिरोध कर रहे थे। इस विद्रोह के दौरान रानी सुबरान कनवर ने बस्तर में ब्रिटिश शासन समाप्त होने तथा आदिवासी शासन पुनः स्थापित हो जाने की उद्घोषणा कर दी। इस विद्रोह का सार तत्व भी यही था।

दंडकारण्य क्षेत्र की आदिवासी जनता का यह संघर्ष और प्रतिरोध 18वीं शताब्दी से चला आ रहा था जिसका अभिप्राय अत्यधिक आर्थिक शोषण और संस्कृति के दमन के विरुद्ध था। लोग बहुत गरीब थे किंतु जिंदगी की अपनी पद्धति को बहुत प्यार करते थे और स्वतंत्र प्रवृत्ति के थे। उनकी उन्नति का आश्वासन और उम्मीद हमेशा खोखले साबित हुए। स्वतंत्रता के बाद भी काफी लंबे समय तक यही हालत बनी रही है।

दंडकारण्य की उन्नति न होने के कारण

कुछ ही लोग जानते हैं कि 'दंडकारण्य विकास प्राधिकरण' की

स्थापना 1958 में इस आशय के साथ की गई थी कि प्रगतिशील कार्यों और पूर्वी पाकिस्तान के शरणार्थियों के पुनः स्थापना के द्वारा पूरे क्षेत्र का विकास किया जाएगा। इस परियोजना का दो राज्यों में 30,052 वर्ग कि.मी. का बहुत बड़ा इलाका था। जिसका लगभग आधा इलाका जंगलों से घिरा था। इस प्राधिकरण के माध्यम से निम्नलिखित क्षेत्रों में प्रगतिशील कार्यक्रम के तहत कुछ उपलब्धि हासिल करने का लक्ष्य रख गया :–

- मलेरिया उन्मूलन।
- संचार व्यवस्था में प्रगति।
- भूमि का संतुलित उपयोग, जिसमें वन रोपण, भूमि संरक्षण एवं संगठित और संतुलित अर्थव्यवस्था के साथ क्षेत्रों की उन्नति।
- जीविकोपयोगी खेतीबाड़ी का मूल्यांकन जो भूमि और सिंचाई सुविधा के अनुसार हो।
- बागवानी।
- सिंचाई सुविधा की व्यवस्था।
- रेशम उद्योग, पशुधन को बढ़ावा और नए मसालों का परिचय।
- खनिज और वन्य संसाधनों पर आधारित उद्योग लगाना।
- उचित बाजार व्यवस्था।
- स्कूल, अस्पताल और तकनीकी स्कूल के भवनों की व्यवस्था।

परियोजना 35000 विस्थापित परिवारों (26000 खेतिहर और 9000 गैर खेतिहर) और 6000 आदिवासी परिवारों की दो से तीन सौ गांवों में योजनाबद्ध तरीके से नई पुनर्वास कॉलोनियां बनाना था। डी. डी.ए. ने परियोजना के लिए लगभग 2,60,000 एकड़ भूमि अधिकृत की। प्रत्येक विस्थापित परिवार को 2–3 एकड़ सिंचाई वाली तथा 4–5 एकड़ गैर सिंचाई वाली भूमि देने की योजना बनाई गई। यह देश के अन्य हिस्सों की बजाय सबसे फायदेमंद योजना थी, क्योंकि पुनर्वासित लोगों को आमतौर पर तीन एकड़ से अधिक जमीन नहीं दी जानी थी।

परियोजना को लगभग 1966 में भारी झटका लगा जब काफी सारे विस्थापित पश्चिम बंगाल के लिए प्रस्थान कर गए। दूसरा प्रस्थान 1972 और 1978 के बीच हुआ। यद्यपि परियोजना का आदिवासी की तुलना में विस्थापितों ने अधिक लाभ उठाया। आदिवासियों

ने महसूस किया कि राज्य पुनर्स्थापितों की तरफदारी कर रहा है। राज्य उनके लिए दूरवर्ती वस्तु थी और उन्होंने बदला लेने के लिए पुनर्स्थापितों को ही निशाना बनाया। आदिवासियों के लिए बाद की भूमि परियोजना नाकाफी लगी। इस कारण आदिवासियों में बहुत असंतोष था। बाद में (दंड)कारण्य विकाष प्राधिकरण (डी.डी.ए.) ने आदिवासियों के कल्याणकारी कार्य दो राज्यों मध्यप्रदेश (अब छतीसगढ़) और उड़ीसा में शुरू किया। डी.डी.ए. ने शरणार्थियों के पुनर्वास के लिए किए गए कार्यों की अपेक्षा आदिवासियों के लिए कम काम किया जिससे स्थानीय जनता में रोष उत्पन्न हुआ।

इस प्रकार यह ऐतिहासिक तथ्य है कि दण्डाकारण्य सामाजिक आर्थिक उन्नति के दृष्टिकोण से बहुत ही उपेक्षित और कुशासित रहा है। 18 वीं शताबदी में उदासीन शासकों और दुष्ट प्रशासकों ने स्थानीय जनता विशेषकर आदिवासियों में शासन विरोधी भावना जागृत (उन्नत) कर दी। यहां तक कि राष्ट्र के स्वतंत्र होने के बाद भी यह क्षेत्र सामान्य तौर पर पिछड़ा और प्रगति के मामले में शून्य रहा। यह हैरान होने की बात नहीं है कि आदिवासियों ने अपने इलाके को भविष्य के युद्ध के लिए उन्नत किया और एक स्वतंत्र अंचल बना लिया। प्रशासन तब प्रभावी हुआ जब आदिवासियों की हिंसा के कारण सुरक्षा बलों का खून बहने लगा। हिंसा को समाप्त करने के लिए पुलिस कार्रवाई जरूरी थी किंतु उसी समय साथ–साथ उन्नति के कार्य करना कठिन था जिससे गरीबी का एक घृणित वर्तुल तैयार हुआ जिसने नक्सलवाद को और नक्सलवाद ने गरीबी को बढ़ावा दिया। इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि आर्थिक पिछड़ापन ही दण्डाकारण्य में हिंसा का कारण है। इस क्षेत्र में विद्रोह की भावना, दुर्व्यवहार और सांस्कृतिक तथा सामाजिक सहायता से उत्पन्न अवसरों की कमी के कारण उपजा है।

यह बताना आवश्यक नहीं है कि नक्सलियों ने इस क्षेत्र के लोगों की सांस्कृतिक और सामाजिक जिंदगी में घुसपैठ ही नहीं बल्कि जितना थोड़ा बहुत वे कर सकते थे आदिवासियों की आर्थिक प्रगति में सहायता भी की। इसलिए इस क्षेत्र के अलगाव और निर्धनता का समाधान लोगों के मन में सरकारी प्रयासों और शासन के प्रति विश्वास और भरोसा जगाकर ही किया जा सकता है। वर्तमान में सरकार इस

प्रकार के प्रयास सुरक्षा बलों के साथ मिलकर सिविल एक्शन कार्यक्रम के तहत करने का प्रयास कर रही है। प्रयासों का निचोड़ यह है कि किसी प्रकार की समस्याएं इतनी गंभीर नहीं हो जाएं कि मांग/आंदोलन एक गंभीर समस्या का रूप ले लें।

नक्सलियों की राजनैतिक एवं सैनिक रणनीति तथा जमीनी सच्चाइयां

नक्सलियों ने सी.पी.आई. (एम.–एल.) (पी.डब्लू.) एवं एम.सी.सी. आई के विलय एवं भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के सितंबर 2004 में गठन के बाद से अपने विभिन्न रणनीति, कार्यनीति, पार्टी संविधान, राजनैतिक प्रस्ताव इत्यादि के दस्तावेजों को तैयार करने के लिए केंद्रीय समिति (अस्थाई) में प्रयास किए तथा अनेक मसौदा–दस्तावेज तैयार किए। इन मसौदा–दस्तावेजों को बाद में एकीकृत कांग्रेस में मंजूर कराया गया। नक्सली साहित्य से इनके कार्यनीतियों के बारे में प्रामाणिक जानकारी मिलती है। फरवरी 2003 से लेकर सितंबर 2004 के मध्य भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के पूर्व दोनों घटकों के उच्चस्तरीय प्रतिनिधि मंडलों के बीच की द्विपाक्षिक बैठकों की श्रंखला में विमर्श के उपरांत पांच बुनियादी मसौदा दस्तावेज तैयार किए। संयुक्त केंद्रीय समिति ने इन पांच मसौदा–दस्तावेजों का अध्ययन किया तथा विवादास्पद मसलों पर आम सहमति बनाई। ये पांच मसौदे–दस्तावेज नक्सलियों की संपूर्ण युद्धनीति को रेखांकित करते हैं। ये दस्तावेज निम्नलिखित हैं :–

- राजनीतिक प्रस्ताव।
- भारतीय क्रांति की रणनीति और कार्यनीति।
- पार्टी संविधान।
- पार्टी कार्यक्रम।
- मार्क्सवादी – लेनिनवाद–माओवाद के चमकते लाल झंड़े को ऊंचा उठाओ।

9वीं कांग्रेस – एकता कांग्रेस 'जनवरी–फरवरी 2007' ने उपरोक्त पांचों बुनियादी मसौदा–दस्तावेजों को पारित किया। उपरोक्त दस्तावेजों में साम्राज्यवाद तथाकथित भारतीय शासन व्यवस्था की विस्तारवार की नीतियां, सर्वहारा वर्ग के शोषण से लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न देशों में वामपंथी आंदोलन की चर्चा की गई है तथा लेनिन, स्टालिन, माओ इत्यादि वामपंथी नेताओं के अनेक वक्तव्यों में उदाहरण लेकर सारी नीतियों को भारत की क्रांतिकारी परिस्थितियों में ढालते हुए शीघ्र ही लोकयुद्ध तेज कर क्रांति की प्रक्रिया को तीव्र करने का आह्वान है।

नक्सलियों के अनुसार,''कामरेड स्टालिन द्वारा बताए गए दिशा–निर्देशक उसूल को याद रखना महत्वपूर्ण है कि सिद्धांत को कार्यक्रम का मार्गदर्शन करना चाहिए, कार्यक्रम को रणनीति का मार्गदर्शन करना चाहिए और रणनीति को मार्गदर्शन करना चाहिए कार्यनीति का। मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद के सिद्धांत और उसके कार्यक्रम से प्राप्त सामग्री और उनसे निकले निष्कर्षों को आधार बनाकर ही रणनीति को सही–सही निर्धारित किया जा सकता है।''

(प्रस्तावना, भारतीय क्रांति की रणनीति और कार्यनीति, मसौदा–दस्तावेज 2004)

नक्सलियों ने ''रणनीति और कार्यनीति '' दस्तावेज में उनके अनुसार मौजूदा भारतीय समाज के ठोस वर्ग विश्लेषण के जरिए भारतीय जनवादी क्रांति की राजनीतिक रणनीति सामने आती है। भारतीय क्रांति में माओवादियों ने जो लक्ष्य रखे हैं वे निम्न हैं :–

- साम्राज्यवाद, सामंतवाद और दलाल व नौकरशाह से पोषित पूंजीवाद को उखाड़ फेंकना।
- क्रांति की बुनियादी प्रेरक शक्ति सर्वहारा वर्ग, किसान, खासकर भूमिहीन गरीब किसान है।
- भारत में नव जनवादी क्रांति लानी है।
- जनवादी क्रांति के दौरान कृषि क्रांतिकारी कार्यक्रम और इलाके के आधार पर सत्ता दखल का सवाल प्राथमिक बने रहेंगे।
- क्रांति की रणनीति समूचे देश में एक–सी होगी। हालांकि भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में खास परिस्थितियों के कारण भिन्न कार्यनीति लागू की जा सकती है।

- सैनिक रणनीति दीर्घकालीन लोकयुद्ध की है जैसा कामरेड माओ ने नियोजित किया था। युद्ध के जरिए पहले ग्रामीण क्षेत्रों में क्रांतिकारी आधार–क्षेत्रों की स्थापना की जाएगी। फिर शहरों की तरफ जाया जाएगा।
- क्रांति की रणनीति और कार्यनीति का अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति से समन्वय रखा जाएगा।
- हर देश की क्रांति विश्व सर्वहारा क्रांति का अभिन्न अंग है।

नक्सलियों की मानें तो मौजूदा भारतीय समाज एक प्रकार का नव औपनिवेशिक किस्म का अर्धसामंती समाज है। यह मान्यता इन तथ्यों पर है आधारित कि मुठ्ठीभर जमींदार व धनी किसान के हाथों में भूमि संकेंद्रित है तथा खेतिहर मजदूर शोषण का शिकार बन रहे हैं। सामंती शोषण का उदाहरण किसानों से सूदखोरी में लगा वर्ग है। यह विचारधारा उग्र वामपंथियों के भारतीय समाज में चार मुख्य अन्तरविरोध मानती है, जो निम्न हैं :–

- साम्राज्यवाद और भारतीय जनता के बीच का अंतरविरोध।
- सामंतवाद और व्यापक जनता के बीच का अंतरविरोध।
- पूंजी और श्रम के बीच का अंतरविरोध।
- शासक वर्गों के बीच का अंदरूनी अंतरविरोध।

उपरोक्त मान्यताओं के आधार पर सर्वप्रथम पहले दोनों अंतरविरोधों को दूर करने के लिए दीर्घकालीन नीति अपनाने की आवश्यकता को रेखांकित किया गया। जनवादी क्रांति के लिए तीन वर्गों को प्रहार के निशाने पर बताया। ये वर्ग है:–

(1) साम्राज्यवाद (Imperialism)।
(2) दलाल नौकरशाह पूंजीवाद (Comprador bureaucrat capitalism)।
(3) सामंतवाद (Feudalism)।

भारतीय समाज का वर्ग विश्लेषण करते हुए नक्सलियों ने हरेक वर्ग की क्रांति में भागीदारिता की संभावनाओं की कार्यनीति के बारे में भी चर्चा की गई। विभिन्न वर्ग निम्नलिखित हैं:–

जमींदार वर्ग (Landlord class) :– यह वह वर्ग है जिसके पास काफी जमीन होती है तथा उत्पादन के साधन होते हैं। जमींदार ग्रामीण क्षेत्रों में असीमित सामाजिक और राजनैतिक सत्ता का उपभोग करते हैं। यह खेतिहर मजदूरों का शोषण करनेवाला वर्ग है तथा सत्ता वर्ग से स्वार्थों को साधने के लिए जुड़ा रहता है। नक्सली इस वर्ग को

किसानों के और समूची जनता का दुश्मन मानते हैं। इस वर्ग द्वारा गरीबों के शोषण का मुख्य आधार भूमि होती है जो कि इनके पास इनकी आवश्यकताओं से काफी अधिक होती है। ऐसे वर्ग द्वारा किसानों का शोषण करने तथा उनकी मांगों को दबाने के लिए अपने निजी लठैतों/सशस्त्र दलों द्वारा बल का भी प्रयोग किया जाता है।

दलाल नौकरशाह पूंजीपति वर्ग (Comprador, Bureaucrat Bourgeoisie)

यह वर्ग पूंजीपतियों के लिए कार्य करता है तथा सत्ता की शक्तियों का इस्तेमाल विशेष वर्ग के लिए करता है। सत्ता की नजदीकी के कारण सारे भ्रष्ट तरीकों को यह वर्ग जन्म देता है। यह वर्ग देश के अर्थनीति को प्रभावित करने की क्षमता रखता है तथा इस वर्ग की कोशिश निजी पूंजी इकट्ठा करने की होती है। स्वतंत्रता से पहले यह वर्ग अंग्रेजों से मिलकर देश का प्रत्येक भांति दोहन करता रहा। शोषित वर्गों के पिछड़ेपन के लिए इस वर्ग का स्वार्थ एवं लालच ही मुख्यतः जिम्मेदार है।

नक्सलियों के निशाने पर उपरोक्त दोनों वर्ग हैं जिनका विनाश करना क्रांति का मुख्य लक्ष्य है।

अन्य वर्ग जो क्रांति की प्रेरक शक्तियां हैं उनमें सर्वहारा वर्ग, भूमिहीन और गरीब किसान तथा अर्ध सर्वहारा वर्ग प्रमुख है। अन्य वर्ग मध्यम किसान, धनी किसान, निम्न पूंजीपति वर्ग एवं लंपट सर्वहारा वर्ग की क्रांति के विभिन्न चरणों में विभिन्न प्रकार की भूमिकाएं हैं तथा इन वर्गों को इसकी उपयोगिता के परिप्रेक्ष्य में शामिल करना चाहिए। इन वर्गों में कौन–कौन शामिल हैं इसको भी नक्सलियों ने विस्तार से बताया है।

सर्वहारा वर्ग (Proletariat)

सर्वहारा वर्ग उत्पादन के सभी साधनों से बेदखल कर दिया गया एक ऐसा वर्ग है जो उत्पादन के साधनों के पूंजीवादी मालिकों के यहां अपनी श्रम शक्ति बेचने को बाध्य है। औद्योगिक सर्वहारा वर्ग के अलावा यहां ग्रामीण सर्वहारा वर्ग की भी भारी संख्या मौजूद है। जिसमें खेतिहर मजदूर मुख्यतः चाय, काफी व नारियल और सब्जी इत्यादि उत्पादन के बड़े ठिकानों पर कार्य करते हैं।

भूमिहीन और गरीब किसान (Landless and poor Peasants):-

इस वर्ग के पास अपनी भूमि या कृषि औजार नहीं होते। ये पूरी तरह या मुख्यतः अपनी श्रम शक्ति को बेचकर अपना गुजारा करते हैं। यह ग्रामीण आबादी का लगभग 65–70 प्रतिशत है। नक्सली भारतीय समाज में मौजूद सभी वर्गों में से गरीब और भूमिहीन किसान को क्रांति की मुख्य प्रेरक शक्ति कहते हैं और सर्वहारा वर्ग के सबसे दृढ संश्रयकारी है।

अर्ध सर्वहारा वर्ग (The Semi-Proletariat)

भारतीय माओवादी खेतिहर मजदूरों और गरीब किसानों को अर्ध सर्वहारा वर्ग का मुख्य घटक कहता है। जिनके पास सामान्य उपकरण होते हैं मसलन, छोटे दस्तकार, बढ़ई राजमिस्त्री और कारीगर मिस्त्री जैसे तबके अर्ध–सर्वहारा वर्ग के हिस्से हैं। इनके अलावा हॉकर, रिक्शा चालक, ऑटो रिक्शा चलानेवाले, निर्माण कार्यों में लगे अस्थाई ग्रामीण मजदूर, घरेलू नौकर और ऐसे ही कार्यों में लगे दैनिक मजदूरी करनेवाले तबके भी हैं। ये निरंतर सर्वहारा वर्ग के हिस्से बनते जा रहे हैं।

मध्यम किसान (Middle Peasant) :–

अधिकांश मध्यम किसानों के पास उनकी अपनी जमीन होती है तथा पर्याप्त कृषि औजार भी होते हैं। मध्यम किसानों की समूची आय या उसका ज्यादा हिस्सा उनके अपने श्रम से प्राप्त होता है। आमतौर पर मध्यम किसान दूसरों का शोषण नहीं करता और अपनी श्रमशक्ति भी नहीं बेचता किंतु सामंतवाद, साम्राज्यवाद और दलाल, नौकरशाह, पूंजीवाद के शोषण का शिकार होता है। अतः विरोधी संघर्ष में सक्रिय भूमिका निभाता है। मध्यम किसानों का सकारात्मक या नकारात्मक रूख क्रांति में विजय या पराजय का निर्धारण करनेवाले पहलुओं में से एक है और कृषि क्रांति के बाद तो यह बात और भी खासतौर पर लागू होगी जबकि ये ग्रामीण आबादी की बहुसंख्यक बन जाएगी।

धनी किसान (Rich Peasant)

इस वर्ग के पास काफी जमीन होती है। कुछ के पास अपनी

जमीन होती है और बाकी ये लीज पर लेते हैं। खेती के द्वारा ये अतिरिक्त उत्पादन कर पाते हैं तथा कुछ धन अर्जित करते हैं। इस वर्ग द्वारा गरीब किसानों के शोषण के वर्तमान असामंती तरीके भी अपनाए जाते हैं पर नक्सलियों के अनुसार अपनी वर्गीय स्थिति के अनुरूप बढ़ते राजकीय दमन के सम्मुख इनमें समझौता करने की प्रवृत्ति पाई जाती है। आमतौर पर कृषि क्रांतिकारी संघर्षों में वे तटस्थ बने रहते हैं। एक वर्ग के रूप में वे क्रांति के ढुलमुल प्रंश्रयकारी ही हैं। माओवादी मानते हैं इस वर्ग का एक हिस्सा उनके साथ जा सकता है तथा दूसरा तटस्थ रह सकता है।

निम्न पूंजीपति वर्ग (Petty Bourgeoisie)

छोटे पैमाने के उत्पादन में लगे लोग, छोटे व्यापारी, छात्र स्कूलों के शिक्षक, क्लक्र, अराजपत्रित अधिकारी, इंजीनियर, डाक्टर, वकील और निचले स्तर के बुद्धिजीवी जिनकी आय अधिक से अधिक मध्यम वर्ग जैसी है निम्न पूंजीपति वर्ग में आते हैं। नक्सलियों के अनुसार निम्न पूंजीपति वर्ग के निम्नलिखित विभिन्न तबके हैं –

- बुद्धिजीवी और छात्र
- छोटे दुकानदार
- कारीगर
- पेशेवर लोग

माओवादी निम्न पूंजीपति वर्ग को क्रांति की निर्भर योग्य प्रेरक शक्ति मानते हैं। इनकी कमजोरी यह है कि इनमें से कुछ आसानी से पूंजीपतियों के प्रभाव में आ जाते हैं, अतः माओवादी इस बात पर जोर देते हैं कि उनके बीच निरंतर क्रांतिकारी प्रचार कार्यों और संगठनात्मक कार्यों को जारी रखा जाए।

राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग (National Bourgeoisie)

माओवादी मंझोले और छोटे पूंजीपतियों को इस वर्ग में लेते हैं। उनके अनुसार अपनी आर्थिक स्थिति के चलते ही इस वर्ग का चरित्र दुहरा होता है तथा यह वर्ग राजनीतिक रूप से अत्यंत कमजोर और ढुलमुल वर्ग है। यह वर्ग भी साम्राज्यवाद और दलाल नौकरशाह पूंजीवाद के उत्पीड़न का शिकार है। माओवादियों का विचार है कि, ''राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के दुहरे चरित्र से साफ जाहिर है कि किसी

निश्चित समय में किसी निश्चित हद तक यह साम्राज्यवाद और भारतीय शासक वर्गों के खिलाफ क्रांति में हिस्सा ले सकता है, लेकिन किसी दूसरे समय में वर्ग का दुमछल्ला बन जाने और प्रतिक्रांति में भाग लेने का खतरा मौजूद है।''

लंपट सर्वहारा (The Lumpen Proletariat)

यह वर्ग उन लोगों का है जो सामाजिक उत्पादन में भाग लेने के तमाम अवसरों से वंचित है। यह बेरोजगारों की एक बड़ी फौज है। वर्गीय समाज में अपनी स्थिति के चलते लंपट सर्वहारा के अंदर सामाजिक व्यवस्था के प्रति घृणा मौजूद रहती है। अतः क्रांति का नारा उनके अंदर सरगरमी पैदा करता है। लेकिन इनमें रचनात्मक गुणों का अभाव होता है और ये निर्माण के बजाए विध्वंस की ओर उन्मुख होते हैं। इनमें अनुशासन के प्रति अरुचि रहती है अतः पार्टी में भरती के समय सावधानी बरतने की जरूरत है।

उपरोक्त क्रांति के प्रेरक वर्गों से क्रांति लाकर नक्सली तथा कथित अर्ध–औपनिवेशिक–अर्धसामंती भारतीय समाज को एक स्वाधीन, आत्मनिर्भर और जनवादी समाज में रूपांतरित करना चाहता है और फिर उसके बाद समाजवादी समाज का निर्माण कर साम्यवादी समाज की स्थापना। इस दिशा में लोक जनवाद की तीन बुनियादी कार्यनीति है –

- लोक जनवादी रणनीति
- लोक जनवादी अर्थनीति
- लोक जनवादी संस्कृति

सशस्त्र क्रांति : दीर्घकालीन युद्धनीति (Protracted people's war)

क्रांति के द्वारा सत्ता पर काबिज होना माओवादियों के आंदोलन का केंद्रीय लक्ष्य है। माओ की नीति – '' सशस्त्र बल द्वारा राजसत्ता छीनना, युद्ध द्वारा मसले को सुलझाना क्रांति का केंद्रीय कार्य और सर्वोच्य रूप है'' – पर लोकयुद्ध को दीर्घकालीन समय में क्रमशः करते हुए शक्तिशाली राज्य को हराने की रणनीति है। वस्तुतः उग्र वामपंथी इतिहास में लेनिन द्वारा रूस में 1918 की अक्टूबर क्रांति एवं माओ द्वारा चीन में 1949 की क्रांति के दो रास्ते मौजूद हैं। रूसी क्रांति

में उग्रपंथियों ने शहरी केंद्रों तथा सत्ता के मजबूत गढ़ों पर राज्य मशीनरी को निष्क्रिय किया तथा शहरी क्षेत्रों में क्रांतिकारी राज्य में सत्ता संचालन केंद्रो की स्थापना करने के बाद देहाती क्षेत्रों में दुश्मन की राज्य मशीनरी को ध्वस्त करने के लिए क्रमवार लड़ाई को आगे बढ़ाया। कहने का तात्पर्य यह है कि रूस की अक्टूबर क्रांति के अनुसार – ''पहले रणनीतिक रूप से तुरंत निर्णय की लड़ाई के जरिए शहरी क्षेत्र पर कब्जा करो, उन शहरी क्षेत्र में क्रांतिकारी सत्ता की स्थापना करो और उसके बाद देहाती क्षेत्रों पर कब्जा जमा लो। इस तरह बगावत के जरिए समूचे देश की राज्य–व्यवस्था में क्रांतिकारी सत्ता को स्थापित करो तथा जनता की क्रांतिकारी राजनीतिक सत्ता की स्थापना करो।''

चीन की क्रांति में अलग प्रकार की रणनीति अपनाई गई थी। रूस में मजदूर वर्ग अधिक थे तथा उद्योगों के कारण सामाजिक एवं आर्थिक हालात अलग थे जबकि चीन में अर्ध सामंती समाज था तथा किसानों की संख्या ज्यादा थी। औद्योगीकरण न के बराबर था तथा जनता के पास किसी भी प्रकार के अधिकारों की कमी थी। अधिकतर लोग देहाती क्षेत्रों में ही रहते थे। अतः क्रांतिकारियों ने पिछड़े क्षेत्रों को अपनों कामकाज का मुख्य केंद्र बनाया। ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तृत जन सेना और जनमिलिशिया का निर्माण किया तथा देहाती क्षेत्रों में मुक्त इलाकों में छोटे–छोटे अनेक केंद्र स्थापित करने के बाद शहरों को घेरकर उन पर अंतिम रूप से कब्जा कर राजनीतिक सत्ता व राज्य व्यवस्था की स्थापना की रणनीति अपनाई गई।

भारतीय माओवादियों के अनुसार भारतीय समाज में क्रांति के चीनी मॉडल को अपनाना बेहतर है। साथ ही देश की राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थिति यह भी निर्धारित करती है कि क्रांति का रास्ता दीर्घकालीन लोकयुद्ध का है। नक्सली कहते हैं दीर्घकालीन लोकयुद्ध को भारत में तीन रणनीतिक चरणों से गुजरना होगा

(1) रणनीतिक रक्षा का चरण (Stage of strategic defensive)
(2) रणनीतिक ठहराव का चरण (Stage of strategic statemenle)
(3) रणनीतिक प्रत्याक्रमण का चरण (Stage of strategic offensive)

नक्सली अपने अंतिम लक्ष्य को पाने के लिए तरतीबवार युद्धनीति का अनुसरण करने की विचारधारा रखते हैं। भारतीय परिस्थिति में

कृषि को नव जनवादी क्रांति की धुरी मानते हैं। नक्सली अपने संगठन एवं सेना को मजबूत करने हेतु निम्नलिखित पांच चरणों का अनुसरण करते हैं –

- रणनीतिक क्षेत्र
- लाल प्रतिरोध क्षेत्र
- छापामार क्षेत्र
- आधार क्षेत्र
- मुक्त क्षेत्र

रणनीतिक क्षेत्र से आधार क्षेत्र तक के सफर की शुरुआत वे पिछड़े क्षेत्रों से करना चाहते हैं क्योंकि अपेक्षाकृत पिछड़े क्षेत्रों में ऐसा करना है। ''––क्रांतिकारी युद्ध को उन क्षेत्रों में शुरू करना पड़ता है जो अपेक्षाकृत रूप से ज्यादा पिछड़े हैं, जहां सामाजिक अंतरविरोध तीखे हों, जहां राज्य की सत्ता व प्राधिकार अपेक्षाकृत रूप से कमजोर है और जहां का धरातल छापामार युद्ध को जारी रखने के लिए ज्यादा अनुकूल है।'' (क्रांति की रणनीति और कार्यनीति)।

रणनीतिक क्षेत्र (Strategic Area/Perspective Zone)

नक्सली इस प्रकार के स्थानों को चुनते हैं जहां की परिस्थितियां लोकयुद्ध को आगे बढ़ाने तथा राजनीतिक सत्ता पर कब्जा करने का आधार स्तंभ बने। यह क्षेत्र पहाड़ी धरातल वाले अर्धजंगली क्षेत्र होते हैं जहां किसानों की विशाल संख्या तथा अनेक सामाजिक, आर्थिक अंतर विरोध रहता है। लोगों की स्थिति अच्छी नहीं होती तथा जीवन स्तर काफी खराब होता है। आम लोगों में असंतोष की भावना हो तथा प्रशासन की कमियों के कारण नक्सलवाद के पनपने के लिए अच्छे जमीनी हालात हों। नक्सली इन क्षेत्रों को बड़ी सावधानी से चुनते हैं तथा यह एक बहुत बड़ा क्षेत्र होता है जिसमें परिस्थितियों के आधार पर लाल प्रतिरोध क्षेत्र कायम किया जाता है।

लाल प्रतिरोध क्षेत्र (Red Resistance Zone)

रणनीतिक क्षेत्रों को चिह्नित करने के बाद नक्सली उस क्षेत्र में लोगों की समस्याओं से जुड़कर उनके समाधान हेतु साथ मिलकर प्रशासन के खिलाफ आंदोलन करते हैं। आंदोलन की तीव्रता क्रमिक तौर पर बढ़ाते हैं जो पेटीशन, प्रोस्टेट से होते हुए हिंसक होता चला

जाता है। इस कड़ी में नक्सली अपने मुखौटे संगठनों से आंदोलन की कमान को धीरे–धीरे अपने स्थानीय ''कोर ग्रुप'' को सौंप देते हैं। यह ग्रुप प्रतिरोध की तीव्रता एवं प्रभाव को बढ़ाने के लिए कैडरों की भर्ती करता है। साथ ही योजना तथा अपनी नीतियों को जबरन अपनाना शुरू कर देता है। किसानों के लिए नारा होता है – ''जोतने वाले को जमीन और क्रांतिकारी किसान कमेरियों के हाथों में हुकूमत''।

छापामार क्षेत्र (Gureilla Zone)

लाल प्रतिरोध क्षेत्र को अपनी सैन्य कार्रवाइयों से नक्सली इसे छापामार क्षेत्र में विकसित करते हैं जहां ये पुलिस तथा अर्धसैनिक बलों की टुकड़ियों पर घात लगा कर हमला करते हैं। इस प्रकार के गुरिल्ला युद्ध में उनकी नीति होती है कि जहां भी शत्रु कमजोर हों उन्हें क्षति पहुंचाई जाए तथा जब शत्रु मजबूत हों तो वहां से भाग खड़े हों। इन क्षेत्रों में भू–संरचना तथा अर्धजंगली क्षेत्र का लाभ उठाकर छापामार–युद्ध को जनता के सहयोग या जबरन सहयोग सुनिश्चित कर लंबे समय तक चलाने की नीति होती है। युद्धनीति ये होती है कि दीर्घकालिक परिपेक्ष्य लेकर इन क्षेत्रों को आधार क्षेत्रों में रूपांतरित किया जा सके। चूंकि क्षेत्र में यातायात तथा संचार व्यवस्था भी काफी पिछड़ी होती है इसलिए पुलिस को शुरूआती तौर पर काफी क्षति होती है और इस क्षति को कैडरों का मनोबल बढ़ाने में इस्तेमाल कर नक्सली बहुत हद तक एक सैन्य नेटवक्र स्थापित करने में सफल भी होते हैं। उनकी क्रांति के 'स्कीम' में यह एक महत्वपूर्ण चरण है।

आधार क्षेत्र (Base Area)

दीर्घकालीन लोकयुद्ध (Protracted People's War) को बढ़ाने के लिए नक्सली संगठित जनसेना की स्थापना तथा विकास पर केंद्रित होकर क्रांति के स्तर को राजनीतिक लाभ तथा सत्ता हथियाने की दिशा में बढ़ाते हैं। छापामार युद्ध के जरिए जन सेना और ग्रामीण लाल आधार इलाकों के निर्माण कार्य को महत्व देते हुए दुश्मन (यानी की पुलिस एवं सरकार) की शक्तियों को नष्ट करने के प्रयास करते हैं। आधार क्षेत्र इनके गहन सैनिक एवं राजनीतिक क्रियाकलापों का गढ़ होता है। यहां संघर्ष ज्यादा हिंसक एवं जटिल होता है तथाकथित

कृषि क्रांति का सबसे हिंसक रूप आधार क्षेत्रों में होता है। इस स्वर पर नक्सली अपने युद्ध को Gureilla War Fare (छापामार युद्ध) से Mobile Warfare (चलायमान युद्ध) में भी परिवर्तन का प्रयोग करते हैं। प्रशासन इनसे निपटने में असहाय नजर आता है या इस प्रकार की छवि नक्सलियों द्वारा बनाई जाती है जिससे देश की आम जनता में भय एवं आतंक की मानसिकता पनपने लगती है। सरकार को अनेक प्रकार के विरोध एवं चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

मुक्त क्षेत्र

अधिकार क्षेत्रों के कुछ हिस्सों या संपूर्ण हिस्सों में पूर्णतः राजनीतिक सत्ता को कब्जे में किए जानेवाले क्षेत्रों को नक्सली 'मुक्त क्षेत्र' कहते हैं तथाकथित तौर पर नक्सली यहां सरकार की अनुपस्थिति तथा अपनी सरकार की उपस्थिति को प्रसारित करते हैं। दंडकारण्य के अबुझमांड नक्सलियों के अनुसार उनका ''मुक्त क्षेत्र'' (Liberated Zone) है। लाल प्रतिरोध की ये पराकाष्ठा है जहां क्रांतिकारी जन समिति का अधिकार होता है। आधार क्षेत्रों को मुक्त क्षेत्रों में रूपांतरित करने के लिए जनता पर निम्नलिखित क्रियाकलापों पर जोर रहता है –

- प्राधिकार को उखाड़ फेंकना।
- सशस्त्र जनमिलिशिया को सशक्त करना।
- सरकार को टैक्स देना बंद करना।
- वनकर्मी, पुलिस तथा नौकरशाहों के प्रवेश तथा हस्तक्षेप पर पूर्णतः पाबंदी।

नक्सलियों के अनुसार ''एक मुक्त क्षेत्र वह विशेष क्षेत्र होता है जहां शत्रु का पूरी तरह सफाया हो चुका है और जहां क्रांतिकारी जन सरकार का शासन स्थापित हो चुका होता है। यह एक केंद्रीकृत कमान के तहत अच्छी प्रकार से प्रशिक्षित सेना की देख–रेख में होता है।

नक्सलियों ने इन युद्ध स्वरूपों को अपने तरीके से परिभाषित किया है–

छापामार युद्ध – यह युद्ध का ऐसा तरीका है जिसके जरिए हथियारों, सेनाओं के प्रशिक्षण और सैन्य फारमेशनों के क्षेत्र में कमजोर पक्ष शत्रु की शक्ति से अपनी सुरक्षा सुनिश्चित करता है तथा

हमला करने और हट जाने एवं छोटी–छोटी दुश्मन की टुकड़ियों का खत्म कर देने के तौर–तरीकों के जरिए अपने दुश्मन पर प्रहार करता है। चौकसी, चुस्ती–फुर्ती, गतिशीलता और कम से कम समय में अचानक प्रहार छापामार युद्ध के रणनीतिक बिंदु हैं। छापामार युद्ध में नक्सलियों की योजना होती है, ''दुश्मन और धरातल की स्थितियों पर अपनी पकड़ बनाए रखते हुए शत्रु पर बिजली की गति से प्रहार करना और पलक झपकते ही पीछे हट जाना जिसमें पूरब में दिखावा करके पश्चिम में हमला करने और शत्रु की नाजुक जगहों को चुन कर वहां पर हमला करने का तरीका अपनाया जाता है।''

छापामार युद्ध में आपूर्ति व्यवस्था पूरी तरह विकेंद्रित होगी और सभी इकाइयों को आत्म निर्भर रहना होगा।

चलायमान युद्ध

''चलायमान युद्ध एक ऐसा युद्ध है जिसे नियमित सेना, अस्थिर युद्ध पंक्तियों वाले विस्तीर्ण क्षेत्र में अपनी शक्तियों को केंद्रित करते हुए वहां उसे तैनात करते हुए और एक जगह से दूसरी जगह उनका स्थान बदलते हुए संचालित करती है। इसमें इतनी चलायमानता रखनी होगी कि यह दुश्मन के अपेक्षाकृत रूप से नाजुक स्थानों पर हमला कर सके, तुरंत ही वहां से हट सके और परिस्थितियों के बदलते जाने के साथ–साथ अपनी कार्यनीति को बदलते जाने में समर्थ हो जाए।'' (नक्सली साहित्य से)

चलायमान युद्ध में दुश्मन की फौज का विनाश करना तथा अनुकूल परिस्थिति निकल जाने पर तुरन्त उस जगह को छोड़ने की नीति होती है। इसमें लड़ाई के क्षेत्र से तुरंत मूव कर नए क्षेत्र में पहुंचकर लड़ाई छेड़ देना उद्देश्य होता है। इससे सुरक्षा बल किसी भी विशेष क्षेत्र में केंद्रीकृत होकर लड़ने में विफल रहे।

नक्सलियों के अनुसार छापामार युद्ध और चलायमान युद्ध में महत्वपूर्ण अंतर यह है कि चलायमान युद्ध में सेनाओं का बड़ी संख्या में केंद्रीकरण किया जाता है। चलायमान युद्ध चला रही फौज ऐसे नियमित सैनिकों की फौज होगी, जिनमें अपेक्षाकृत रूप से ज्यादा ऊंचे स्तर की राजनैतिक चेतना होगी, ज्यादा अनुशासन होगा और जिन्हें उच्च सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त होगा। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह

युद्ध–पद्धति मनोवैज्ञानिक तौर पर अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करती है।

मोर्चाबंद युद्ध

नक्सली अपनी लड़ाई के अंतिम चरण में मोर्चाबंद्ध युद्ध यानि आमने–सामने का युद्ध करेंगे जिसमें किसी एक इलाके पर कब्जा करने को बरकरार रखने के लिए सेना की पंक्तियां होगी। इस स्तर की लड़ाई को नक्सली अपनी अंतिम जीत का अनिवार्य हिस्सा मानते हैं।

संयुक्त मोर्चा

संयुक्त मोर्चा को नक्सली तीसरा जादुई हथियार मानते है। इनमें चार वर्गों मजदूर वर्ग, किसान, शहरी निम्न पूंजीपति वर्ग और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग को संगठित करके, उनके संघर्षों को सही नेतृत्व देकर राजसत्ता पर कब्जा किया जा सकता है। यह लड़ाई जमीन पर सैनिकों के वर्चस्व की है तथा सामान्यतः दो दुश्मन देशों के बीच लड़ाई के तर्ज पर है।

संयुक्त मोर्चा, सशस्त्र संघर्ष बढ़ाने का एक औजार है तथा जनसमुदाय की भावनाओं को उभारने का कार्य करने के लिए सबसे उपादेय है। यह मोर्चा नक्सलियों के अनुसार जनता को जागृत करने का कार्य करता है।

पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी की भूमिका

वर्तमान नक्सली सिद्धांतकारों ने व्यवस्था–परिवर्तन के माओ दर्शन को आगे बढ़ाते हुए, गुरिल्ला–युद्ध में इलाके की आम जनता की अधिकाधिक भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु निर्देशित किया। इस हेतु 'मुक्त क्षेत्रों' की तथाकथित रूप से 'मुक्त जनता' के सक्रिय सहयोग से जनयुद्ध को तीव्रतर करने और उसे नए इलाकों में प्रसारित करने की बात कहीं। इस सामरिक नीति को उन्होंने 'पीपुल्स गुरिल्ला आर्मी' को 'पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी' में रूपांतरित करने की प्रक्रिया माना।

पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी का उद्देश्य

अवामी–जंग (माओवादियों की प्रतिबंधित सैनिक पत्रिका के

जनवरी–जून 2008 के संस्करण के अनुसार 'भारत देश में पी.ए.जी.ए' भारतीय कम्युनिस्ट (माओवादी) के नेतृत्व में साम्राज्यवाद, सामन्त वर्ग और नौकरशाही, दलाल, पूंजीपति वर्ग को दीर्घकालीन जनयुद्ध द्वारा खत्म करके नए जनवादी राज्य की स्थापना करने के तात्कालिक लक्ष्य को लेकर काम कर रही है। हमारे केंद्रीय समिति के मार्गदर्शन में, हमारे एकता कांग्रेस – 9वें कांग्रेस द्वारा सौंपे गए राजनैतिक और सैनिक कर्तव्यों को पूरा करने के लिए सेन्ट्रल मिलिट्री कमीशन के नेतृत्व में पिछले एक वर्ष में पी.एल.जी.ए. के सैन्य हमलों ने अत्यधिक बहादुरी और दृढ़ संकल्प के साथ लड़ते हुए, दुश्मन के सैन्य बलों को नुकसान पहुंचाते हुए कड़ी मेहनत करते हुए गुरिल्ला–युद्ध को तीव्रतर किया है।

पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी की तैयारी

हमारे जन युद्ध को उन्नत स्तर पर ले जाने के मामले में हमें अवश्य ही पी.एल.जी.ए. के प्रधान बलों और द्वितीय बलों को परिमाणात्मक और गुणात्मक रूप से विकसित करते हुए उन्हें हर प्रकार से मजबूत और चुस्त–दुरूस्त रहने लायक बनाना होगा। इसके लिए पी.एल.जी. ए. के जनता के साथ एकीकृत होते हुए उनको संगठित करना और उत्पादन में भाग लेने जैसे कार्यों को करना चाहिए। उसके द्वारा जनता चेतना को और अधिक विकसित करते हुए और भी उन्नत स्तर के जन राज्य के सत्ता के अंगों की स्थापना करते हुए जनता की हिस्सेदारी के साथ उनकी रक्षा पी.एल.जी.ए. कर सकेगी।

पार्टी के महासचिव मुथ्पाला लक्ष्मण उर्फ गणपति का कहना है – ''जब हमने संघर्ष शुरू किया था तो यह जमीन और आजीविका जैसे जन–मुद्दों तथा सामंती व साम्राज्यवादी शोषण व दमन से मुक्ति पाने का एक शांतिपूर्ण आंदोलन था, किंतु अब यह शांतिपूर्ण मार्च, रैलियों, धरनों, भूख–हड़ताल और आम हड़तालों की अनदेखी हो गई या उन्हें कुचलने की कोशिश की गई तो लोगों को हिंसक तरीका अपनाने को मजबूर होना पड़ा। माओवादी इस बात पर पूरा भरोसा रखते हैं कि राजनैतिक सत्ता बंदूक की नाल से निकलती है।

जनताना सरकार

सशस्त्र क्रांति में नक्सलियों का नारा है कि ''जोतने वालों को

जमीन और क्रांतिकारी जन समिति के हाथों में सारी हुकूमत।'' इस हुकूमत को ''जनताना सरकार'' का नाम दिया गया है तथा यह सरकार ''क्रांतिकारी जन समितियों'' द्वारा चलाई जाती है। आधार क्षेत्रों की स्थापना के बाद ''क्रांतिकारी जन समितियों के विकसित होने की कार्रवाई की जाती है।

जनताना सरकार का मतलब है जनता की सरकार। भूमिहीन तथा गरीब किसानों के आधार पर चार वर्गों के रणनीतिक मोर्चों के मध्यम तथा धनी किसानों को एक जुट रखते हुए विभिन्न स्तरों पर क्रांतिकारी जन समितियों अपने सत्ता संचालन हेतु आर्थिक मामलों, प्रतिरक्षा, कृषि, विकास, न्याय, चिकित्सा, शिक्षा और संस्कृति के कार्यों के लिए अलग–अलग समितियो ं बनाती है। इन क्रांतिकारी जन समितियों के नेतृत्व में जनताना सरकार जमीन का सर्वेक्षण कर भूमिहीनों में बांटती है, महिलाओं को जमीन का अधिकार सहित समानता का अधिकार दिया जाता है व जनता के कल्याण को सर्वोपरि माना जाता है।

जन–अदालत

जन–अदालत या पीपुल्स कोर्ट या कंगारू कोर्ट नक्सलियों द्वारा एक समान्तर न्याय–प्रणाली की व्यवस्था है। इस प्रकार की अदालत की संरचनात्मक व्यवस्था इनके 'पार्टी संविधान' दस्तावेज में नहीं मिलती है लेकिन नक्सली इसे लोगों को तथाकथित न्याय दिलाने के साथ–साथ अपने दुश्मनों या विरोध करने वाले को सजा देने के लिए इस्तेमाल करते रहे हैं। इन अदालतों में गांव के सामने छोटे–मोटे गुनाहों के लिए लोगों को सजा दी जाती है। लेकिन जन अदालतों का उपयोग नक्सलियों द्वारा अपने विरोधियों के उन्मूलन तथा पुलिस के तथाकथित जासूसों को दंडित करने में भी किया जाता है। नक्सलियों द्वारा वर्षों से जन अदालत लगाई जाती रही है। 1990 में माओवादी कम्युनिस्ट सेंटर ने 167 जन अदालत में 51 लोगों की हत्या की।

जन अदालतों की संख्या

वर्ष	2007	2008	2009	2010
जन अदालतों की सं.	68	71	50	75

जन–अदालतों के माध्यम से नक्सली भय और आतंक का माहौल बना कर हर परिवार से एक व्यक्ति को अपनी मुहिम में शामिल करना चाहते हैं। अपने अभियान एवं प्रवास के दौरान ये गांव वालों से शरण तथा खाना लेने में सफल होते हैं। गांव वाले प्रशासन को नक्सलियों के बारे में किसी भी प्रकार की सूचना देने से बचते हैं नहीं तो 'कंगारू न्यायपद्धति' से जन अदालत में कठोर सजा दी जा सकती है यहां तक कि जान गंवानी पड़ सकती है।

नक्सलवाद और भारतीय पुलिसिया तंत्र

03 मई, 2011 को झारखंड के लोहरदग्गा जिले में नक्सलियों ने घात लगाकर हमला किया जिसमें 11 सुरक्षाकर्मी मारे गए तथा 24 घायल हुए। मारे गए सुरक्षाकर्मियों में से पांच झारखंड राज्य पुलिस के तथा छः केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल के थे। नक्सलवाद से लड़ाई में केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल एवं राज्य पुलिस कंधे से कंधा मिलाकर मुकाबला कर रही है तथा नुकसान दोनों बलों को हो रहा है। लेकिन इस मुद्दे पर प्रभावित क्षेत्र में तैनात कमांडरों के विचार एक जैसे नहीं हैं। मई की घटना के बाद ही एक कोबरा बटालियन के एक कमांडेंट ने कहा कि राज्य पुलिस के कार्मिकों का कार्य करने का तरीका बिल्कुल ही अलग है तथा वे अनजान अभियानों में जाने से कतराते हैं। हालांकि केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल या राज्य पुलिस द्वारा चलाए जा रहे प्रति नक्सल विद्रोही अभियानों तथा उनके कर्मचारियों पर नक्सलियों के विचार बड़े ही रोचक हैं –

नक्सलियों के साहित्य ''अवामी जंग–5'' में नक्सलियों ने उनके साथ सीधे टक्कर लेते हुए केंद्रीय रिजर्व पुलिस बलों पर टिप्पणी करते हुए उनकी कमजोरियों के बारे में चर्चा की है–

केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की कमजोरियां :–

शासक वर्गों के पास लाखों की संख्या में बल, आधुनिक हथियार और प्रशिक्षण रहने पर भी हमें कतई यह नहीं समझना चाहिए कि वे अपराजेय हैं और आंदोलन को आगे नहीं बढ़ने देंगे। शासक वर्ग की रणनीतिक कमजोरियां और केंद्रीय रिजर्व पुलिस बलों की कमजोरियां निम्नलिखित हैं :–

1. विभिन्न राज्यों के बीच और राज्य तथा केंद्र के बीच मौजूद अंतर्विरोध केंद्रीय पुलिस बलों की तैनाती और ऑपरेशन में बाधा बन जाएंगे।
2. केंद्रीय बलों का कोई स्वतंत्र इंटेलीजेंस नहीं है और राज्यों में वे स्वतंत्र रूप से ऑपरेशन नहीं करेंगे। उन्हें स्थानीय पुलिस की मदद और उनके नेतृत्व में काम करना होगा। पूर्वोत्तर राज्यों में और जम्मू–काश्मीर में कमान और कंट्रोल सेना के हाथों में है, वहां भी केंद्रीय बलों की स्वतंत्र भूमिका नहीं है।
3. जब ठोस इंटेलीजेंस रहता है तब राज्य पुलिस ही आसानी से ऑपरेशन को अंजाम देकर वाह–वाही लूटती है। खतरनाक ऑपरेशनों में और कॉलिंग ऑपरेशन में केंद्रीय बलों को तैनात किया जाता है। इसलिए इन बलों को ज्यादा रिस्क उठाना पड़ता है। इससे राज्य और केंद्रीय बलों के बीच अंतर्विरोध तीखा होगा।
4. जहां केंद्रीय पुलिस बल सेना के साथ मिलकर काम करते हैं वहां पूरा नेतृत्व सेना का ही रहता है। सेना की केंद्रीय पुलिस बल के प्रति हीन दृष्टि रहने के कारण भी दोनों के बीच तीखा अंतर्विरोध है।
5. केंद्रीय पुलिस बलों की कमान और कंट्रोल बहुत कमजोर है। कहीं हेड क्वार्टर है तो बटालियन के हेड क्वार्टर कहीं और ड्यूटी किसी तीसरी जगह। ऐसे में सेक्सन स्तर से लेकर कंपनी स्तर तक बलों को विभाजित कर जैसे–तैसे उपयोग करते हैं। इसलिए ऐसा बल एक योजना के मुताबिक ऑपरेशन में केंद्रित करके काम करेगा ऐसी गुंजाइश नहीं है।
6. असम रायफल्स को छोड़कर बाकी तमाम बलों का नेतृत्व आईपीएस ऑफिसरों का है। ये भी नियमित रूप से उन्हीं बलों के लिए नियुक्त न होकर प्रतिनियुक्ति पर नेतृत्व करते हैं। ऐसा कमजोर नेतृत्व मजबूती से ऑपरेशन नहीं कर सकता।
7. साधारण जवान और ऑफिसरों के बीच तीखा अंतर्विरोध है। छुट्टी नहीं देने के कारण जवान द्वारा ऑफिसरों को मारने की कई घटनाएं हो रही हैं।
8. केंद्रीय पुलिस बल के अधिकांश जवान मुख्य तौर पर ग्रामीण इलाकों के गरीब किसान वर्ग से ही आए हैं। इसलिए उन लोगों पर हमारे आंदोलन का प्रभाव भी रहता है। उच्च वर्ग से आए हुए अफसर चाहे कितना भी प्रेरित करने की कोशिश करे तो भी हमारे आंदोलन के खिलाफ उन्हें दृढ़ता से खड़ा नहीं कर पाते हैं।

9. लाखों की संख्या में सेना और केंद्रीय पुलिस बलों को तैनात करके कई दशकों से दमन चलाने के बावजूद कई उतार–चढ़ाव के बीच भी पूर्वोत्तर राज्यों और जम्मू–कश्मीर में लगातार संघर्ष चल ही रहा है। ऐसे में देश भर में संघर्ष का विस्तार होने से इस सेना और केंद्रीय पुलिस बल का भी प्रभाव कम ही हो जाएगा।
10. पूर्वोत्तर राज्यों की अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर और भारत–चीन की सीमा पर तैनात सैकड़ों आउट पोस्टों के पास पहुंचने के लिए कोई यातायात व्यवस्था ही नहीं है। सिर्फ हवाई मदद से ही आपूर्ति होती है। अगर इन सीमावर्ती आंदोलनों में एयर डिफेंस हथियारों का प्रयोग किया जाए तो इन तमाम आउट पोस्ट को उठाने के सिवाय सेना के पास कोई रास्ता नहीं बचेगा।
11. ये बल शासक वर्गों के पक्ष से जनता पर दमन चलाते हैं। इसलिए इनको जनता की मदद नहीं मिलती।

नक्सलियों द्वारा उपरोक्त विश्लेषण भारतीय पुलिस तंत्र के आंतरिक सुरक्षा प्रबंधन में निहित कमजोरियों को उजागर करते हैं। कानून एवं व्यवस्था भारतीय संविधान के अनुसार राज्य सरकारों की जिम्मेदारी है। लेकिन स्वतंत्रता के बाद से राज्य सरकारों को अनेक प्रकार की गंभीर चुनौतियों आतंकवाद, अलगाववाद, उग्रवाद और अब नक्सलवाद का सामना करना पड़ रहा है। राज्य पुलिस इतनी गंभीर चुनौतियों का मुकाबला करने में सक्षम नहीं है और न ही राज्य सरकार अपने पुलिस बल के शक्ति एव सामर्थ्य में वृद्धि के यथोचित प्रयास करती है। राज्य सरकारें सामान्यतः इसके लिए संसाधनों की कमी का हवाला देती हैं। हालांकि वास्तविकता में उनमें राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव होता है। अनेक हिंसक एवं गंभीर कानून व्यवस्था के मसलों पर राज्य सरकारें शुरुआती दौर में अप्रत्याशित रूप से उदासीन होती हैं। ये उदासीनता छोटे–मोटे राजनीतिक लाभ के लिए दिखाई जाती है। लेकिन यही धीरे–धीरे एक बड़े राजनीतिक खेल का हिस्सा बन जाता है जिसमें पक्ष एवं विपक्ष का अपना–अपना नजरिया होता है और अपनी–अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षाएं।

इस विरोध–प्रतिरोध में कोई भी पक्ष आम जनता के सुरक्षा एवं उसके सामाजिक–आर्थिक हितों के बारे में नहीं सोचता। फलतः आम जनता असुरक्षित माहौल से उपजे सभी प्रकार के शोषण एवं अमानवीयता

का पहला शिकार बनती है। जब हिंसा धीरे–धीरे फैलती है तो राज्य पुलिसकर्मियों को हिंसा पर काबू पाने के लिए भेजा जाता है। कुछेक प्रयासों एवं अपने साथियों की हत्याओं के बाद वे दबाव बनाकर राज्य सरकारों द्वारा केंद्रीय पुलिस बल जिसमें सबसे पहले केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की सेवाएं केंद्र सरकार से मांगी जाती हैं। केंद्र सरकार भी अनेक उलझे तक्र–वितक्र एवं प्रस्तुत औचित्यों के उपरांत केंद्रीय पुलिस बलों की तैनाती अधिकांश अवसरों बिना पूर्व विशेष प्रशिक्षण जो तात्कालिक हालात से निपटने के लिए उपयुक्त हों दिए तथा बिना आधारभूत सुविधाओं को उपलब्ध कराए, कर दी जाती है। परिणाम यह होता है कि किसी भी हिंसक आंदोलन के प्रारंभिक चरणों में केंद्रीय सुरक्षाकर्मियों की क्षति अत्यधिक होती है।

इस प्रकार सुरक्षाकर्मियों की हत्याएं तथा अभियानों में नुकसान से विरोधी गुटों का मनोबल बढ़ जाता है और धीरे–धीरे सुरक्षा बलों पर उनका आक्रमण बढ़ता जाता है। सुरक्षाकर्मियों पर आक्रमण रोकने हेतु अधिक से अधिक केंद्रीय बलों की बटालियनें तैनात की जाती हैं और गहन अभियानों की योजनाएं बनाई जाती हैं तथा सरकार इस निष्कर्ष पर पहुंच जाती है जब सरकार सिर्फ और सिर्फ सुरक्षा–व्यवस्था कायम रखने के लिए ज्यादा से ज्यादा संसाधनों को केंद्रित कर देती है। इस प्रकार विकास कार्यों की उपेक्षा एवं प्रभावी प्रशासन की कमी पुनः उन कारणों को और मजबूत करती है जिससे हिंसक आंदोलन जैसे कि नक्सलवाद इत्यादि का जन्म होता है तथा यह आंदोलन और घातक होता जाता है।

केंद्रीय पुलिस बल के कार्मिक भी नुकसानों से हताश होकर राज्य पुलिस पर दबाब बनाते हैं कि उनके कार्मिक भी अभियानों में शामिल हों। इस प्रकार की खींचातानी में जब साझा अभियान के दौरान नक्सलियों को सफलता हाथ लगती है तब इस प्रकार की खींचातानी अंतिम रूप से संघर्षरत् सुरक्षा बलों की परिचालनिक कार्यक्षमता व दक्षता पर विपरीत प्रभाव डालती है।

इन शहीदों की लाशों पर अब राजनीति होने लगी है तथा अनेक तथाकथित बुद्धिजीवी इस प्रकार की हिंसा को हालातों के कारण आवश्यक मानते हैं। अनेक समाचार पत्र और पत्रिकाएं इस प्रकार के विचारों को अच्छा खासा स्थान देती हैं और रह जाती है शहीदों के

परिवार की यह सोच की क्या देश की रक्षार्थ अपने परिवार के सदस्यों को भेजना कितना उचित था? साथ ही साथ ऐसी भ्रामक विचारधारा सुरक्षाकर्मियों जो इन क्षेत्रों में कार्य कर रहे हैं उन्हें व्यथित करती रहती है। उनके द्वारा किया जा रहा कौन–सा कार्य सराहनीय यह विचार भी उन्हें कचोटता है कि तथा कौन–सा अनैतिक। शायद ऐसी ही द्वंदपूर्ण मानसिकता को नक्सली केंद्रीय पुलिस बलों की कमजोर कमान एवं कंट्रोल मानता है। मूलतः कमजोर कमान एवं कंट्रोल नहीं है बल्कि भारतीय पुलिस तंत्र पर राजनीतिक प्रभाव की छाप है जो कि इसकी कानूनसम्मत शक्ति को भी काफी कमजोर कर देता है और इसकी कीमत उसे आलोचनाओं एवं शहादतों से चुकानी पड़ती है।

भारतीय पुलिस तंत्र की व्यवस्थाएं एवं नियमन ब्रितानी जमाने के हैं तथा अनेकानेक बार लोगों के इस बारे में आवाज उठाने तथा न्यायालयों की सलाहों के बावजूद कोई आमूलचूल परिवर्तन नहीं किए गए हैं। इस प्रकार के कानूनों के कारण आम जनता का एक लोकतांत्रिक मूल्यों के बावजूद भरोसा नहीं होता और न ही पुलिस गंभीर चुनौतियों जैसे– नक्सलवाद का सामना करने के लिए अपने आप को कानूनसम्मत व सक्षम समझ पाती है।

समय–समय पर सरकार विशेष परिस्थितियों से निपटने के लिए विशेष कानून टाडा (TADA) तथा पोटा (POTA) के रूप में या Armed Forces Special Power Act इत्यादि को लाती है जो आलोचनाओं के कारण समाधान कम पुलिस के लिए समस्या अधिक बन जाते हैं। हालांकि विचित्र विडंबना यह है कि नक्सलवाद जैसे गंभीर हिंसक आंदोलन से निपटने के लिए ऐसे किसी प्रकार के विशेष कानून की संभावनाएं अब तक नहीं तलाशी गईं हैं। परिणामतः डा. विनायक सेन जैसे नक्सली समर्थक भी सहानुभूति बटोरकर कानूनी प्रक्रिया से मुक्त हो जाते हैं तथा पुलिस तंत्र और कलंकित किया जाता है।

नक्सल प्रभावित छत्तीसगढ़ एवं झारखंड राज्यों में अपने तैनाती के दौरान थाना स्तर के अधिकारियों एवं कर्मियों से बातचीत के दौरान मैंने उन्हें नक्सलियों के विरुद्ध अभियानों के प्रति उदासीन पाया। उनका कहना है उन्हें इस प्रकार के अभियानों के बाद उसके संपादित परिणामों का डर है जिसमें सरकारी तंत्र में अनेक दबावों के कारण

उन्हें उनके हालात पर छोड़ देती है। पर्याप्त संसाधन एवं सुरक्षा का इंतजाम नहीं किया जाता। इस संदर्भ में रानी बोदली जैसी घटनाएं घटती रहती हैं जिसमें 55 पुलिसकर्मी नक्सली हिंसा का शिकार बने।

वर्ष	2007	2008	2009	2010
शहीद सुरक्षाकर्मियों की संख्या	236	231	317	285

रानी बोदली की घटना

15 मार्च, 2007 को रात में लगभग 2 बजे से सुबह पांच बजे तक बीजापुर जिले के रानी बोदली गांव जो जिला मुख्यालय से 50 कि. मी. तथा राष्ट्रीय राजमार्ग से 35 कि.मी. अंदर है, में स्थित सुरक्षा कैंप पर नक्सलियें द्वारा भीषण हमला किया गया। यह गांव कुटरू तहसील में पड़ता है तथा कुटरू से 09 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। यह क्षेत्र अबुझमांड जंगलो से सटा होने के कारण नक्सलियों के छुपाव के लिए आदर्श माहौल देता है। ऐसी खतरनाक पुलिस पोस्ट के लिए सिर्फ 03 उपनिरीक्षक 06 सहायक उपनिरीक्षक, एवं 12 हवलदार ही स्वीकृत पद थे। घटनावाले दिन वहां एक उपनिरीक्षक, दो सहायक उपनिरीक्षक, चार हवलदार एवं 16 सिपाही तैनात थे। इनके अलावा 55 स्पेशल पुलिस अधिकारी (SPO) जो कि स्थानीय आम नागरिक होते हैं तथा इन्हें सरकार एक हथियार तथा महीने के कुछ रूपए बतौर रुपए देकर पुलिस की सहायतार्थ काम लेती है, मौजूद इस प्रकार रानी बोदली जैसे अति संवेदनशील पोस्ट के लिए प्रशिक्षित कर्मियों की भारी कमी थी तथा इस कमी को एस.पी.ओ. के द्वारा पूरा किया जा रहा था, जिसे किसी भी प्रकार से सुरक्षा के दृष्टिकोण से एक उचित कतई नहीं कहा जा सकता। राज्य पुलिस में हर स्तर पर पुलिस कर्मियों की काफी रिक्तियां हैं तथा इसे पूरा करने हेतु ऐसे ही तदर्थ उपाय किए जाते रहे हैं।

कैंप में रणनीतिक दृष्टिकोण से किसी भी प्रकार का कोई बौद्धिक मूल्यांकन किया गया हो ऐसा प्रतीत नहीं होता। वस्तुतः पुलिस एवं अर्धसैनिक बलों के कैंप के स्थापना में इस प्रकार के मौलिक अंतर पाए जाते हैं। पुलिस के दूर–दराज कैंप में अधिकारियों की भागीदारिता बहुत ही कम होती है, तथा उसकी सुरक्षा पर कोई विशेष सोच नहीं दी जाती। फलतः कैंप स्थापना में किसी रणनीतिक

फेच के अभाव ने उपयुक्त कैंप ने नक्सलियों को अभार उपलब्ध कराया और कैंप में बाहरी दीवार से तथा कैंप से सटे लंबे पेड़ों ने नक्सलियों को पर्याप्त कवर एवं छुपाव दिया जिसके कारण वे कैंप पर तीव्रता से प्रभावी प्रहार कर सकें।

15 मार्च 2007 को सुबह 02.30 लगभग 100 सशस्त्र नक्सली जो दक्षिण बस्तर डिवीजनल समिति एवं नेशनल पाक्र दलम तथा 300 स्थानीय संघम सदस्यों से रानी बोदली कैंप पर धावा कर दिया। आक्रमण के शुरू में पेड़ों पर चढ़ कर तथा दीवारों की छुपाव में दो संतरी पोस्ट पर कब्जा किया तथा एल.एम.जी. मोर्चा को भी काबू कर लिया। इसी बीच सैकड़ों नक्सलियों ने कैंप के दीवार के पास पहुंच कर ग्रेनेड तथा पेट्रोल बम फेंकते हुए प्रवेश किया। संचार को ठप्प करने के लिए वायरलेस ऑपरेटर की हत्या कर दी और फिर धीरे–धीरे सोए हुए SPO एवं छत्तीसगढ़ सशस्त्र बल के कर्मियों को मारना शुरू किया। लौटने से पहले मृत व्यक्तियों की लाशों के ढेर में लैंडमाइंस लगाकर ब्लास्ट कर दिया गया।

पांच बजे तक नक्सलियों ने कैंप छोड़ दिया। तब तक इस घटना में 39 SPO एवं 16 छत्तीसगढ़ स्पेशल पुलिस बल (CAF) के कार्मिक शहीद हो गए। नक्सलियों ने कैंप से, 303 की 19 राइफल, 13 एस एल आर, 03 ए.के.–47, एक इंसास राइफल तथा एक 2'' मोर्टर कुल 37 हथियार लूट लिए। पुलिस का दावा है कि कुछ नक्सली भी मारे गए तथा उन्होंने अपने 08 हथियार खोए।

नक्सलियों के साहित्य से भी इस घटना के बारे में जानकारी मिलती है। नक्सलियों ने ''अवामी जंग–5'' (सैनिक पत्रिका) में माना कि इस शॉर्ट सरप्राईज अटैक में उसके 6 कामरेड शहीद हुए तथा 12 को हल्की चोट आई और चार बुरी तरह से घायल हुए। उन्होंने सिर्फ एक राइफल खोने की बात स्वीकारी। नक्सलियों ने इस घटना को अंजाम देने के लिए अपने 110 कामरेडों का इस्तेमाल किया। उन्होंने पुलिसवालों की संख्या 76 आंकी थी जिसमें 30 CAF और 46 SPO समझ रहे थे। विभिन्न प्रकार के 92 हथियार का इस्तेमाल किया गया तथा ऑपरेशन का लक्ष्य कैंप पर हमला कर पुलिस को खत्म करके उनके हथियारों को लूटना था।

रानी बोदली कांड पुलिस द्वारा नक्सलवाद के विरुद्ध बिना

तैयारी एवं बिना सोच–विचार किए लड़ने का एक Classical उदाहरण है। यह घटना मात्र एक उदाहरण है। इस प्रकार के अनेक घटनाएं नक्सल प्रभावित क्षेत्र में हुई है, जहां अनेकानेक पुलिस कर्मी हताहत हुए। फिर भी राज्य पुलिस ने नक्सलवाद से निपटने मे प्रभावी रणनीति बनाने के बारे में कोई गंभीरता दिखाई हो, ऐसा आंध्रप्रदेश के विशेष greyhounds को छोड़कर कहीं और प्रतीत नहीं होता। ऐसा नहीं है कि प्रयास ही नहीं किए गए बल्कि प्रभावी प्रयासों की कमी रही है। अर्ध–सैनिक बलों से इन मुद्दों पर सलाह ली जानी चाहिए थी तथा यह मानते हुए कि यह एक प्रकार का युद्ध है अतः इसकी प्रभावी रणनीति बनाने में अर्ध–सैनिक बलों के अधिकारियों की भागीदारिता अधिक होनी चाहिए थी। लेकिन ऐसा प्रायः नहीं किया जाता क्योंकि राज्य पुलिस समझती है कि ऐसा होने से उनके अधिकार कम हो जाएंगे और उनकी व्यावसायिक कुशलता पर सदन चिह्न लग जाएगा चूंकि कानून व व्यवस्था के अनुसार राज्य सरकार का नियम है अतः केंद्र सरकार इसे लागू नहीं करवा पाती। केंद्र सरकार की पहल को राजनीतिक रूप दे दिया जाता है। अतः राजनीतिक विशेषाधिकार बने रहे भले ही आंतरिक सुरक्षा उपेक्षा का शिकार बने। भारतीय पुलिस तंत्र की यह सबसे बड़ी चुनौती है।

पुलिस द्वारा परिचालनिक प्रयास

पुलिस और अर्ध–सैनिक बल मिलकर 2000 से, ही अनेक नक्सल विरोधी अभियान कर रहे हैं तथा इन अभियानों के मिले–जुले परिणाम रहे है। प्रभावित राज्यों के पुलिस विभाग में रिक्तियों को भरने के प्रयास किए गए तथा नए पदों का सृजन भी किया गया। अर्ध–सैनिक बलों का काफी विस्तार किया गया है। पुलिस कर्मियों की संख्या में लगभग पूरे देश में तीन लाख की बढ़ोत्तरी हुई है। केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल नक्सलियों से निपटने के लिए 10 विशेष बटालियनों Combat Battalion for Resolute Action (COBRA) का गठन किया। आंध्र प्रदेश पुलिस ने ''ग्रेहाउंडस'' (Greyhounds) नाम से विशेष दस्ता तैयार किया जो प्रति नक्सल परिचालनों में विशिष्ट प्रशिक्षण प्राप्त किया है तथा ऐसे अभियानों हेतु बहुत सफल भी रहा है।

ग्रेहाउंडस (Greyhounds) के सफलता के बाद नक्सल प्रभावित

राज्य झारखंड एवं छत्तीसगढ़ ने विशिष्ट प्रशिक्षण संस्थान खोले गए। इन प्रयासों के बावजूद पुलिस के समक्ष अभी भी चुनौतियां जस की तस हैं। विगत वर्षों में पुलिस और नक्सलियों की मुठभेड़ों में मान–क्षति का अनुपात इस तथ्य को दर्शाता करता है।

पुलिस–नक्सल मुठभेड़ों में हताहतों का अनुपात

वर्ष	पुलिस/अर्धसैनिक बलों की शहादत की संख्या	नक्सलियों की	हताहतों अनुपात
2001	125	182	1:1.4
2002	100	141	1:1.4
2003	105	211	1:1.2
2004	100	87	1:0.8
2005	153	255	1:1.6
2006	157	274	1:1.6
2007	236	141	1:0.6
2008	175	137	1:0.7
2009	317	219	1:0:7
2010	285	172	1:0:6

पुलिस कर्मियों के इतने बड़े पैमाने पर अभियानों में शहादत का मुख्य कारण नक्सलियों द्वारा लैंड माइंस का इस्तेमाल है। जिसके कारण एक विस्फोट में ही हताहतों की संख्या बढ़ जाती है। नक्सलियों ने पुलिस द्वारा इस्तेमाल किए जा रहे माइंस निरोधक वाहनों को भी काफी मात्रा में विस्फोटक का इस्तेमाल कर उड़ाया है, जिसमें काफी पुलिस कर्मी मारे गए। कुछेक ऐसे बम विस्फोटकों संक्षिप्त विवरण नीचे दिए जा रहे हैं जिससे कि इससे हुए नुकसान का आंकलन किया जा सकता है :–

घटना – 01, दिनांक 03 सितंबर 2005 संध्या 1730।

- पडेरा गांव, थाना–बीजापुर, बीजापुर–गंगचीर रोड, दंतेवाडा (तात्कालिक) जिला।

- के.रि.पु.बल के माइंस निरोधी वाहन को विस्फोट से उड़ा दिया गया जिससे वाहन हवा में उछल 30फीट की दूरी पर गिरा। इससे के.रि.पु.बल के 24 सुरक्षाकर्मी मारे गए तथा 03 अन्य घायल हुए।
- Improvised explosive device संख्या – 01
- विस्फोटक की प्रकृति तथा Placement – Remote wire controlled से चलित विस्फोटक।
- विस्फोटक को कच्चा रोड में जमीन के अंदर गाडा हुआ था।
- विस्फोटक की मात्रा – करीब 100 से 120 किलो आमोनियम नाइट्रेट पर आधारित विस्फोटक था।
- इससे पहले 18 मई, 2005 को नारायणपुर जिले में उसी प्रकार के वाहन को लगभग 30–40 किलो विस्फोटक से उड़ाने की कोशिश की गई थी लेकिन उसमें वाहन को कोई नुकसान नहीं हुआ इसलिए विस्फोटक की मात्रा को 100 से 120 किलो तक नक्सलियों ने इस्तेमाल किया।

घटना – 02, नया बस्ती, बोकारो झारखंड की घटना दिसंबर 2, 2006।

- एस.टी.एफ. झारखंड पुलिस के 15 कर्मी शहीद, एक बुरी तरह से घायल, टाटा – 407 वाहन जिसमें यात्रा कर रहे थे बुरी तरह क्षतिग्रस्त।
- Improvised explosive device रोड के मध्य में रखा गया था। इसे स्टील जार में छुपाया गया था।
- लगभग 12 किलो अमोनियम नाइट्रेट एवं अलमुनियम पाउडर के मिश्रण से बना विस्फोटक।
- तार द्वारा संचालित मैकेंजिम जिसे लगभग 100 फीट की दूरी से मैनुअली आपरेट किया गया था।

घटना – 03, चतरा, झारखंड के कुंडा थाना में घटित घटना – 8 अक्टूबर 2005 ।

- सी.आर.पी.एफ. एवं स्थानीय पुलिस को मुखबिर द्वारा नक्सलियों द्वारा छुपाए रु. 95,25,000/– रुपये के खजाने की खबर मिली।
- धातु निर्मित तिजोरी पर पैसे होने का लेबल लगा था। पुलिसकर्मियों द्वारा खोलने के प्रयास में ''प्रेशर रिलीज'' मैकनिज्म से तिजोरी में विस्फोट हुआ।
- 12 सुरक्षाकर्मी जिसमें राज्य पुलिस का एक उप पुलिस अधीक्षक एवं सी. आर.पी.एफ. का एक सहायक कमांडेंट शामिल थे, शहीद हुए तथा 16 अन्य

घायल।

- लगभग 8 से 10 किलो अमोनियम नाइट्रेट आधारित विस्फोटक का हस्तेमाल किया गया।

घटना – 04, मुंगेर पुलिस अधीक्षक की हत्या – दिनांक 5 जनवरी 2005, समय 16.35 बजे।

- कच्चे रोड के नीचे छुपाए लगभग 8 से 11 किलो के स्टील के दूध के बर्तन में छुपाए गए विस्फोटक से पुलिस अधीक्षक के वाहनों के काफिले को उड़ाया गया जिसमें पुलिस अधीक्षक सहित पांच अन्य पुलिसकर्मी शहीद हो गए।
- लगभग 10 IED लगाए गए थे जिनमें पांच विस्फोट हुए तथा पांच विस्फोट नहीं हो सके।
- 09 IED 222 गज में एक से 32 गज के दूरी पर लगाए गए थे। 10 वां IED सड़क से 25 फीट दूर जंगल में एक पेड़ के नीचे लगाया गया था।
- तार द्वारा संचालित मैकनिज्म का उपयोग किया गया था तथा पावर के लिए फ्लैस गन का प्रयोग किया था।
- विस्फोट में अमोनियम नाइट्रेट एवं नाइट्रोग्लेसीन (Nitroglecnine) जिसे जिलेटिन कहते हैं, का प्रयोग किया गया था।

घटना – 05, पलामू झारखंड में 3 फरवरी 2005 को विस्फोट की घटना –

- घटना चतरपुरी – नौडिया रोड पर 0100 बजे हुई।
- कच्चे रोड के मध्य में प्लास्टिक के डब्बे में करीब 15 किलो विस्फोटक छुपाया हुआ था।
- विस्फोट में चतरपुर थाना के थानेदार सहित पांच अन्य कर्मियों की मौत।
- अमोनियम नाइट्रेट एवं नाइट्रोगिलसरीन आधारित एक IED लगाया गया था।
- IED का तार द्वारा संचालित मैकनिज्म से उठाया गया था।

घटना – 06, गढ़चिरौली महाराष्ट्र के धोदराज गांव की 22 फरवरी, 2005 संध्या 17.30 बजे की घटना –

- 12/15 किलो का एक IED जो कच्ची सड़क के मध्य गड़ा हुआ था, को विस्फोट किया गया जिसमें टाटा 407 वाहन बुरी तरह से विस्फोट की चपेट में आया, 7 पुलिसकर्मियों की मौत हुई और 14 अन्य घायल हुए।
- इस विस्फोट में Remote wire controlled mechanism से विस्फोट

किया गया तथा पॉवर के लिए कैमरे की फ्लैशगन का प्रयोग किया गया।

पिछले दशक से नक्सलवाद एक गंभीर हिंसक आंदोलन का रूप ले रखा है। 2005–2006 से इसकी बढ़ गई जबकि IED का बहुतायात तौर पर इस्तेमाल होने लगा। ज्यादातर IED में Command wire का उपयोग किया गया। लेकिन वर्षों बाद आज भी इसी प्रकार के मैकनिज्म का उपयोग किया जाता है तथा IED से विस्फोट एवं सुरक्षाबलों के नुकसान की घटनाएं उसी प्रकार से घट रही हैं। कुछ क्षेत्रों में IED के विस्फोट में नए–नए प्रयोग किए गए जैसे –

- Anti- handling (pressure, pull, push).
- Collapaseable circuit.
- Multi – mechanism.
- IED in Series though codex.

IED की घटनाएं उसी प्रकार से घट रही हैं। मैकनिज्म प्रयोगों के द्वारा और अधिक जटिल बना दिया गया है, जिससे इसको पकड़ पाना मुश्किल हो गया है। विस्फोटकों की मात्रा नक्सलियों ने बढ़ा दी है जिससे की यह और घातक हो गया है। अंबुश लगाने के स्थान पर IED एक से बढ़ाकर 10–20 और कहीं–कहीं तो 40–50 IED तक लगाए जा रहे हैं। झारखंड के लोहरदग्गा में IED एक कि.मी. तक सीरीज में कोडेक्स से जोड़कर लगाए गए थे जिससे एक कि.मी. में फैले टेक्टीकल मूव कर बढ़ते हुए, 100–150 सैनिक चपेट में आ जाएं। 2011 में IED की कुछ बड़ी घटनाओं पर प्रकाश डालें तो पता चलता है कि विस्फोटक अभी भी पुलिस/अर्ध–सैनिक बलों के नुक्सान के लिए सबसे ज्यादा जिम्मेदार है।

2008–2010 में देशभर में बम विस्फोटों में आम आदमी तथा सुरक्षा बलों के कर्मियों की मृत्यु एवं घायलों की संख्या :–

वर्ष	आम नागरिक		सुरक्षा बल	
	मृत्यु	घायल	मृत्यु	घायल
2008				
2009	111	487	106	186
2010	99	254	134	157

घटना नं0 7. 17 मई 2011, सुकमा छत्तीसगढ़ की घटना

- संध्या 20.00 बजे बोरगुड़ा गांव, सुकमा, दंतेवाडा झारखंड में सुकमा से 06 कि.मी. की दूरी पर 2 वीं वाहिनी के.रि.पु.बल के कमांडेंट के काफिले को निशाना बनाया गया।
- विस्फोट में लगभग 30–40 किलो विस्फोटक का इस्तेमाल किया गया तथा Commmand wire mechanishm का प्रयोग हुआ।
- कार के परखच्चे उड़ गए। 7 सैनिकों की जाने गईं।
- विस्फोट के प्रभाव से कार 25 फीट तथा कार का इंजन 250 फीट की दूरी पर उछल कर गिरा।
- विस्फोट से साढ़े चार फीट का क्रेटर (गढ्ढा) बना तथा कार के पुर्जे 700 फीट दूर तक पाए गए।

घटना नं0 8

जीटकानी , शिवहर बिहार –22 अक्टूबर 2010

- माओवादियों ने पुलिस पेट्रोल पर जा रहे दल के वाहन को निशाना बनाया।
- विस्फोट कर गाड़ी को एक पुलिस के पास उड़ा दिया गया जिसमें छः सुरक्षाकर्मी मारे गए तथा एक घायल हुआ।

घटना नं0 9

- परिमीली, गढ़चिरोली/महाराष्ट्र में 04 अक्टूबर, 2010 पुलिस के एक वाहन को विस्फोट कर उड़ा दिया गया जिसमें पांच सुरक्षाकर्मी मारे गए।

घटना नं0 10

चिंगावरम, सुकमा, दंतेवाडा – 17 मई 2010 की घटना

- 44 आदमी जिनमें 16 पुलिसकर्मी थे, मारे गए तथा 06 घायल हुए।
- पक्के ब्लैक टॉप सड़क के नीचे भारी मात्रा में दबाए गए विस्फोटक से नक्सलियों ने एक बस को निशाना बनाया।

घटना नं0 11

- कोंडापाल, बीजापुर 7 मई, 2010 को माओवादियों ने विस्फोट किया जिसमें 07 सुरक्षाकर्मी मारे गए तथा तीन अन्य घायल हुए।

घटना नं0 12

- बोइपरीगुडा, कोरापुट में 04 अप्रैल, 2010 को नक्सलियों ने विस्फोट किया जिसमें 11 सुरक्षाकर्मी मारे गए तथा आठ अन्य घायल हुए।

घटना नं0 13

- शिल्दा कैंप, पश्चिम बंगाल 14 फरवरी, 2010 की घटना में कैंप पर आक्रमण करते हुए नक्सलियों ने पेट्रोल बम तथा ग्रेनेड फेंककर काफी नुक्सान पहुंचाया। घटना में 24 सुरक्षाकर्मी मारे गए तथा सात घायल हुए।

उपरोक्त कुछ घटनाओं की समीक्षा करने से यह स्पष्ट होता है कि बम विस्फोटों की घटनाओं में संख्या में उतार–चढ़ाव होते रहते हैं लेकिन इससे होनेवाले नुकसानों में उत्तरोत्तर वृद्धि ही हो रही है। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में IED की घटनाओं से संबधित कुछ आंकड़े नीचे दिए जा रहे हैं जिससे इन क्षेत्रों में पुलिस कारवाई के प्रभाव का आकलन किया जा सकता है।

नक्सल प्रभावित विभिन्न राज्यों में 2008–2010 की घटनाएं –

राज्य	2008	2009	2010
छत्तीसगढ़	58	28	25
झारखण्ड	20	64	30
बिहार	21	47	42
पश्चिम बंगाल	13	35	38
उड़ीसा	13	29	47
आन्ध्रप्रदेश	02	02	05
कुल योग	**127**	**205**	**187**

छत्तीसगढ़ एवं झारखंड में पिछले पांच सालों की IED घटनाएं –

वर्ष	छत्तीसगढ़	झारखण्ड	सुरक्षाबलों को सभी प्रकार से नक्सल घटनाओं में नुकसान
2006	78	30	
2007	79	19	
2008	58	20	
2009	28	64	
2010	25	30	

देश में पिछले कुछ सालों में बम विस्फोटों की घटनाओं में कमी आई है लेकिन नक्सल क्षेत्र में इस प्रकार एक कोई पैटर्न नहीं है बल्कि ज्यादातर वृद्धि के संकेत है। जम्मू–कश्मीर राज्य में सबसे ज्यादा विस्फोट आज भी होते हैं लेकिन इससे नुकसान में कमी आ रही है।

वर्ष	2006	2007	2008	2009	2010
देश में कुल बम विस्फोट	550	557	466	428	338
जम्मू–कश्मीर	256	169	58	28	25
छत्तीसगढ़	78	79	58	28	25
झारखंड	30	19	21	63	30
बिहार	9	21	21	48	47
पश्चिम बंगाल	7	19	13	35	39
उड़ीसा	2	13	13	34	47
महाराष्ट्र	6	4	8	2	4
आंध्रप्रदेश	5	17	2	3	5

2008–2010 में देशभर में बम विस्फोटों में आम आदमी तथा सुरक्षा बलों के कार्मिकों की मृत्यु एवं घायलों की संख्या –

वर्ष	सिविलियन		सुरक्षा बल	
	मृत्यु	घायल	मृत्यु	घायल
2008				
2009	111	487	106	186
2010	99	254	134	157

नक्सलवाद उन्मूलन में पुलिस की भूमिका

नक्सलवाद के उन्मूलन में सरकार और समाज के विभिन्न अंगों को समन्वित तौर पर प्रयास करने होंगे। मध्य एवं पूर्वी भारत के जंगल एवं आदिवासी बाहुल्य क्षेत्रों में नक्सलियों की चाल आतंक उन क्षेत्रों के प्राकृतिक तौर पर खनिज संपदा से धनी होने के बावजूद फैल रहा है। यह इलाके भूख, भ्रष्टाचार, गरीबी एवं बेरोजगारी से ग्रस्त हैं। नक्सलियों ने इन्हीं समस्याओं को नारों का रूप देकर लोगों को आंदोलन के लिए प्रेरित रखा। इन्हीं नारों के साथ नक्सलियों ने इस क्षेत्र के अनेक आदिवासियों एवं अन्य गरीब एवं संघर्षरत लोगों के मन में सरकार के प्रति विरोध एवं विद्रोह के तेवर भर दिए। नतीजन क्षेत्र के लोग अपने को न सिर्फ अभावग्रस्त एवं हाशिए पर धकेला पाते हैं बल्कि तिरस्कृत समझते हैं। नक्सली इसी प्रकार मानसिक सोच को विकसित कर अपने कैडर में भर्ती करने पर विशेष ध्यान देते रहे हैं।

नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में के.रि.पु.बल एवं राज्य पुलिस के अधिकारियों से बातचीत के क्रम अनेक चौंकानेवाले तथ्य भी प्रकाश में आए। नक्सली जोर जबरदस्ती से कैडरों में भर्ती तो करते आए ही हैं लेकिन आजकल स्कूलों में बच्चों इत्यादि को निशाना बना कर उनके मन में सरकार के प्रति विद्रोहात्मक भावना भर रहे हैं। नक्सलियों की नई एवं दीर्घकालीन पौध को विकसित करने का यह सबसे घृणात्मक कार्य धीरे–धीरे किया जा रहा है। चूंकि सरकार एवं प्रशासन की शिक्षा एवं विकास से जुड़े विभागों की पहुंच ऐसे क्षेत्रों मे हस्तक्षेप कर सुधारात्मक उपाय करने की नहीं है इसलिए पुलिस को ही ये भूमिका निभानी पड़ेगी। ''नक्सलवाद'' की विशेष परिस्थिति पुलिस के लिए

विशेष भूमिका की मांग करती है। पुलिस को अपने परंपरागत भूमिका से निकलकर एवं विकास एजेंसी के रूप में भी सक्रियता बढ़ानी पड़ेगी।

नक्सलवाद उन्मूलन में पुलिस की निम्नलिखित मुख्य भूमिकाएं हो सकती हैं :–

(क) सामरिक/परिचालनिक भूमिका– नक्सलवादियों के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष।

(ख) विकास एजेंसी की भूमिका– विकास कार्यों की सुरक्षा/बिना बाधा के इन्हें पूरा करवाना।

(ग) सामाजिक सुधार की भूमिका – शिक्षा का प्रचार–प्रसार, बाल–विवाह इत्यादि के विरुद्ध प्रचार एवं अन्य सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध प्रचार।

(घ) जन जागरण अभियान में भूमिका – जैसे अंधविश्वास के उन्मूलन।

(ङ) शासकीय योजनाओं के प्रसारक की भूमिका।

(क) सामरिक/परिचालनिक भूमिका

नक्सलवाद से निपटने के लिए प्रभावित राज्यों में पुलिस की क्या तैयारियां पर्याप्त हैं। नक्सलियों ने इन क्षेत्रों में युद्ध जैसी स्थिति खड़ी करने की कोशिश कर रहे हैं। नक्सल क्षेत्रों में विगत कुछ वर्षों से भारी नुकसान उठाना पड़ रहा है। देश के पूर्वोत्तर राज्यों एवं जम्मू–कश्मीर की तुलना अगर नक्सल क्षेत्रों से की जाए तो अंतर साफ पता चलता है। आंतरिक सुरक्षा में लगे अर्धसैनिक बलों के नुकसान से इस बात का आंकलन किया जा सकता है।

विभिन्न हिंसाग्रस्त थियेटरों में के.रि.पु.बल के कर्मियों की मौत

राज्य	2008	2009	2010	कुल
जम्मू एवं कश्मीर	10	11	05	26
पूर्वोत्तर क्षेत्र	04	01	06	11
नक्सल प्रभावित क्षेत्र	52	58	132	242

नक्सल क्षेत्रों में लगातार युद्ध जैसी स्थिति बनी हुई है जो पुलिसकर्मियों के लिए एक परिचालनिक चुनौती है। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में वर्ष 2007 में 236, 2008 में 231, 2009 में 317 एवं 2010 में 285 सुरक्षाकर्मी मारे गए हैं। नक्सलियो से निपटने में भारत सरकार ने पिछले वर्षों में सभी

प्रभावित राज्यों को केंद्रीय पुलिस बल की बटालियनों को उपलब्ध कराया है। सर्वप्रथम, इस समस्या से निपटने के लिए के.रि.पु.बल की टुकड़ियां ही भेजी गईं। लेकिन 2009 से जब के.रि.पु.बल की टुकड़ियां देश के अन्य भागों में कार्यरत रहने के कारण नक्सल क्षेत्रों में तैनाती नहीं की जा सकी तो सीमा सुरक्षा बल की कुछ बटालियन भी तैनात की गईं, लेकिन सुरक्षा बलों में काफी रिक्तयां जो उनके परिचालन को प्रभावित करती है। आंतरिक सुरक्षा परिदृश्य में अनेक थियेटरों में विभिन्न प्रकार के उग्र आंदोलनों के सुरक्षा बलों की तैनाती की जरूरतों को बढ़ा दिया है।

राज्यवार सुरक्षाबलों की तैनाती का ब्योरा

अर्धसैनिक बलों में रिक्तियां (31.12.2010 तक)

बल	कुल	अधिकारी
के.रि.पु.बल	27832	1036
सी.सु.बल	27226	1076
भा.ति.सी.पुलिस	6380	322
एस.एस.बी.	15860	611

केंद्रीय बलों के परिचालनिक अभियानों से ही नक्सलवाद के विरुद्ध प्रभावी अभियान नहीं चलाया जा सकता है बल्कि राज्य पुलिस को इसके लिए तैयार और पूर्ण प्रशिक्षित होने की आवश्यकता हमेशा से महसूस की जाती रही है। लेकिन तमाम प्रयासों के बावजूद राज्य पुलिस में काफी रिक्तियां नहीं भरी जा सकीं।

2010 के अन्त में विभिन्न राज्यों में पुलिस में रिक्तियां

झारखण्ड	18,000
छत्तीसगढ़	3,500
उड़ीसा	5,000
पश्चिम बंगाल	12,300
महाराष्ट्र	14,000
बिहार	4,500
आंध्रप्रदेश	3,300
(आंकड़े 31/12/2010 तक)	

इतना ही नहीं पुलिस के आधुनिकीकरण के लिए दिए गए केंद्र द्वारा फंड का पूर्ण उपयोग नहीं किया जा रहा है। आवश्यकता है कि पुलिस की युद्धक क्षमता में बढ़ोत्तरी के लिए आधुनिक उपकरणों एवं हथियारों का अधिकाधिक उपयोग किया जाए।

नक्सलियों द्वारा जिस प्रकार की रणनीति सुरक्षा बलों के विरुद्ध अपनाई जा रही है उसकी विवेचना उचित नियोजन के लिए समय–समय पर की जानी चाहिए। नक्सलियों ने पुलिस की मोबाइल टुकड़ियों एवं कैंपो पर आक्रमण करने के लिए अनेक रणनीतियां अपनाई हैं तथा इससे पुलिस बल को काफी क्षति भी उठानी पड़ी। लेकिन पुलिस संगठित होकर समंवित परिचालनिक प्रयास करती है तो सफलताएं हासिल करती है। पुलिस एवं केंद्रीय बलों के राज्यों में तैनाती के बाद अनेक अभियानों को योजनाबद्ध तरीके से कर रही है कुछ सफल उदाहरण निम्न हैं।

झारखंड

28 जनवरी, 2011 को बरवाडीह, लातेहार, झारखंड में 11 बटालियन के.रि.पु.बल ने सफल अभियान में 09 नक्सलियों को मार गिराया। इस अभियान में नक्सलियों का जोनल कमांडर बसंत भी मारा गया। आसूचना पर आधारित यह एक बहादुरी भरा रेड ऑपरेशन था। इस अभियान में प्रारंभिक सूचना के आधार पर जोनल कमांडर बसंत के ग्रुप पर कुछ दिनों से लगातार नजर रखी जा रही थी तथा उसकी गतिविधियों का अध्ययन किया जाता रहा। बाद में बड़े ही योजनाबद्ध तरीके से इस दस्ते के ''मूवमेंट'' पर सतत नजर रखी गई। नतीजन जब 28/01/2011 को के.रि.पु.बल ने छापा मारकर बिना किसी प्रकार के नुकसान उठाए 09 नक्सलियों को मार गिराया। अभियान में सुरक्षा बल ने 09 हथियार और भारी मात्रा में गोला–बारूद बरामद किया।

- 12 मई, 2007 को 13 बटालियन के.रि.पु.बल ने एक Raid (रेड) अभियान में नक्सलियों के गढ़ में घुसकर एक भीषण मुठभेड़ में 05 नक्सलियों को मार गिराया जिसमे 02 महिला नक्सली भी शामिल थीं। इस घटना में छत्तीसगढ़ राज्य समिति का सदस्य मानस भी मारा गया। छत्तीसगढ़ राज्य समिति के ज्यादातर सदस्य पलामू व गढ़वा जिले तथा छत्तीसगढ़ के

बलरामपुर मे पुलिस अभियानों में मार दिए गए। जिसके कारण छत्तीसगढ़ राज्य समिति को भंग कर बिहार – झारखंड स्पेशल एरिया समिति में मिला दिया गया। यह अभियान टुडकी क्षेत्र जो भंडरिया थाना, गढ़वा (झारखंड) के जंगलों, में चलाया गया, जो दूसरे राज्य से सीमांत क्षेत्र होने के साथ–साथ यातायात हुर्लभता के कारण नक्सलियों का गढ़ माना जाता है। के.रि.पु.बल की टुकड़ी द्वारा बिना किसी नुकसान के पांच खतरनाक नक्सलियों को मार गिराना, 01 ए.के.–47, 04 एस.एल.आर. एवं 01 सेमी ऑटोमैटिक अमेरिकन राइफल एवं .315 राइफल जब्त की गई।

- 31 मार्च, 2008 को भंडारिया थाना के गढ़वा जिला (झारखंड) में 13 बटालियन के.रि.पु.बल ने एक साहसिक मुठभेड़ में 08 नक्सलियों को मार गिराया तथा 14 विभिन्न हथियारों को बरामद किया। यह क्षेत्र घने जंगल का है तथा राजमार्ग से 12 किमी अंदर है। इस अभियान में सरप्राइज हासिल करते हुए नक्सलियों के आने–जाने के रास्ते पर घात लगाकर हमला कर नक्सलियों को घेर लिया गया। पुनः यह सफलता एक समन्वित प्रयास एवं सूझ–बूझ के प्रयोग का उदाहरण है।
- 16 जून, 2006 का अम्बातारी, थाना चौपारण, हजारीबाग में 72 बटालियन के.रि.पु.बल ने मध्यरात्रि में एक सफल मुठभेड़ में 04 नक्सलियों को मार गिराया तथा 06 हथियारों को बरामद किया। यह क्षेत्र उस समय नक्सलियों के आवागमन के रूप में इस्तेमाल करने की खबरें मिल रही थीं। इस सूचना का सटीक आसूचना में बदलने की योजनाबद्ध कार्रवाई की गई तथा नक्सलियों के मूवमेंट प्लाट होने लगे। नतीजन 16 जून को रात में बल की टुकड़ी ने प्रभावी रणनीति अपनाते हुए नक्सलियों को मार गिराया।
- 11 जनवरी, 2008, चैनपुर पहाड़ी, पलामू जिला झारखंड– 13 बटालियन के.रि.पु.बल "Push and ambush theory" (धकेलना एवं घात लगाकर हमला करना) को अपनाते हुए नक्सलियों के ऊपर उस पर धावे का प्रयास किया जब वे मीटिंग कर रहे थे। इस प्रकार उनके मीटिंग करने के स्थान पर बढ़ते हुए भागने के रास्तों पर अम्बुश लगा दिया। इस प्रकार बल के आक्रमण में मीटिंग से भागते नक्सली सुरक्षा बल के अम्बुश में फंस कर मारे गए। तीन घंटे तक चली इस मुठभेड़ में 03 नक्सली मारे गए तथा उनसे 02 हथियार बरामद हुए। इस अभियान माओवादियों का जोनल कमांडर महेंद्र करवा भी मारा गया। अभियान में न सिर्फ सही रणनीति का प्रयोग किया गया बल्कि दोपहर के बाद खबर लगने पर भी शाम तक के. रि.पु.बल की टुकड़ियों ने संध्या के समय पर नक्सलियों पर आक्रमण कर दिया और एक सफल अभियान को अंजाम दिया।

(क) सामरिक/परिचालनिक भूमिका

नक्सलियों के आतंक को खत्म करने के लिए सुरक्षा बलों एवं पुलिस को एक प्रभावी सैन्य–नीति अपनानी होगी। सामाजिक, आर्थिक सुधारों के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करना होगा तथा यह सुनिश्चित करना होगा कि भय एवं आतंक का माहौल किसी प्रकार से शासकीय पहल में बाधा उत्पन्न न करे। सरकार इसके लिए उपयुक्त सैन्य–नीति में केंद्रीय सुरक्षा बलों की खास भूमिका मानती है क्योंकि नक्सलियों द्वारा सुरक्षा बलों पर आक्रमण करने का तरीका पूर्णतः प्रशिक्षित सेनाओं के सैन्य–अभियानों की तरह है और उनके पास प्रशिक्षित कैडर तथा सुरक्षा बलों से लूटे गए अत्याधुनिक हथियार हैं।

प्रभावी परिचालनिक नीति बनाने के प्रयास में अनेक प्रयोग किए जाते रहे हैं, लेकिन फिर भी स्थिति चिंताजनक बनी हुई है। सिर्फ तीन दिनों में 09 से 11 जून 2011 तक में ही छत्तीसगढ़ में नक्सलियों ने कई सुरक्षाकर्मियों की हत्याओं को अंजाम दिया। 09 जून को नारायणपुर जिले में 05 पुलिसकर्मी और 10 जून को दंतेवाड़ा में ही 03 के.रि.पु. बल कर्मियों की हत्या कर दी गई। सभी आक्रमण बड़े ही सुनियोजित ढंग से किए गए साथ ही नक्सलियों के नुकसान की कोई खबर नहीं मिली। इससे पूर्व 25 मई को छत्तीसगढ़ के एक अपर पुलिस अधीक्षक सहित 10 पुलिसकर्मियों की हत्या, छत्तीसगढ़–उड़ीसा सीमा पर की गई। इस प्रकार नक्सलियों द्वारा हिंसा का आंतक बड़ी तेजी से बढ़ता ही जा रहा है। ये घटनाएं इस तरफ संकेत करती हैं कि कहीं न कहीं सुरक्षा बलों की परिचालनिक नीतियों में कोई न कोई त्रुटि है तथा स्पष्टता का अभाव है साथ ही साथ पुलिस की रणनीति में भी व्यावसायिक सोच का अभाव दिखता है।

नक्सलियों द्वारा सुरक्षा कर्मियों की हत्या का विवरण

वर्ष	2007	2008	2009	2010
मारे गए सुरक्षाकर्मियों की सं.	236	231	317	285
सुरक्षाकर्मियों के साथ मुठभेड़ की सं.	276	271	309	272

सुरक्षाकर्मियों पर हमले की संख्या	182	192	250	229
हमले में मारे गए नक्सलियों की सं.	141	199	219	172

नक्सलियों विरोधी परिचालनिक नीति को रूप देते समय नक्सलियों के हिंसक आंदोलन के मूल कारणों एवं युद्धनीति को ध्यान में रखना होगा। नक्सली ''दीर्घकालीन जन–युद्ध'' की बात करते हैं तथा नक्सल विरोधी अभियान भी काफी लंबे समय तक चलेगा। किसी भी समय जल्दबाजी में न तो निर्णय लेना चाहिए न ही ये सोच विकसित करनी चाहिए कि आनन–फानन में प्रकार की त्वरित सफलता स्थाई हल नहीं है। चूंकि नक्सल विरोधी अभियान एक ऐसे बड़े जन–समुदाय की आबादी वाले इलाके में चलेगा जहां नक्सलियों ने हमेशा लोगों के मन में सरकार के प्रति असंतोष भरने का कार्य किया है। अतः लोगों को अपने साथ करने की कवायद साथ–साथ शुरू करनी होगी। यह प्रयास किया जाना चाहिए कि लोगों का दिल जीता जा सके जिससे कि पहले धीरे–धीरे ये नक्सलियों को साथ देना छोड़े तथा बाद में सरकार एवं सुरक्षा बलों के पक्ष में हो। इसके लिए आवश्यक है कि किसी भी प्रकार मानवाधिकारों का हनन न हो।

प्रभावित क्षेत्र की जनता का साथ होना इसलिए भी आवश्यक है कि नक्सल विरोधी अभियानों में आसूचना की बहुत भूमिका होती है। अगर जनता नक्सलियों के बारे में सूचनाएं सुरक्षा बलों को देने लगे तो बल को बहुत अच्छी परिचालनिक सफलताएं मिल सकती हैं। शुरूआती दौर में अगर जनता नक्सलियों को पुलिस की सूचनाएं देना बंद भी करे तो सबसे महत्वपूर्ण रणनीति ''सरप्राइज'' हासिल करने में सुरक्षा बल कामयाब होंगे जिसका फायदा उन्हें अभियानों में भी मिलेगा। आंतरिक सुरक्षा अभियानों में सबसे बड़ी चुनौती होती है कि जो असामाजिक तत्व होते हैं वे ''छापामार युद्ध'' या आतंकवादी कार्रवाइयों में मानवता की सारी हदें पार कर जाते हैं लेकिन सुरक्षा बलों को इन चुनौतियों का सामना बड़े ही संयम एवं धैर्य के साथ करना पड़ता है। खासकर विषम तथा हिंसक परिस्थितियों में लंबे समय तक ऐसा कर पाना पुलिस नेतृत्व के लिए एक चुनौती पूर्ण कार्य है। इसलिए परिचालनिक अभियानों के दौरान कुछ सावधानियां बरतना अति आवश्यक है। जैसे कि–

- मानवाधिकारों का हनन न किया जाए
- किसी भी निर्दोष की हत्या, प्रताड़ना या गिरफ्तारी कभी भी नहीं की जानी चाहिए।
- अभियानों में सामाजिक क्षति नहीं होनी चाहिए यदि ऐसा होता है तो उसके लिए उचित मुआवजा दिया जाना चाहिए।
- कानून सम्मत तरीकों से ही अभियानों को संचलित करना चाहिए।

इस प्रकार की नीतियों के अनुसरण से एक उचित वातावरण पैदा होगा जहां सुरक्षा–बल अपने अभियानों को सफल बनाने के लिए जमीनी हालात तैयार कर सकते हैं जिससे नक्सलियों को नियंत्रित कर, उनकी हिंसक कारवाईयों पर अंकुश लगाया जा सकता है।

सुरक्षा बलों द्वारा परिचालनिक रणनीति में सबसे ज्यादा महत्व आसूचना तथा उचित प्रशिक्षण का है। नक्सलियों द्वारा बलों पर आक्रमण करने तथा टकराने की ''टेक्टीस'' में बराबर बदलाव किया जाता रहा है। वे अपने हर आक्रमण के बाद रणनीति की समीक्षा करते हैं तथा कमियों को दूर करने का प्रयास किया जाता है। वस्तुतः नक्सलियों द्वारा हर घटना के बाद जो ''केस स्टडी'' की जाती है वह सैन्य–ज्ञान से प्रभावित एक बौद्धिक समीक्षा होती है जो भविष्य की रणनीति में परिवर्तन हेतु दिशा प्रदान करती है। 2006–07 में जब सुरक्षा बलों द्वारा दोपहर के बाद वापस लौटने के पैटर्न को लक्ष्य किया गया, तो नक्सलियों द्वारा ज्यादातर हमले संध्या के समय में किए गए। जिससे न तो अतिरिक्त मदद पहुंच सके, न ही घायलों को निकलना ही हो पाए साथ ही थके व लौट कर आती हुई बल की टुकड़ी से लड़ना भी आसान होता है। नक्सली अपने रणनीति के क्षेत्र, मूल संरचना, सुरक्षा बलों की शक्ति तथा अपने भागने के रास्तों को ध्यान में रखते हुए ही आक्रमण करते हैं। लेकिन सुरक्षा बलों द्वारा दुश्मन की सोच को बारीकी से लेने में कई बार चूक हो रही है। अपनी गलतियों से सीख कर नक्सली अधिक घातक होते जा रहे हैं वहीं सुरक्षा बल गलतियों को दोहरा कर अपनी जानें गंवा रहे है।

09 जून 2011 को झाराघाटी, नारायणपुर, छत्तीसगढ़ में छत्तीसगढ़ सशस्त्र बल के कैंप पर नक्सलियों ने उस समय आक्रमण किया जब वे शौचालय के लिए कैंप के पास ही निकले हुए थे। निःसंदेह कैंप में मूलभूत सुविधाओं का अभाव रहा होगा। हालांकि छत्तीसगढ़ के

गृहमंत्री ननकी राम कंवर ने अपने बयान में कहा कि गलती जवानों की है जब कैंप में शौचालय था तो वे बाहर क्यों गए। ऐसा माना जा सकता है कि यदि सुविधाएं रही भी होंगी तो पर्याप्त नहीं होगी। इससे पहले 12 जुलाई 2009 को मदनवाड़ा पुलिस पोस्ट में भी दो सिपाही जब सुबह शौच के लिए कैंप से बाहर गए तो उन्हें गोली मार दी गई। उस पुलिस पोस्ट पर आनन–फानन में नक्सलियों के बढ़ते मूवमेन्ट को रोकने के लिए पुलिस की टुकड़ी बिना किसी मूलभूत सुविधाओं को तैयार किए तैनात कर दी गई थी। उन दो पुलिसकर्मियों के शव को जिला मुख्यालय में लाने के लिए तथा अन्य उपस्थित कर्मियों को उचित दिशा–निर्देश देने हेतु पुलिस अधीक्षक स्वयं घटना स्थल की ओर रवाना हुए। किंतु नक्सलियों ने पुलिस की टुकड़ियों पर जिन–जिन रास्तों से वे आ रहे थे वहां–वहां घात लगा कर हमला किया। इस घटना में पुलिस अधीक्षक समेत कुल 28 पुलिसकर्मी शहीद हुए। पुलिस महानिरीक्षक बाल–बाल बचे, लेकिन बावजूद दिनांक 09 जून 2011 को नारायणपुर के झाराघाटी में घटना आधारभूत सुविधाओं के कारण होना एक स्वस्थ परिचालनिक नीति के अभाव को दर्शाती है।

नक्सल विरोधी अभियान के लिए एक गतिशील परिचालनिक नीति की आवश्यकता हैं चूंकि नक्सलियों द्वारा अपने विभिन्न राज्यों तथा क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न रणनीतियां अपनाई जाती हैं। अतः इसको निष्क्रिय करने के लिए हर क्षेत्र की स्थानीय रणनीति होनी चाहिए। लेकिन यह भी देखा गया है कि अन्तर्राज्यीय सीमाओं पर वारदातों की संख्या ज्यादा है। इसलिए सही समन्वय की सख्त आवश्यकता है। स्थानीय नीतियां अलग–अलग भले रहें लेकिन तालमेल का पर्यवेक्षण केंद्रीयकृत हो जिससे परिचालनों का प्रभाव समुचित रहे। परिचालन में सबसे ज्यादा जिन तत्वों की आवश्यकता है उसमें जंग अनुशासन प्रमुख है। जंगल युद्ध में जंगल के संसाधनों को उपयोग में लाते हुए तथा भू–संरचना का सही उपयोग करते हुए ही नक्सलियों के खिलाफ मोर्चा खोलना होगा। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि वहां रह रहे आदिवासियों के जीवन की तारतम्यता को किसी भी प्रकार से भंग नहीं किया जाए। अगर जंगल अनुशासन को समझ लिया गया तो अभियान की गोपनीयता बनी रहेगी। छापामार–युद्ध में दुश्मनों के पास गोपनीयता को समझ लिया गया तो

अभियान की गोपनीयता बनी रहेगी। छापामार–युद्ध में दुश्मनों के पास गोपनीयता तथा आक्रमण करने की तीव्रता रहती है। सुरक्षा बलों को न सिर्फ अपने आवागमन बल्कि एम्बुश या रेड की प्रत्येक योजना को हर संभव तरीके से गोपनीय रखना होगा। इस तरह की 'टैक्टिस'' अपनाना है, कि लगे, कि आप पूरब की तरफ बढ़ रहे हैं तथा अचानक दिशा बदल कर धावा कर सके। गोपनीयता तथा धोखा छापामारों से युद्ध करने में सबसे महत्वपूर्ण घटक है।

गिरफ्तार एवं आत्मसमर्पण किए गए नक्सलियों की संख्या (2007 से 2010 तक)

वर्ष	2007	2008	2009	2010
गिरफ्तार किए गए नक्सलियों की सं.	1456	1743	1981	2916
आत्म समर्पण किए नक्सलियों की सं.	390	400	150	266

सुरक्षा बलों को अभियानों के दौरान बेहतर कमान एवं कंट्रोल भी रखना चाहिए। इसमें सख्त फायर कंट्रोल भी शामिल है। 09 जुलाई 2007 को दंतेवाड़ा के एराबोर में नक्सलियों ने संध्या के समय सुरक्षा बल की टुकड़ी पर घात लगाकर हमला किया। हमले के दौरान नक्सली लगातार खुद को विभिन्न जगहों में थोड़ी देर के लिए सामने आकर छुप जाते थे जिससे सुरक्षा कार्मिक उसी दिशा में फायर करना शुरू कर देते। इस प्रकार की लुका–छिपी में कार्मिकों द्वारा सारा गोला–बारूद खत्म कर दिया गया। बाद में नक्सलियों ने आसानी से नजदीक आकर 18 सुरक्षाकर्मियों की हत्या कर दी। इसलिए नक्सलियों द्वारा लगाए गए अंबुश के दौरान फायर कंट्रोल की आवश्यकता है। एम्बुश के दौरान यदि फायर पर कंट्रोल नही रखा गया तो अमुनिशन के खत्म होने की संभावना रहेगी तथा ऐसे समय में कोई मदद भेजना भी घातक होता है।

नक्सली अपने अंतिम लक्ष्य को पाने के लिए तरतीबबार युद्धनीति का अनुसरण करने की विचारधारा रखते हैं। भारतीय परिस्थिति में कृषि को नव जनवादी क्रांति की धुरी मानते हैं। नक्सली अपने संगठन एवं सेना को मजबूत करने की निम्नलिखित पांच चरणों का अनुसरण करते हैं –

- रणनीतिक क्षेत्र
- लाल प्रतिरोध क्षेत्र
- छापामार क्षेत्र
- आधार क्षेत्र
- मुक्त क्षेत्र

रणनीतिक क्षेत्र से आधार क्षेत्र तक के सफर की शुरूआत वे पिछड़े क्षेत्रों से करना चाहते हैं, क्योंकि अपेक्षाकृत पिछड़े क्षेत्रों में ऐसा करना आसान होता है। ''––क्रांतिकारी युद्ध को उन क्षेत्रों में शुरू करना पड़ता है जो अपेक्षाकृत रूप में ज्यादा पिछड़े हैं, जहां सामाजिक अंर्तविरोध तीखे हैं, जहां राज्य की सत्ता व प्राधिकार अपेक्षाकृत रूप से कमजोर है और जहां का धरातल छापामार युद्ध को जारी रखने के लिए ज्यादा अनुकूल है।''(क्रांति की रणनीति और कार्यनीति)

रणनीतिक क्षेत्र (Strategic Area/Perspective Zone)

नक्सली इस प्रकार के स्थानों को चुनते हैं जहां की परिस्थितियां लोकयुद्ध को आगे बढ़ाने तथा राजनीतिक सत्ता पर कब्जा करने का आधार स्तंभ बने। यह क्षेत्र पहाड़ी धरातल वाले अर्धजंगली क्षेत्र होते हैं जहां किसानों की विशाल संख्या तथा अनेक सामाजिक, आर्थिक समस्याएं विद्यमान रहती हैं, लोगों की स्थिति अच्छी नहीं होती तथा जीवन स्तर काफी खराब होता है। आम लोगों में असंतोष की भावना होती है तथा प्रशासन की कमियों के कारण नक्सलवाद के पनपने के लिए अच्छी जमीनी हालत होते हैं। नक्सली इन क्षेत्रों को बड़ी सावधानी से चुनते हैं तथा यह एक बहुत बड़ा क्षेत्र होता है जिसमें परिस्थितियों के आधार पर लाल प्रतिरोध क्षेत्र कायम किया जाता है।

लाल प्रतिरोध क्षेत्र (Red Resistance Zone)

रणनीतिक क्षेत्रों को चिह्नित करने के बाद नक्सली उन क्षेत्रों में लोगों की समस्याओं से जुड़कर उसके लिए उनके साथ मिलकर प्रशासन के खिलाफ आंदोलन करते हैं। आंदोलन के प्रभाव को क्रमिक तौर पर बढ़ाते हैं जो याचिका प्रतिरोध से होते हुए हिंसक होता चला जाता है। इस कड़ी में नक्सली अपने संगठनों से आंदोलन की कमान को धीरे–धीरे अपने स्थानीय ''कोर ग्रुप'' को सौंप देते हैं। यह ग्रुप

प्रतिरोध की तीव्रता एवं प्रभाव को बढ़ाने के लिए कैडरों की भर्ती करता है व योजना तथा अपनी नीतियों को जबरन अपनाना शुरू कर देता है। किसानों के लिए नारा होता है – ''जोतने वाले को जमीन और क्रांतिकारी किसान कमेटियों के हाथों में हुकूमत''।

छापामार क्षेत्र (Gureilla Zone)

लाल प्रतिरोध क्षेत्र को अपनी सैन्य कार्रवाइयों से नक्सली इसे छापामार क्षेत्र में विकसित करते हैं जहां ये पुलिस तथा अर्धसैनिक बलों की टुकड़ियों पर घात लगा कर हमला करते हैं। इस प्रकार के गुरिल्ला युद्ध में उनकी नीति होती है कि जहां भी शत्रु कमजोर हों, उन्हें क्षति पहुंचाई जाए तथा जब शत्रु मजबूत हों तो वहां से भाग खड़े हों। इन क्षेत्रों में भू–संरचना तथा अर्धजंगली क्षेत्र का लाभ उठाकर छापामार युद्ध को जनता के स्वतः सहयोग या जबरन सहयोग सुनिश्चित कर लम्बे समय तक चलाने की नीति होती है। युद्धनीति ये होती है कि दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य लेकर इन क्षेत्रों को आधार क्षेत्रों में रूपांतरित किया जा सके। चूंकि क्षेत्र में यातायात तथा संचार व्यवस्था भी काफी पिछड़ा होता है इसलिए पुलिस को शुरूआती तौर पर काफी क्षति होती है और इस क्षति को कैडरों के मनोबल बढ़ाने में इस्तेमाल कर नक्सली बहुत हद तक एक सैन्य नेटवक्र स्थापित करने में सफल भी होते हैं। उनकी क्रांति के 'स्कीम' में यह एक महत्वपूर्ण चरण है।

आधार क्षेत्र (Base Area)

दीर्घकालीन लोकयुद्ध (Protracted People's War) को बढ़ाने के लिए नक्सली संगठित जनसेना की स्थापना तथा विकास पर केंद्रित होकर क्रांति के स्तर को राजनीतिक लाभ तथा सत्ता हथियाने के दिशा में बढ़ाते हैं। छापामार युद्ध के जरिए जन सेना और ग्रामीण लाल आधार इलाकों के निर्माण कार्य को महत्व देते हुए दुश्मन (यानी की पुलिस एवं सरकार) की शक्तियों को नष्ट करने के प्रयास किया जाता है। आधार क्षेत्र इनके गहन सैनिक एवं राजनीतिक क्रियाकलापों का गढ़ होता है। यहां संघर्ष ज्यादा हिंसक एवं जटिल होता है। तथाकथित कृषि क्रांति का सबसे हिंसक रूप आधार क्षेत्रों में होता है। यह युद्ध को नक्सली Gureilla War Fare (छापामार युद्ध) से Mobile

Warfare (चलायमान युद्धनीति) में भी परिवर्तन का प्रयोग करते हैं। प्रशासन इनसे निपटने में असहाय नजर आता है या इस प्रकार की छवि नक्सलियों द्वारा प्रस्तुत की जाती है जिससे देश का आम जनता में भय एवं आतंक पनपने लगता है। सरकार को अनेक प्रकार के विरोध एवं चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

मुक्त क्षेत्र

अधिकार क्षेत्रों के कुछ हिस्सों या संपूर्ण हिस्सा में पूर्णतः राजनीतिक सत्ता को कब्जे में किए जानेवाले क्षेत्रों को नक्सली मुक्त क्षेत्र कहते हैं तथाकथित तौर पर नक्सली यहां सरकार की अनुपस्थिति तथा अपनी सरकार की उपस्थिति को प्रसारित करते हैं। दंडकारण्य के अबुझमांड को नक्सलियों के अनुसार उनका ''मुक्त क्षेत्र'' (Liberated Zone) है। लाल प्रतिरोध की ये पराकाष्ठा है जहां क्रांतिकारी जन समिति का अधिकार होता है। आधार क्षेत्रों को मुक्त क्षेत्रों में रूपांतरित करने के लिए इनका जनता पर निम्नलिखित क्रियाकलापों पर जोर रहता है –

- प्राधिकार को उखाड़ फेंकना।
- सशस्त्र जनमिलिशिया को सशक्त करना।
- सरकार को टैक्स देना बंद करना।
- वनकर्मी, पुलिस तथा नौकरशाहों के प्रवेश तथा हस्ताक्षेप पर पूर्णतः पाबंदी।

नक्सलियों के अनुसार ''एक मुक्त क्षेत्र वह विशेष क्षेत्र होता है जहां शत्रु का पूरी तरह सफाया हो चुका है और जहां क्रांतिकारी जन सरकार का शासन स्थापित हो चुका होता है। यह एक केंद्रीकृत कमान के तहत अच्छी प्रकार से प्रशिक्षित सेना के देख–रेख में होता है।

तीन जादुई हथियार (Three Magic Weapons)

(सर्वहारा वर्ग की पार्टी, जनसेना, क्रांतिकारी संयुक्त मोर्चा)

नक्सली माओ के सिद्धांत पर कार्य करते हुए क्रांति की विजय के लिए पार्टी, सेना और संयुक्त मोर्चे के बीच संबंधों को आधार मानते हैं। माओ के अनुसार, ''संयुक्त मोर्चा तथा सशस्त्र संघर्ष दुश्मन को हराने के दो बुनियादी अस्त्र हैं। संयुक्त मोर्चा, सशस्त्र संघर्ष चलाने के लिए कायम किया गया संयुक्त मोर्चा है और पार्टी एक ऐसे बहादुर

योद्धा की तरह है जो शत्रु पर धावा बोलने और उसे तहस–नहस करने के लिए इन दो अस्त्रों–संयुक्त मोर्चा तथा सशस्त्र संघर्ष को उठाए हुए है। इसी रूप में ये तीनों एक दूसरे से संबंधित हैं।''

पार्टी

नक्सली नेता कहते हैं कि, ''लेनिन ने हमें सिखाया है – सर्वहारा वर्ग के पास सत्ता के लिए संघर्ष में संगठन के सिवा कोई दूसरा हथियार नहीं है।

लेनिन और माओ के सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए नक्सली पार्टी, सेना और संयुक्त मोर्चे को क्रांति के लिए जादुई हथियार मानते हैं। नक्सली पार्टी को अपराजेय बनाने के लिए तथा क्रांति को अंतिम नेतृत्व प्रदान करने की धुरी मानते हुए भूमिहीन व गरीब किसान खेतिहर मजदूर तथा औद्योगिक संगठनों के मजदूरों के बीच पार्टी इकाइयों का त्रिकोण कर ज्यादा से ज्यादा लोगों को निरंतर आंदोलन से जोड़ने की कोशिश करते हैं। नक्सलियों के अनुसार, ''पार्टी को चाहिए कि वह जनता को लोकयुद्ध के लिए तैयार करने के वास्ते विभिन्न वर्ग–संगठनों में संगठित करे, उन्हें राजसत्ता के विरुद्ध संघर्षों में लामबंद करे और उसमें राजनीतिक सत्ता पर कब्जा करने की चेतना विकसित करे।''

नक्सलियों की योजना शुरू–शुरू में पार्टी की नीतियों की गोपनीयता को बनाए रखने की है जिसे लंबी अवधि तक भूमिगत रहकर सही मौके का इंतजार करे। पार्टी में जनवादी केंद्रीयता को लागू करने के लिए सामूहिक नेतृत्व को शक्तिशाली बनाने की महत्वपूर्ण पूर्व शर्त है।

जन सेना

माओवादी विचारधारा के अनुयायी बिना जनसेना के लोकयुद्ध की कल्पना नहीं करते। माओ का कथन है कि, ''यदि जनता के पास जन सेना नहीं है तो उसके पास कुछ भी नहीं है।'' इसलिए राजनीतिक सत्ता पर कब्जा करने के लिए जन सेना का निर्माण, सर्वहारा वर्ग द्वारा दीर्घकालीन लोकयुद्ध के अनुसरण में होगा। क्रांति सशस्त्र होनी है इसलिए जनसेना की शक्ति पर ही लक्ष्यों का प्राप्त होना निर्भर है। पार्टी और जनसेना के संबंधों के बारे में माओं ने कहा, ''बंदूक को पार्टी के

आदेश पर चलना चाहिए और इस बात की हरगिज इजाजत नहीं दी जा सकती कि पार्टी बंदूक के आदेश पर चले।''

नक्सली मानते हैं कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश में जनसेना मजदूर व किसान वर्ग के नेतृत्व तथा प्रत्येक सदस्य को जनता की सेवा करने के महान लक्ष्य से अनुप्राणित हो – वे मानते है कि PLGA का गठन नक्सलियों के इसी प्रयास का हिस्सा है। सशस्त्र संघर्ष में जन सेना सरकार को चुनौती देने के लिए अनेक हिंसक एवं घृणित कार्यों में लगी रहती है। युद्ध की नीति ''छापामार टैक्टिस'' होती है।

क्रांतिकारी संयुक्त मोर्चा

सर्वहारा वर्ग, किसान, शहरी निम्न पूंजीपति तथा राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग– ये चार प्रमुख वर्ग हैं जिनके बीच संश्रय की नक्सलियों की योजना ''संयुक्त मोर्चा'' की अवधारणा के तहत है। नव जनवादी क्रांति को संपन्न करने के लिए क्रांतिकारी रणनीतिक संयुक्त मोर्चा कायम पर सबसे ज्यादा महत्व देना है। इस मोर्चे से शासक वर्ग के अंतर्विरोध का फायदा उठाकर सत्ता हथियाई जाएगी। इस मोर्चा में भी सर्वहारा वर्ग और किसानों के बीच का Alliance सबसे ज्यादा महत्व का है। यह मोर्चा जनता से जुड़ने का तथा उसका फायदा उठाने का हरसंभव प्रयास करेगी। नक्सलियों का मानना है कि ऐसा मोर्चा क्रांतिकारी आंदोलन और दीर्घकालीन लोकयुद्ध के सर्वाधिक कारगर है।

(ख) विकास एजेंसी की भूमिका

नक्सलियों की हिंसा से निपटने के लिए सुरक्षा बलों द्वारा एक समेकित नीति अपनाने की आवश्यकता है। भारत सरकार द्वारा गृह मंत्रालय के अधीन एक नक्सल प्रबंधन डिवीजन की स्थापना की गई है। इस डिवीजन ने ''अंतर–मंत्रालय ग्रुप'' (Inter Ministerial Group) भी गठित किया है जो नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में विभिन्न मंत्रालयों द्वारा चलाए जा रहे विकास कार्यों की प्राथमिकता हेतु ''नक्सल प्रबंधन डिवीजन'' प्रभावित राज्यों से स्थानीय विकास कार्यों की योजना की

समीक्षा कर त्वरित कार्रवाई सुनिश्चित कराने का प्रयास करती है।

जैसा कि माना जा रहा है कि नक्सलवाद आंदोलन के पनपने एवं प्रसारित होने में क्षेत्रों के आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़ापन एक मुख्य कारण है अतः इस मुद्दे को संस्थागत तरीके से हल करने की कोशिश की जा रही है। इसलिए पुलिस प्रतिनिधियों द्वारा भी सुरक्षा से सीधे संबंधित विकास कार्यों को भी समायोजित किया जाता है।

गृह मंत्रालय द्वारा नक्सलवाद समस्या को व्यापक तौर पर संबोधित करने के लिए प्रभावित राज्यों के मुख्यमंत्रियों को प्रधानमंत्री के साथ संगोष्ठी का आयोजन भी नियमित अंतराल के बाद कराया जाता है। उद्देश्य यह होता है कि इस समस्या के उन्मूलन के न सिर्फ केंद्र और प्रभावित राज्यों के बीच उच्च स्तरीय समन्वय रहे।

नक्सलियों के हमेशा से ही आर्थिक महत्व के ठिकानों को तोड़–फोड़ और विध्वंस का लक्ष्य बनाया है। यह निशाना दो कारणों से आमतौर पर बनाए जाते रहे हैं। पहला – आर्थिक ठिकानों को नुकसान पहुंचा कर ''लेवी'' (धन उगाही) वसूली की जा सके। आस–पास के व्यापारी इस प्रकार की विध्वंसक कार्रवाई में न ही अपनी संपत्ति खोना चाहते हैं और न ही व्यापार में बाधा उत्पन्न होने देना चाहते हैं साथ पुलिस की व्यापक सुरक्षा हर आर्थिक ठिकानों को मुहैया कराई जाए यह राज्यों के लिए संभव नहीं हो पा रहा है। दूसरा – इस प्रकार की गतिविधियों से आम जनता में जो आक्रोश पैदा होता है उसे सरकार के खिलाफ (Channelise) किया जाए। सरकार को इस तरह की कार्रवाई के लिए मजबूर करने का कारण बताना चाहते है कि पीड़ित जनता में एक संदेश जाए कि प्रशासन का प्रभाव इन क्षेत्रों में नगण्य है। यह संदेश लोगों में फैले कि सरकार गरीब आदिवासी, दलित तथा किसानों की सुरक्षा एवं विकास के लिए किसी भी प्रकार से आर्थिक ठिकानों को लक्ष्य बना रहे हैं वह निम्नलिखित आंकड़ों से पता चलता है –

माओवादियों के द्वारा आर्थिक ठिकाने पर आक्रमण की

तालिका

	वर्ष		2007		2008		2009		2010		2011 28 फरवरी तक	
				योग		योग		योग		योग		योग
आर्थिक	छत्तीसगढ़	एन एम डी सी	4		0		2		11		0(3)	
		एस्सर पाइप लाईन	1		3		1		1		–	
		बी आर ओ ग्रामीण सड़क	1		0		0		0		–	
		निर्माण योजना	0		1		4		3		–	
	उड़ीसा	एस्सर पाइप लाइन	0		0		5		1		–	
		ग्रामीण सड़क	0	07	0	04	2	17	4	23	2(0)	2(3)
	मध्य प्रदेश	ग्रामीण सड़क निर्माण योजना	0		0		0		1		–	
	बिहार	सीमेंट प्लांट	1		0		0		0		–	
		सोलार प्लेट	0		0		2		0		–	
		ग्रामीण सड़क निर्माण योजना	0		0		1		1		–	
	झारखंड	ग्रामीण सड़क										
		निर्माण योजना	0		0		0		1		–	
	बिहार		9		11		8		16		1(5)	
	छत्तीसगढ़		18		6		5		8		1(1)	
	झारखण्ड		15		7		17		13		4(4)	
रेलवे	उड़ीसा		2	46	0	25	10	46	7	53	3(4)	9(14)
	पश्चिम बंगाल		2		1		6		7		–	
	उत्तर प्रदेश		0		0		0		2		–	
	टेलीफोन											
	एक्सचेंज/											
पावर	बिहार		0		14		24		14		1(3)	
	छत्तीसगढ़		3		15		10		2		1(1)	
	झारखंड		0	05	10	43	14	66	6	44	0(5)	5(16)
	उड़ीसा		2		4		18		17		3(6)	
	पश्चिम बंगाल		0		0		0		1		0(1)	
पॉवर/	छत्तीसगढ़		0	00	0	00	0	0	0	1	–	0
प्लांट	पश्चिम बंगाल		0		0		0		1		–	
मैगनीज	उड़ीसा		0		0		1		1		0(1)	
झारखंड			04	05	4	06	2	03	6	8	1(2)	4(3)

	छत्तीसगढ़		01		2		0		0		3(0)	
	पश्चिम बंगाल		0		0		0		1		—	
तेल/ ट्रांसमिशन	छत्तीसगढ़		10		23		7		1		2(0)	
	उड़ीसा		0	10	01	24	0	7	0	2	—	2(0)
	झारखण्ड		0		0		0		1		—	
पंचायत												
भवन	छत्तीसगढ़		2		2		0		3		—	
	झारखण्ड		0		0		7		4		0(1)	
	बिहार		0	03	0	02	3	15	0	25	1(0)	3(4)
	उड़ीसा		0		0		3		11		0(1)	
	पश्चिम बंगाल		1		0		2		7		2(2)	
स्कूल	छत्तीसगढ़		38		19		7		13		—	
बिल्डिंग	झारखण्ड		3	4	37	7	1(2)					
	बिहार		1	42	0	23	21	70	10	38	2(1)	3(4)
	उड़ीसा		0		0		5		8		0(1)	
	जंगली											
	रास्ते		63	63	41	41	126	126	158		22(17)	22(17)
	योग		181	181	168	168	350	350	348	348	50(61)	50(61)

भारत सरकार आर्थिक ठिकानों को सुरक्षित करने के लिए राज्य सरकारों को प्रभावित क्षेत्रों में दूर–दराज के इलाकों में पुलिस थाना, कैंप और पोस्ट लगाने की सलाह देती रही है। इसके साथ ही इन क्षेत्र में पुलिस/अर्धसैनिक बलों द्वारा परिचालन/पेट्रोल द्वारा प्रभाव स्थापित कराना चाहती है। लेकिन इन क्षेत्रों की विशालता के कारण यह एक कारगर नीति नहीं प्रतीत होती है। प्रभावित क्षेत्रों में, आवागमन को सुधारने हेतु स्थानीय लोगों को रोजगार मुहैया कराने हेतु तथा विकास कार्यों की नींव रखने हेतु ''आर्थिक मामलों की कैबिनेट कमेटी'' ने ''रोड रिक्वायरमेंट प्लान'' (Road Requirement Plan) की पहल की है। इस योजना के तहत प्रभावित आठ राज्यों में 34 जिलों में 5477 कि.मी. राष्ट्रीय राजमार्ग बनवाने का प्रावधान है। इस परियोजना में 203 कार्यों को रू. 7300 करोड़ की लागत से किया जाएगा। इसमें 1126 कि.मी. राष्ट्रीय राजमार्ग एवं 435 कि.मी. राज्यमार्ग एवं गांवों से जोड़नेवाले महत्वपूर्ण सड़कों का निर्माण होगा। लेकिन इन कार्यों पर प्रगति बहुत ही धीमी है तथा दिसंबर 2010 तक सिर्फ रू. 340 करोड़ ही खर्च किए जा सके। मार्च 2011 तक रू. 750 करोड़ खर्च कर 240 कि.मी. सड़क बनाने का लक्ष्य है।

राज्य प्रस्तावित सड़क का निर्माण (कि.मी. में)

राज्य	कि.मी.
आंध्र प्रदेश	620
बिहार	674
छत्तीसगढ़	2092
झारखंड	753
मध्य प्रदेश	237
महाराष्ट्र	420
उड़ीसा	614
उत्तरप्रदेश	67
08 राज्य	**5477 कि.मी.**

यह एक विकासोन्मुख कार्यनीति है, अगर क्रियान्वयन में ईमानदारी बरती जाए। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में विकास कार्यों के लिए निजी भागीदारिता सुरक्षा कारणों से उत्साहवर्धक नहीं रही है। अतएव, सरकार ने इसके क्रियान्वयन के लिए निर्माणाधीन कार्यों की तीन कैटेगरी–कैटेगरी –1, कैटेगरी–2, कैटेगरी–3 es Security threat के आधार पर बॉटा है। कैटेगरी – 9 में कुल 1457 कि.मी. सड़क High security threat zone (उच्च असुरक्षित क्षेत्र) में आती हैं, जिसके लिए

राज्य सरकार को समुचित कार्यों में लगे कार्मिकों एवं कार्य स्थल पर समुचित सुरक्षा उपलब्ध कराने के निर्देश दिए। विवेचना की जाए तो इसी प्रकार के (Approach) को नक्सल क्षेत्रों में विकास कार्यों के लिए जरूरी है क्योंकि असुरक्षा के भय इन क्षेत्रों में विकास कार्य नहीं हो पाते जिससे न तो रोजगार के अवसर (Generate) हो पाते हैं, न ही किसी प्रकार से आर्थिक स्वालंबन के मौके। फलतः गरीबी तथा पिछड़ापन जारी रहता है जो कि ''नक्सलवाद'' का सतत् पोषण करता रहता है।

नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के 'मावन विकास सूचकांक' भी इस ओर इशारा करते हैं कि बहुत से अनेक क्षेत्र हैं जहां पर सरकार को और हस्ताक्षेप की आवश्यकता है। इन क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे रहनेवाले लोगों का प्रतिशत सबसे अधिक है। लोग अशिक्षित हैं तथा बड़ी मात्रा में कुपोषण के शिकार हैं। पीने का साफ पानी क्षेत्र के बड़ी जनसंख्या को उपलब्ध नहीं है और न ही प्रतिरोधात्मक स्वास्थ्य सुविधाएं। नतीजतन आम लोगों का जीवन स्तर विचारणीय है। नक्सली इसी बात का फायदा उठाकर थोड़ी बहुत छोटी–मोटी सहायता कर उन्हें अपने पक्ष में खड़ा करने में सफल हो जाते हैं।

भूमि से संबंधित समस्याएं

योजना आयोग द्वारा गठित विशेषज्ञों की समिति ने अपनी रिपोर्ट "Development challenges in Extremist Affected Areas" (2008) में उग्र आंदोलनों के बढ़ने एवं लोगों में असंतोष के कारणों की पड़ताल की तथा एक संतुलित रिपोर्ट सरकार को सौंपी। समिति की रिपोर्ट उपलब्ध सरकारी और गैर–सरकारी आंकड़ों एवं अध्ययनों के साथ–साथ जमीनी हालात से जुड़े लोगों से चर्चा कर, मीडिया तथा सामाजिक उत्थान में जुड़े लोगों से विचार–विमर्श करके तैयार की गई है। यह रिपोर्ट कई मायनों में सरकार के अपने कार्यों की Retrodinspection (अनुदर्शन) करने की जरूरत को प्रतिबिंबित करता है। देश में स्वतंत्रता के बाद से ही अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जिनकी प्राथमिकता की बात संविधान में की गई है, इसके लिए कानून एवं नीतियां भी बनाई गई लेकिन फिर भी जमीनी हालात नहीं बदले। कुछ ऐसे क्षेत्र जो उग्रवाद को जन्म दे रहे हैं वो है –

- भूमि सुधार की अनदेखी
- विस्थापन
- आजीविका के साधनों का अभाव
- सामाजिक दमन
- आदिवासियों की खराब सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति
- असुरक्षा
- साक्षरता
- स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव

भूमि से संबंधित समस्याएं

नक्सलियों ने अविकसित क्षेत्रों में, आम लोगों को उनकी आर्थिक विषमताओं एवं अभाव के आधार पर अपनी उग्र नीतियों को लोगों पर थोपा। लेकिन इसके पहले उनके अधिकारों के लिए आंदोलन एवं जोर–जबरदस्ती की जिससे कि लोगों में इस प्रकार की भावना पैठ कर गई। नक्सली उनके अधिकारों की लड़ाई लड़ने में सक्षम है। नक्सलियों द्वारा इस प्रकार के हस्तक्षेप इसलिए संभव हुआ, क्योंकि प्रशासन में गरीबों के सहायतार्थ संरचनात्मक हस्तक्षेप की पहल नहीं रही। लेकिन माओवादियों द्वारा विलय के बाद उनकी दखल ज्यादा हिंसक होने लगी तथा यह सरकार के अस्तित्व को चुनौती देने लगे। नक्सलियों द्वारा हस्तक्षेप कतई सिर्फ आम लोगों के हितार्थ नहीं है तथा राजनीतिक सत्ता हथियाने की ही रही है लेकिन इससे सरकार ने भूमि सुधार के अपने प्रयासों को तेज करने की पहल अवश्य की गई।

भूमि सुधार के लिए आंदोलन हमेशा से ग्रामीणों के एजेंड में रहा है तथा स्वतंत्रता पूर्व भी इसके लिए अनेक विद्रोह किया गए। ''जमीन जोतने वालों की'' नारे तथा नीति किसानों से जुड़े हर आंदोलन का हिस्सा रहा है। इसके लिए कानून भी बनाए गए तथा भूमि रखने की ऊपरी सीमा भी तय की गई। लेकिन क्रियान्वयन कुछ हद तक पश्चिम बंगाल में 1967 में नक्सलियों के आंदोलन के बाद ही हुआ। अन्य राज्यों ने इस प्रकार ज्यादा ध्यान नहीं दिया। नक्सली ने इस प्रकार बड़े किसानों की जमीन पर जबरन खेतिहर किसानों को कब्जा करवाने लगे। इस प्रकार के प्रयासों को किसानों के सशक्तिकरण के

रूप में जाना जाने लगा। आंध्र प्रदेश– जहां 1967 के आंदोलन के बाद दूसरे चरण के नक्सलवाद सबसे अधिक शुरूआती दौर में प्रभावी रहा – वारंगल, करीमनगर और अदिलाबाद जिले में हजारों एकड़ सरकारी एवं गैर सरकारी जमीन पर खेतिहर मजदूरों ने कब्जा कर लिया। लेकिन चूंकि यह जबरन तथा गैर कानूनी तरीके से किया गया था, अतः प्रशासन द्वारा अक्सर इसके खिलाफ कदम उठाए जाते रहे। जिससे कि किसानों में आक्रोश बढ़ता गया।

भूमि अधिग्रहण एक दूसरा मुद्दा है जो छोटे किसानों से उनकी रोजी–रोटी छीनता है तथा आदिवासियों से उनके जंगल/भूमि में उत्पादन को छीनता है। भूमि संबंधित मामले राज्य के शक्ति संप्रभुता का अटूट हिस्सा है तथा सार्वजनिक उपयोग के लिए सरकार के पास असीमित अधिकार हैं। यहां तक कि छोटे–मोटे संपत्ति संबंधी ऐसे मतभेदों के कारण अनेक संविधान संशोधन किए गए तथा राज्य की शक्ति को बढ़ाया गया। लेकिन यहां भी पुलिस एक्ट की तरह नियम अभी भी औपनिवेशक ब्रिटिश काल के हैं। देश में अभी भी भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 प्रभावी है। सिर्फ 1984 के अधिनियम में एक संशोधन कर यह प्रावधान किया गया कि मुआवजे की राशि की घोषणा कर सरकार बाद में कटौती नहीं कर सकती जबकि 1894 के अधिनियम में यह भी प्रावधान था। निःसंदेह ब्रितानी सरकार के जमाने के बने भूमि एवं कानून व्यवस्था से संबंधित बने सारे कानून अप्रासंगिक हो गए हैं तथा यह लोकतांत्रिक देश की जनता की उम्मीदों पर खरा नहीं उतरता! लेकिन सरकार की सुधारवादी नीतियों की रफ्तार बहुत कम है। समय का अंतराल अनेक उग्र आंदोलनों को जन्म दे रहा है।

उद्योगों और सूचना प्रौद्योगिकीकरण इत्यादि क्षेत्रो में विकास को केंद्रित रखकर GDP में इजाफा किया जा सकता है लेकिन आम आदमियों के जीवन स्तर में भी सुधार हो यह आवश्यक नहीं है। देश की राजधानी से सटे ग्रेटर नोएडा के भट्ठा–पारसौल गांवों में अप्रैल–मई 2011 में किसानों की भूमि अधिग्रहण कर उचित मुआवजे न देने के कारण हिंसक आंदोलन हुए और कई जानें गई। इस प्रकरण में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा किसानों की जमीन की कीमत पर धन उगाही अनुचित है लेकिन सरकार इसे कानूनों के अनुसार प्रदत्त अधिकार क्षेत्र में मानती है। फलतः जब जनता विद्रोह करेगी तो

हिंसक और गैर कानूनी तरीके ही अपनाएगी और नक्सली जो शहरों के तरफ बढ़ने का इरादा कर चुके है, वे ऐसे मौके का फायदा उठाने में नहीं चूकेंगे।

अगर नक्सलियों के सैन्य नीति की सूक्ष्म समीक्षा करें तो यह आभास होता है कि आंदोलन के हर प्रकार के अभियानों में जन मिलिशिया की भूमिका पर काफी ध्यान केंद्रित किया गया है। उद्देश्य साफ है कि देश में पिछड़े क्षेत्रों में भुखमरी है, दमन है और किसान आत्महत्याएं कर रहे हैं। एक आर्थिक शक्ति के रूप में उभरता देश के लिए ''भूख से मौत'' जैसे तथ्य अस्वीकार्य है। लेकिन यह भी तथ्य है कि हर साल हजारों टन अनाज सही रख–रखाव के अभाव में सड़ रहा है। सरकार न तो उचित भंडारण की व्यवस्था कर पा रही है, न ही इसे वितरित करने की सही नीति बना पा रही है। उच्चतम न्यायालय भी इसे गरीबों को मुफ्त बांटने का निर्देश दे चुकी है। लेकिन सरकार इसे सार्वभौमिकता से जोड़कर गरीबों के देश में विकसित अर्थव्यवस्था के प्रभावों से वंचित ही रखा गया। इस प्रकार की कानूनी व्यवस्थाएं समाज में सिर्फ वंचितों में आक्रोश पैदा करती है तथा सरकार के प्रति घृणा। नतीजन सरकार में सबसे प्रत्यक्ष रूप में पहचानी जाने वाली संस्था पुलिस इनके आक्रोश एवं हिंसा का शिकार बनती है।

नक्सलियों द्वारा पुलिस को निशाना बना उनके उद्देश्यों को इसलिए पूरा नहीं कर पाती क्योंकि भूमि सुधार, भूमि अधिग्रहण एवं जंगल से संबंधित विभागों एवं कार्मिकों को नक्सलियों के आंदोलन एवं हिंसा का सामना नहीं करना पड़ता। उनके बीच किसी प्रकार की समस्या के समाधान का कोई दबाव नहीं बनता अगर बनता भी है तो कई गैर कानूनी रास्ते अपनाकर ये नक्सलियों को भी खरीदने का दंभ रखते हैं। लेकिन पुलिस गैर कानूनी तरीके से कब्जा की गई जमीन के जोतदारों को कानूनी कार्रवाई करती या करने के नाम पर शोषण का भी आरोप है जिससे कि पुलिस की प्रति हिंसा से लोगों को संतोष ही मिलता है।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार लगभग 39% जंगल में Encroachment है। विशेषज्ञ समूह इसे Encroachment न मान कर कब्जा (Occupation) मानते हैं। 1980 के पहले के कानूनों के तहत ऐसे कब्जा करके रहने

वाले लोगों को एक हक दिया जा सकता है तथा कुछ राज्य सरकारों ने ऐसा किया भी। लेकिन Forest Conservation Act 1980 के बाद राज्य सरकार के पास ये अधिकार नहीं रहे। जमीनी हालात से बेखबर यह अधिनियम नक्सलियों के लिए जंगल में जीवनयापन करनेवाले आदिवासियों को रहनुमा बनने का अवसर देता है और यह तबका नक्सलियों के साथ खुलकर समर्थन में है।

सरकार ने विकास कार्यों की पहुंच को बढ़ाने के लिए पिछले कुछ सालों में अनेक कानून बनाए। जैसे– Scheduled Tribes and other traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act 2007, National Mineral Policy (2007) उपरोक्त नीति आदिवासियों के हक में अनेक कानूनी प्रावधानों को संस्थागत करता है जिससे कि जंगल उत्पादन पर रहनेवाले को उनका हक मिले तथा खनिज, खदानों से भी स्थानीय लोगों को आर्थिक लाभ हो।

भारतीय पुलिस का परंपरागत तरीके से जो कार्यक्षेत्र परिभाषित किया गया है, उसके विकास कार्यों में किसी भी प्रकार की रचनात्मक भूमिका नहीं माना जाता रहा है। लेकिन नक्सलवाद ने पुलिस की भूमिका को नए सिरे से परिभाषित करने के लिए मजबूर कर दिया। सिर्फ कानून व व्यवस्था बनाए रखनेवाले राज्य पुलिस बलों को अर्धसैनिक बलों की तरह परिचालनिक दक्षता हासिल करनी पड़ रही है। उसी तरह विकास एजेंसी की भी भूमिका निभाने की आवश्यकता की है। विकास कार्यों के लिए सुरक्षा के साथ–साथ विकास कार्यों की आवश्यकता को भी Identify करने का भी कार्य करना होगा।

सुरक्षा के डर से वन विभाग तथा राजस्व Revenue विभाग के कार्मिक दूर–दराज के देहाती इलाकों में नहीं जाते। जिसके कारण सरकार क्षेत्र के जनसंख्या की आर्थिक स्थिति का सही आकलन नहीं कर पाती। पुलिस Proactive (सक्रिय) भूमिका में निम्नलिखित कार्यों को क्रियान्वित करवाने के प्रयास करने होंगे –

- वन की जमीन जिस पर आदिवासी वर्षों से रह रहे हैं तथा किसी प्रकार से पर्यावरण के वहां रहना उनका घातक नहीं है, ऐसे लोगों/परिवारों की सूची 'बनाकर वन/राजस्व विभाग से उनकी स्वामित्व स्थापित करवाने का प्रयास करना होगा।
- सरकारी जमीन जो कि जीवन यापन के लिए आदिवासी/दलितों द्वारा वर्षों

से कब्जे में है ऐसे भूमि एवं परिवारों को पहचानकर स्वामित्व दिलाने का प्रयास।
- व्यापार में बिचौलियों से गरीब किसान एवं व्यापारियों को शोषण से बचाने के लिए कड़ी नजर रखने की आवश्यकता है।
- खेतिहर किसान एवं मजदूरों को तो न्यूनतम दैनिक मजदूरी के अनुसार भुगतान किया जाता है न ही मजदूरी पर्याप्त होती है। ऐसे शोषण से बचाने में पुलिस को मजदूरों को मिलने वाले Wages पर ध्यान रखना होगा तथा किसी भी प्रकार से नियम के उल्लंघन को कानून सम्मत तरीके से निपटाया जाए।
- राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना के तहत मजदूरी के समान व पर्याप्त अवसर दिलाने के लिए पुलिस को पहल करनी होगी। वंचित जनसंख्या के उन हर आदमियों को अर्थोपार्जन के अवसर दिलाने ही होंगे अन्यथा ये नक्सलियों के बहकावे के आसानी से शिकार हो जाएंगे।
- सरकार द्वारा National Rural Employment Guarantee Act (NREGA) 2005 और The Scheduled Tribes and other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act 2006, National Rehabilitation & Resettlement Policy 2007 इत्यादि कानून को लाया है। पुलिस अधिकारियों को भी इसकी बारीकियां समझनी होंगी। इन नियमों का प्रशासन के अन्य विभागों द्वारा सही और ईमानदारी से क्रियान्वयन हो रहा है या नहीं इस पर ध्यान देना होगा। प्रोजेक्ट में शिकायत की जांच प्रक्रिया समयानुसार पूरा कर दोषी को दंडित करवाने का प्रयास तथा वंचितों को इससे होनेवाले लाभ एवं फायदों के बारे में जागरूक बनाने के प्रयास करने होंगे। इस प्रकार की जागरूकता फैलाने का कार्य पुलिसिंग का भाग नहीं है लेकिन नक्सलवाद से उपजी विशेष परिस्थितियों के कारण विशेष भूमिका निभाने से यह आर्थिक विषमताओं से उत्पन्न समस्या कानून व व्यवस्था की समस्या नहीं बन पाएगी।
- नक्सल प्रबंधन डिवीजन गृह मंत्रालय से सड़क यातायात मंत्रालय से सामंजस्य कर Road Requirement plan की जो स्कीम शुरू की है, उसमें यह देखा जा रहा है कि ठेकेदार नक्सलियों के डर से असुरक्षा की भावना या नक्सलियों के द्वारा अत्यधिक 'लेवी' की मांग के कारण कार्य करने के इच्छुक नहीं रहते। अतः पुलिस को कार्यस्थल की सुरक्षा एवं

कार्मिकों की सुरक्षा की व्यवस्था किसी न किसी प्रकार से करनी होगी। ऐसा नहीं है कि पुलिस इस तरह की सुरक्षा व्यवस्था नहीं करना चाहती। लेकिन पुलिस की संख्या इसके द्वारा किए जानेवाले ड्यूटी इत्यादि के लिए पर्याप्त नहीं हो पाती है। राज्य सरकारों की जिम्मेदारी बनती है कि जब शासन का अन्य विभाग आगे बढ़कर नक्सल क्षेत्र में कार्य नहीं कर रहा है तो पुलिस विभाग को सशस्त्र बनाकर उसकी भूमिका को बढ़ाए तथा आर्थिक विकास के कार्यों में लगाए।

(ग) सामाजिक सुधार की भूमिका

समाज में शक्तिशाली वर्गों द्वारा शोषण से सबसे ज्यादा असंतोष पैदा होता है। यह असंतोष आक्रोश को जन्म देता है तथा इसी आक्रोश से आंदोलन पैदा होता है। असंतोष जितना ज्यादा होगा आंदोलन की तीव्रता उतनी ही अधिक होगी। आम आंदोलन को नेतृत्व मिल जाए या ऐसे वर्ग का बल मिल जाए जो उसक अधिकारों के लिए लड़ाई को बढ़ाना चाहता है तो आंदोलन उग्र व हिंसा का रूप ले लेता है। ये आंदोलन उतना ही हिंसक होगा जितना असंतुष्ट वर्ग के पास खोने के लिए वंचना एवं धिक्कार के अलावा कुछ नहीं है। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सामाजिक दमन का इतिहास है तथा सुशासन द्वारा इसके सुधारने के सारे प्रयास नाकाफी रहे हैं। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में आदिवासी एवं दलित बहुसंख्यक हैं। लेकिन इनको समाज के मुख्यधारा से जोड़ने की कवायद बड़े अनमने ढंग से हुई है।

योजना आयोग के विशेषज्ञ समूह ने अपने रिपोर्ट में राज्यों के नक्सल प्रभावित और बिना नक्सल प्रभाववाले जिले का तुलनात्मक अध्ययन किया तथा इसके आंकड़े साफ तौर पर सामाजिक पिछड़ेपन की प्रतिबिंबित करते है –

जिलेवार तुलना का विवरण

	उड़ीसा			झारखंड			छत्तीसगढ़			बिहार			आंध्रप्रदेश		
	नक्सल प्रभावित	कम प्रभाव		नक्सल प्रभावित	कम प्रभाव		नक्सल प्रभावित	कम प्रभाव		नक्सल प्रभावित	कम प्रभाव		नक्सल प्रभावित	कम प्रभाव	
	जिला	वाले	विकसति	जिला	वाले	विकसति	जिला	वाले	विकसति	जिला	वाले	विकसति	जिला	वाले	विकसति
अनु.जाति एवं जनजाति प्रशित	65	23		45	30		69	36		19	18		28	22	
सारक्षता दर	44	76		40	51		50	68		46	48		56	68	
शिशु मृत्यु दर	123	73		NA	NA		76	57		NA	NA		34	28	
जंगल क्षेत्र	39	15		38	46		36	47		31	53		50	56	
ग्रामीण	63	37		46	36		47	31		53	50		56	41	
परिवार															
बिना किसी															
संपति के	%														

नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में लोग दबंगों के अत्याचार का शिकार होते हैं। औरतों के साथ बलात्कार, युवकों से मार–पीट एवं प्रताड़ना तथा 'बेगारी' (Forced Labour) अभी भी जारी है। ज्यादातर समाज जाति के आधार पर बंटा है तथा उच्च जाति के लोगों के अपने अलिखित कानून होते हैं जिनका पालन दलितों को करना होता है। लोग बदहाली के साथ–साथ अपमान की जिंदगी जीते हैं। कानूनन किसी प्रकार की समस्या का समाधान नहीं हो पाता क्योंकि प्रशासन से जुड़े लोगों का दबंगों के प्रति ही झुकान रहता है। वे उन्हीं के हितों को साधने में लगे रहते हैं।

सामाजिक अपमान को नक्सलियों ने अपने सबसे अकाट्य हथियार के रूप में इस्तेमाल किया है। नक्सलवाद के प्रति अभाव से ज्यादा अपमान ने शोषित लोगों को आंदोलन के प्रति प्रेरित किया है। नक्सली जब किसी को भी अपने ''कैडर'' में शामिल करते हैं तो सबसे पहला काम उसे गांव/समाज में सम्मान दिलाने का करते हैं। कोई भी आदमी उसे दुत्कार नहीं सकता, न ही अपमान करता है। वास्तव में उसे कामरेड बना कर एक heroic छवि दी जाती है। बहुतों को हथियार दिया जाता है। इससे भयभीत एवं आतंकित होकर समाज का दबंग वर्ग भी उसे सम्मान से संबोधित करता है तथा आवभगत करता है। यह अपमान से घुटन के बदले सम्मान की बुलंदी लोगों को सबसे ज्यादा प्रोत्साहित करती है कि नक्सली संगठन में शामिल हों और ऐसी ही सशक्तिकरण का अनुभव करें। गौर करें तो पाएंगे कि हर नक्सली नेता एवं कैडरों के नाम के आगे 'जी' लगा रहता है। नाम के आगे 'जी' लगाकर पुकारना या संबोधित करना सिर्फ उच्च जाति के प्रभावशाली लोग या शासकों के लिए आरक्षित हुआ करती थी। इस प्रकार की व्यवहार कुशलता भले ही भयभीत होकर क्यों न की जा रही हो, शोषित वर्ग को सामाजिक उत्थान की एक सार्थक सीढ़ी लगती है।

इस मनःस्थिति में बदलाव के लिए पुलिस को अलग तरीके से प्रशासन में सकारात्मक हस्तक्षेप की जरूरत है। शिक्षा का भरपूर प्रचार–प्रसार लोगों में सही–गलत चुनने का विवेक पैदा करेगा। प्राइमरी शिक्षा तथा स्कूल की शिक्षा बच्चों तथा युवाओं को रचनात्मक तरीके से व्यस्त रखते हुए ज्ञान देगा। इसके लिए जरूरी है कि

नक्सली स्कूलों को विस्फोट से नहीं उड़ाएं। स्कूल सुचारू रूप से चलता रहे इसलिए ऐसी स्कूल बिल्डिगों को नक्सलियों के निशाने से बचाना होगा। हर ऐसी बिल्डिग की पुलिस द्वारा सुरक्षा की जाए यह किसी भी सरकार के लिए संभव नहीं है। अतः स्कूलों की उपयोगिता के बारे में स्थानीय लोगों में जागरूकता फैलाने तक रुचि पैदा करने का कार्य भी पुलिस को करना होगा, प्रशासन का कोई अन्य महकमा या गैर सरकारी संस्थानों की पहुंच इन इलाकों तक नहीं है। लेकिन पुलिस नक्सलियों का पीछा करते हर ऐसे जगह पर जाती है तो क्यों न प्रति नक्सली अभियान के साथ–साथ शिक्षा के प्रचार–प्रसार की भी भूमिका निभाई जाए। एक शिक्षित युवक न सिर्फ अपने को नक्सली प्रभावों से अपने को मुक्त रखेगा बल्कि आर्थिक उत्पादकता के प्रति प्रेरित रहेगा तथा अपने परिवार को पालने के लिए दक्ष होगा। ऐसा हर युवक दूसरों को समाज की मुख्य धारा में 'जुड़ाव' के प्रति रुचि पैदा करेगा।

नक्सलवाद के परिप्रेक्ष्य में पिछड़ों के सामाजिक उत्थान के लिए कोई विशेष अधिनियम या कानून नहीं बनाए गए हैं लेकिन संविधान में अनेक प्रकार के अन्य कानून पहले से ही विद्यमान हैं। पुलिस को सक्रिय होकर इसको लागू करवाना होगा। छुआछूत के विरोध में पहले ही कानून है तथा आदिवासियों को बराबर का सामाजिक दर्जा हो तथा आर्थिक अवसरों में विशेषाधिकार का प्रावधान है। लेकिन इस प्रकार के विशेषाधिकार का फायदा अब पढ़े–लिखे जागरूक लोग की पीढ़ी दर पीढ़ी उठा रहे हैं। पुलिस पिछड़े क्षेत्रों में लोगों के पास जाकर उनको उनमें अधिकारों के बारे में जागरूक एवं संवेदनशील बना सकती है।

पिछड़ा क्षेत्र कई प्रकार की रूढ़िवादी विचारधाराओं से भी ग्रस्त है। उदाहरण स्वरूप दंडाकारण्य क्षेत्र में शादीशुदा औरतों को ब्लाउज पहने का अधिकार 1980 के दशक में नक्सलियों द्वारा विरोध करने पर वहां के समाज ने इस बात को स्वीकार किया। बाल विवाह की प्रथा तथा औरतों के प्रति भेद–भाव ने समाज में आधी जनसंख्या को पिछड़ा बना रखा है। नक्सलियों ने औरतों के अधिकार के लिए भी सामाजिक लड़ाई लड़ी। जब नक्सली ऐसी सुधारवादी कार्य कर जनाधार बना रही है तो क्यों न पुलिस इस कार्य को संरचनागत तरीके से इसे अपनी ड्यूटी का

हिस्सा मान ले।

वर्तमान समाजिक संरचना में आदिवासी एवं पिछड़े वर्गों के खिलाफ संस्थागत भेद–भाव है। यह भेद–भाव गरीबी, राजनैतिक Disparities (असमानताएं) एवं विकास कार्यों के Selective approach के अनुसार अधिक बदतर होते गए। सुरक्षा बलों द्वारा परिचालन के समय मानवाधिकार का हनन एवं समांतर क्षति को रोकने पर कहीं न कहीं चूक रह जाती है जिसके कारण इन लोगों के मन में सरकार की एक Hostile छवि रहती है तथा यह लोगों की मनः स्थिति में गहरी पैठ कर जाती है। नक्सली के विरोध में समय–समय पर विभिन्न राज्यों के अनेक ग्रुप बन जाते हैं और अक्सर इन्हें पुलिस एवं सरकार का संरक्षण प्राप्त होते हैं। झारखंड के जमशेदपुर जिले में 2003–04 में नागरिक सुरक्षा समिति तथा छत्तीसगढ़ राज्य ''सलवा जुडुम'' जैसे आंदोलन प्रति नक्सल मुहिम के रूप में आए। ऐसे आंदोलनों का उच्चतम न्यायालय द्वारा सलवा जुडूम के विरुद्ध टिप्पणी करने से पहले तक सरकारों द्वारा इसे एक प्रभावी रणनीति का हिस्सा माना जा रहा था। लेकिन ऐसे संगठन के लोग अक्सर इन आंदोलनों की आड़ में अपनी निजी दुश्मनी या स्वार्थों के कारण अन्य लोगों को निशाना बनाते हैं, चूंकि इस प्रकार के आंदोलन से जुड़े लोगों के बीच से सटकर स्पेशल पुलिस ऑफिसर (SPO) बनाते हैं उन्हें हथियार एवं कुछ रकम प्रतिमाह दी जाती है इसलिए इन स्पेशल पुलिस अधिकारियों द्वारा अत्याचार एवं मनमानी भी सरकार के प्रति ही रोष पैदा करती है। सरकारी मंशा की ऐसे स्पेशल पुलिस अधिकारी न सिर्फ परिचालनिक सहयोग में हाथ बंटाएंगे बल्कि सामाजिक उन्नयन का हिस्सा बनेंगे–बिल्कुल ही गलत साबित हो रही है।

पुलिस को समाज के इन वर्गों जो अपने को शोषित और प्रताड़ित मानते हैं कि इन भावनाओं को समझना होगा। भले ही स्पेशल पुलिस अधिकारी उन्हीं आदिवासियों के बीच के क्यों न हों उनकी जबाबदेही नहीं होती इसलिए ये कई प्रकार के गैर कानूनी या ऐसे कार्यों में लगे रहते हैं जो लोगों की भावनाओं को ठेस पहुंचाती है। पुलिस को ऐसी किसी भी संगठन को सामाजिक दायरे में तथा स्थानीय समाज के Dynamics के अनुसार कार्य करने की छूट देनी चाहिए। यह दायरा कानूनी छूट से भले ही बहुत छोटा हो लेकिन यह

इसलिए जरूरी है कि नक्सल क्षेत्र में प्रभावित योग समाजिक तौर पर अपने को पक्षपात का शिकार मानते हैं तथा ये समझते हैं कि सरकारी तंत्र में उनकी कोई भी महता नहीं है।

पुलिस उन क्षेत्रों को चिह्नित कर सकती है जहां कि सामाजिक कुरीतियां लोगों को बुरी तरह प्रभावित कर रही हैं तथा सरकारी सहायता नगण्य है। न्याय–व्यवस्था ऐसे क्षेत्रों में न के बराबर ही है। अतः न्याय प्रदान के लिए नक्सलियों ने ''जन अदालत'' करने लगे। यह एक खतरनाक पद्धति है जिसमें लोगों की शिकायत पर मनमाने ढंग से नक्सलियों द्वारा सजा दे दी जाती है तथा नक्सलियों के समर्थन में न आने पर, नक्सलियों के मनमानी का विरोध करने पर या पुलिस के लिए जासूसी करने के आरोप में किसी को कुछ भी सजा दे दी जाती है। पुलिस सक्रियता दिखाकर और लोगों के सहयोग से इन ''जन–अदालतों'' को रुकवाने की मुहिम शुरू कर सकती है। आम जनता इससे न सिर्फ प्रशासन से जुड़ाव महसूस करेंगे बल्कि नक्सलियों के सही इरादों का भी पर्दाफाश होगा। यह कदम सामाजिक तौर पर स्थानीय लोगों के आत्म सम्मान के अनुरूप भी होगा।

इन स्थितियों को इस पृष्ठभूमि में भी देखना है कि विस्थापितों तथा वंचितों के लिए सरकार को जितने कदम उठाने चाहिए वे नहीं उठाए गए इसलिए इस कमी को जब हर प्रकार से पूरा करना है। भारत सरकार द्वारा दसवीं योजना के अध्ययन में यह स्वीकार किया गया है कि–''1951 से 1990 के बीच आंध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उड़ीसा में 21.3 मिलियन विस्थापित किए गए जिसे 8.54 मिलियन (लगभग 40%) आदिवासी थे तथा उनमें से केवल 2.12 मिलियन लोग ही पुनर्स्थापित किए जा सके। विस्थापितों की इतनी बड़ी तदाद बिना किसी आर्थिक व्यवस्था के छोड़ दिए गए। इतनी बड़ी जनसंख्या किस प्रकार जीवन यापन कर रहा था, इसके बारे में किसी प्रकार की सरकार के पास सोच नहीं थी।

सामाजिक उत्थान के लिए सबसे आवश्यक होता है लोगों की भागीदारिता तथा उनकी मांगों का समावेश क्योंकि पुलिस ऐसे प्रभावशाली लोगों की पहचान का जिला स्तर के प्रशासनिक बैठकों जिनमें योजनाओं को अंतिम रूप दिया जाता है, में शामिल करवाए

तथा हर प्रकार की सहायता कर यह सुनिश्चित करे कि लोगों का विश्वास ऐसी भागीदारिता में बना रहे।

जाति एवं धर्म के आधार पर जो भेदभाव किए जाते हैं उसके कारण अनुसूचित जनजाति एवं जाति का एक बड़ा तबका मनोवैज्ञानिक तौर पर तथाकथित विकसित मुख्यधारा से जुड़ने से कतराता है। उसे यह लगता है कि बिना किसी राजनैतिक या सामाजिक शक्ति से ऐसा जुड़ाव सिर्फ उनके लिए शोषण के ही नए मार्ग खोलेगी। बहुत सारी Perception भले ही सच्चाई से परे है तथा प्रशासन के इरादे हमेशा पक्षपात या भेदभाव से नहीं होते लेकिन यह जागरूकता भी जन जागरण द्वारा लाई जा सकती है। क्षेत्र के हर कोने–कोने में पहुंच के लिए पुलिस को ही ये जिम्मेदारी निभानी होगी। बहुत सारी घटनाओं या Perception के विकसित होने में जानकारी की कमी या गलत जानकारी या अफवाहों का फैलना जिम्मेदार रहता है।

सारी जानकारी खासकर आधिकारिक हो तो बहुत तरह की भ्रांतियां तथा Misconception को रोका जा सकता है। पुलिस अपनी इतनी विश्वसनीयता रखती है कि सूचनाओं के आदान–प्रदान में आम जनता विश्वसनीय माने। दरअसल, पुलिस अगर लोगों के पास जाकर नियमित बातचीत करे, उनका सुख–दुःख सुने, सहायतार्थ उत्साहित दिखे तो जनता उन्हें सर आंखों पर बिठा लेगी। पूर्वोत्तर राज्यों में अर्ध–सैनिक बलों द्वारा सिविल एक्शन कार्यक्रम के तहत या अन्यथा भी अनेक प्रयास के प्रयोग के तौर पर किए जाते रहे तथा इसका नतीजा बड़ा ही सकारात्मक रहा। वस्तुतः अपने आप को भारतीय संस्कृति एवं समाज से पूरी तरह अलग समझनेवाले लोगों का मुख्य धारा में Integration में ऐसे कार्य–संस्कृति का बहुत योगदान रहा है।

गृह मंत्रालय के पहल पर सिविक एक्शन कार्यक्रम के तहत ऐसे अनेक कार्यक्रमों को अर्ध सैनिक बल नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में कर रहे हैं। खासकर के.रि.पु.बल को इसमें अच्छा अनुभव है। इसी प्रकार के कार्य पूर्वोत्तर तथा जम्मू एवं कश्मीर में करने के कारण है। के.रि.पु. बल को जनता की जरूरत तथा उम्मीदों की अच्छी पकड़ है। इससे अनेक प्रभावी सिविक एक्शन कार्यक्रम चलाए गए तथा जनता के बीच एक सकारात्मक छवि बनी। इन प्रयोगों से राज्य पुलिस को सीखते हुए कार्यक्रमों को और वृहत और व्यापक बनाया जा सकता है।

निःसंदेह राज्य पुलिस की अपनी पहुंच और सार्थकता के कारण अधिक सफल होना अवश्यंभावी है। पिछड़ों के सामाजिक सशक्तिकरण की हरेक पहल उनके राजनीतिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण की कड़ी के रूप में भी जुड़ा रहता है।

इस प्रक्रिया को न सिर्फ समय लगता है बल्कि लोगों की धारणाएं भी समय के साथ–साथ धीरे–धीरे ही बदलती हैं। अतः लोगों को अपने अधिकरों के लिए शांति एवं कानूनसम्मत तरीके से विरोध करने के अधिकारों का ऐसे किसी प्रकार के विरोध के लिए प्रेरित करना चाहिए। इससे समस्याओं की जानकारी बड़े ही प्रारंभिक समय में लग जाएगी तथा प्रशासन समय रहते इस पर समुचित कारवाई कर सकती है। नक्सलियों को इस प्रकार न तो कोई मुद्दा मिलेगा, न ही लोग न ही विरोध प्रदर्शन का लक्ष्य बनाने के लिए कोई संस्था। इस प्रक्रिया से In fact नक्सलियों को अपना जनाधार बनाने का सबसे बड़ा हथियार ही खत्म हो जाएगा।

नक्सलियों द्वारा आम लोग/वंचितों जिनके हितों के लिए लड़ने का दंभ भरते हैं उनके खिलाफ अत्याचारों का बड़ा लंबा एवं घिनौना इतिहास रहा है। कुछ नक्सलियों का आम लोगों के अत्याचार की घटनाएं निम्न हैं –

- 13 अगस्त 2009, को कोयलीबेड़ा गांव कांकेर, छत्तीसगढ़ में नक्सलियों ने एक ही परिवार के 8 लोगों को जिंदा जला दिया जिसमें औरत एवं बच्चे शामिल थे। कुछ लोगों को अगवा कर लिया गया तथा अन्य लोगों को धमका कर यह समाचार प्रचारित किया गया कि पुलिस ने 13 लोगों की हत्या कर दी। मीड़िया में तथा अन्य मानवाधिकार संस्थानों की पुलिस और शिकार की कड़ी आलोचना की। पुलिस ने घटनास्थल पर पहुंचकर तहकीकात की पर तथ्य सामने आया कि नक्सलियों ने जमीन विवाद के कारण परिवार वालों की हत्या कर दी तथा इसके लिए पुलिस को जिम्मेदार बनाकर उस गांव से सटे क्षेत्रों में पुलिसवालों के प्रति घृणा पैदा कर आंदोलन को हिंसक बनाने की जमीनी हालत तैयार करना चाहते थे।
- नक्सली नेता, किशन जी के एक पूर्व सहयोगी मार्शल ने नक्सलियों के धन उगाही की नीति को निशाना' बनाते हुए यह बताया कि –''मै किशनजी से एक सवाल पूछना चाहता हूं कि क्यों किशन जी आदमी हर गरीब परिवार से भी रुपये 20 एवं 3 किलो चावल संगठन के लिए सहयोग के

नाम पर लेना चाहते हैं जबकि इन परिवारों की आर्थिक स्थिति इस मांग को पूरी करने की स्थिति में नहीं है। लोग नक्सलियों के भय से यह राशि एवं अन्न देते हैं।'' [* www.rashtriyaswabhimaan.org]

- आत्मसमर्पण किए अनेक महिला नक्सलियों ने आरोप लगाया कि पुरुष नक्सलियों द्वारा उनका शारीरिक शोषण होता है। उनके अनुसार 14–18 साल उम्र की नाबालिग लड़कियों को भी नक्सली अगवाकर उनका
- शारीरिक शोषण करते हैं। इन लड़कियों को सेक्स के अलावा वे खाना बनाने के लिए तथा बंब बनाने के लिए इस्तेमाल करते हैं। 20 वर्षीया सविता मुंडा जो नक्सलियों की बिहार में एरिया कमांडर थी, ने आत्मसमर्पण के बाद कहा कि वह अपने साथियों द्वारा लड़कियों के शोषण से डरकर आत्म समर्पण कर रही है।
- यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुसार जिस प्रकार माओवादी स्कूल बिल्डिंग को अपने विध्वंस का निशाना बना रहे हैं तथा छोटे बच्चों को हिंसक गतिविधियों के लिए प्रशिक्षण दे रहे हैं, यह अफगानिस्तान के तालिबानी नीतियों के समकक्ष है। अनेक रिपोर्ट के अनुसार झारखंड, छत्तीसगढ़ एवं उड़ीसा के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में नक्सली स्कूली छात्रों को लक्ष्य बनाकर उनके मन में सरकार एवं संपन्न लोगों के प्रति घृणा की भावना पैदा कर रहे हैं। इस प्रकार का Brain-wash वे एक सोची समझी रणनीति के अनुसार कर रहे है।

पुलिस उपरोक्त घटनाओं के बारे में लोगों को बताए तथा साथ ही नक्सलियों के द्वारा हिंसा जो आम लोगों के विरुद्ध की गई है कि तस्वीरें जारी कर जागरूकता अभियान शुरू कर सकती है। उदाहरण स्वरूप 23 फरवरी, 2007 को दरभागुड़ा, छत्तीसगढ़ में नक्सलियों ने तथाकथित 27 सलवा जुडुम कार्यकर्त्ताओं को मार दिया तथा 32 को घायल कर दिया। इनमें से अनेक को चाकू घोंप कर या पत्थरों से कुचल कर मार दिया गया। नक्सलियों ने यहां तक मासूम बच्चों को भी पत्थर से कुचल कर मारा। मानवता के प्रति घृणित अपराध के अनेक उदाहरण हैं जो नक्सलियों की वीभत्सता को दर्शित करता है।

नक्सलियों ने सामाजिक उत्थान के नाम पर अनेक Frontal संगठन स्थापित कर रखे हैं। इसकी संख्या लगभग 140 आंकी जाती है। चेतना नाट्य मंडल, महिला मंडल, बाल मंडल इत्यादि संगठन सामाजिक कार्य की आड़ में कैडरों की भर्ती करते हैं। ये संगठन

हरेक परिवारवालों को एक सदस्य माओवादी संगठन को देने के लिए मजबूर भी करती रही है। पुलिस को इन संगठनों को Expose करने की जरूरत है तथा जबरन कैडर की भर्ती पर अंकुश लगाने के क्षेत्र में पहल करनी होगी। संभवतः योग्य युवाओं को राष्ट्रीय रोजगार सुरक्षा जैसे प्रोजेक्ट के अधीन काम दिलाने पड़ेंगे।

(घ) जन जागरण अभियान में भूमिका

गंभीर नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में जैसा कि नक्सली कहते भी हैं कि भय, भूख और भ्रष्टाचार व्याप्त है। अनुसूचित जाति एवं जन जाति के वन उत्पादों पर अधिकार, भूमि पर अधिकार तथा जीवन–यापन के लिए संसाधनों का घोर अभाव है। उस पर परंपरागत रूढ़िवादिता के कारण सामाजिक दमन एवं अपमान के लोगों में पृथक्करण तथा अतिवाद की भावना व्याप्त है। यह अतिवाद उनके जीवन में कुछ भी नहीं होने के कारण उत्तरजीविता के लिए एक मात्र विकल्प के रूप में उन्हें दिखता है जब वे किसी प्रकार अन्य जन समुदाय से लूटकर या छीनकर या मारकर संसाधन को अर्जित किया जाए। यह पाशविकता है। लेकिन इस प्रकार की पाशविकता के लिए पाषाणकालीन स्थितियां भी जिम्मेदार हैं।

कुछ आंकड़ों की विवेचना करें तो यह साफ होता है कि संरचनात्मक एवं संस्थागत प्रयास कितने अधूरे रहे हैं –

''नक्सल प्रभावित राज्यों बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेश की जनसंख्या का 58% अनुसूचित जाति के हैं लेकिन उसमें 70% लोग गरीबी रेखा के नीचे हैं। इन राज्यों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों का गरीबी रेखा से नीचे का प्रतिशत 50 से अधिक है। देश की अर्थव्यवस्था में विकास होने के बावजूद इसका फल इन लोगों के पास नहीं पहुंचा है। जहां कि देश के अन्य जातियों के गरीबी रेखा में सुधार की दर 6.03% है वहीं अनुसूचित जाति के लिए गरीबी में सुधार 2.5% से कम तथा अनुसूचित जनजाति के 4.8% है। भयावह गरीबी इन परिवारों के लिए किसी प्रकार के उत्पादन अधिशेष की गुंजाइश नहीं छोड़ता जिससे कि एक सम्मान की जिंदगी का अभाव है ज्यादातर इस क्षेत्र के खेतिहर किसान हैं लगभग 45% तथा अन्य लोग निम्न स्तरीय कार्यों

में लगे हैं। एक आंकड़े के अनुसार ऐसे गरीब तबके के बहुत ही कम लोगों के पास आय के एक निश्चित साधन हैं।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार लगभग 1% आदिवासी परिवारों के पास साल के किसी भी महीने में पर्याप्त भोजन नहीं रहता तथा लगभग 3% आदिवासी जनसंख्या साल के कुछ महीनों में खाद्यान्न की कमी रहती है। भोजन की कमी 6% आदिवासी परिवारों को 4.5% दलित परिवारों को प्रभावित करती है। भुखमरी की घटना आदिवासी क्षेत्रों में सबसे ज्यादा है और आए दिन अपने बच्चों को अनाज के लिए बेचने की खबरें इन क्षेत्रों से आती हैं। (राधाकृष्णन और राय, 2005)

National Commission for Enterprises in the Unorganised Sector एक रिपोर्ट के अनुसार लगभग 392 मिलियन लोग रू. 20 प्रतिदिन के औसत खर्चे पर जीवन यापन करते हैं। निःसंदेह इनमें सबसे ज्यादा आदिवासी एवं दलित हैं।

भारत सरकार के 2008 के अनुमान के अनुसार दलित और अन्य समुदाय के बीच साक्षरता दर में 14% तथा आदिवासी और अन्य वर्गों में 22% का अंतर है। Infant mortality दर आदिवासियों के परिवारों में 84.27 (एक हजार में) है तथा दलितों के परिवारों में 83 (एक हजार में) जबकि अन्य समुदायों के लिए यह औसतन 61 (एक हजार में) है।

आदिवासी एवं दलितों के अलावा नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में जो अन्य समुदाय के लोग हैं उनकी आर्थिक स्थिति भी इन लोगों के समकक्ष है। देखा जाए तो अन्य वर्गों के लोग जो शहरों में हैं तथा शिक्षित हैं उनके आंकड़ों में जो अंतराल है वह इन क्षेत्रों में गरीबी के कारण काफी ज्यादा है।

आर्थिक विकास में एक और प्रकार का अंतर्विरोध खड़ा किया है, वह है ''शहरी इंडिया'' तथा ''ग्रामीण गरीब भारत''। देहाती क्षेत्रों में शिक्षा, स्वास्थ्य तथा कृषि एवं लघु उद्योगों के विकास पर नीतिगत कमजोरियां रही हैं।

उपरोक्त हालात ने लोगों में विद्रोह की भावना को कूटकर भर दिया है। अब इससे लोगों को उभारने की जरूरत है। प्रशासन को पुलिस के साथ मिलकर जन जागरण का प्रयास करना होगा। इन प्रयासों की दो दिशाएं होंगी – पहला कि लोगों में सरकार की

भागीदारिता सुनिश्चित करनी होगी दूसरा नक्सलियों के असली मंसूबों का पर्दाफाश करना होगा। नक्सली हिंसा एवं घृणा से हो रहे नुकसान से अवगत कराना होगा। स्थानीय जनता स्वयं भी नक्सलियों के घृणित इरादों को भांपने में सही सिद्ध हुई है तथा अनेक बार नक्सलियों का विरोध विभिन्न स्तरों पर किया गया। लेकिन सबसे संगठित विरोध ''सलवा जुडूम'' ही रहा। यह आंदोलन नक्सलियों के विरुद्ध स्वतः प्रस्फुटित आंदोलन था जिसे शुरू से ही पहले प्रशासनिक अधिकारियों तथा बाद में राज्य सरकार का समर्थन मिला। यह आंदोलन दर्शाता है कि वंचितों का शोषण सिर्फ सरकार के कुशासन से ही नही हो रहा है बल्कि नक्सलियों द्वारा भी सोच–समझकर किया जा रहा है।

भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा सैद्धांतिक मुद्दों पर सलवा जुडूम के खिलाफ टिप्पणी करने के बाद इस आंदोलन के पक्ष में बोलनेवालों की संख्या कम हो गई थी तथा छत्तीसगढ़ सरकार भी इसको आगे बढ़ाने की नई पहल नहीं कर रही है अन्यथा यह एक समांतर आंदोलन की तरह बढ़ रहा था तथा नक्सलियों के लिए भारी चुनौती पैदा कर रहा था। हालांकि आंदोलन की खामियां भी थीं तथा जैसा कि उच्चतम न्यायालय का विचार था कि सिविलियन को हथियार देकर कानून एवं व्यवस्था या युद्ध जैसी स्थिति में नहीं लगाना चाहिए। यह नैतिक रूप से सही नहीं है तथा इसकी खामियों एवं जवाबदेही की कमियों के कारण यह राज्य के हित में नहीं होगा। लेकिन एक समय नक्सलियों ने सलवा जुडूम को नंबर एक दुश्मन मान लिया था तथा सारा ध्यान इसके प्रतिरोध में केंद्रित करने लगा था। उपरोक्त कारणों से सलवा जुडूम की पूरी कहानी जानना आवश्यक है –

यूं शुरू हुआ ''सलवा जुडूम'' .....

छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र में जून, 2005 को वहां के लोगों द्वारा एक आंदोलन को जन्म दिया गया जो महज तीन सालों में इस नक्सल प्रभावित क्षेत्र में सबसे विवादास्पद पहलू बन गया है। इस आंदोलन के पक्ष एवं विपक्ष में सभी वर्गों के अपने–अपने तक्र हैं। अतः इस घटना की शुरूआत के बारे में जानने की उत्सुकता सभी लोगों को है।

सलवा जुडूम की पृष्ठभूमि

सलवा जुडूम की शुरूआत बस्तर क्षेत्र में हुई। बस्तर घने जंगलों से घिरा हुआ दक्षिण छत्तीसगढ़ का एक बहुत बड़ा क्षेत्र है, जहां पर जंगली पेड़–पौधे, पशु–पक्षी, जंगल में उपजे संसाधन से ही यहां के लोग जीवन यापन करते हैं। यहां के लोग यूं तो अशिक्षित हैं और यह क्षेत्र विकास के मामले में अति पिछड़ा है ,लेकिन यहां के लोग जंगल के संसाधनों से अपना जीवन यापन कर लेते हैं। लोग परम स्वतंत्र विचार के है तथा वनवासी अपनी मर्जी का मालिक है। नक्सलियों के आने से पहले सरकार के ज्यादातर सिर्फ तीन नुमाइंदां से ही इनका पाला पड़ता था। वे थे वन विभाग के लोग, राज्य पुलिस एवं पटवारी। सरकार के इन तीन प्रतिनिधि वर्गों से बस्तर के लोगों का अनुभव इनको अपने जीवन एवं स्वतंत्रता में हस्तक्षेप ही लगता था।

अस्सी के दशक में नक्सलियों ने बस्तर में प्रवेश किया। नक्सलियों ने शुरूआत में इस क्षेत्र में अपनी विचारधारा के बारे में प्रचार नहीं किया, न ही लोगों को अपनी विचारधारा से जोड़ने का प्रयास किया। बल्कि वे इनकी शिकायतें सुनकर सरकार के प्रतिनिधियों को सार्वजनिक तौर पर दंडित कर उनके दिलों में अपनी जगह बनाने का प्रयास करते रहे। लोगों की फसल या पशुधन की क्षति को सरकार के तीन वर्गों, वन विभाग, पुलिस एवं पटवारी द्वारा पूरा करवाते थे। इससे त्रस्त होकर ये कर्मचारी भी इस क्षेत्र में आना बंद कर दिए गए।

इन नक्सलियों को गांववालों ने दादा कहना शुरू कर दिया। इनका स्वागत किया तथा इनको आश्रय दिया। दादा का प्रभाव धीरे–धीरे बढ़ता गया तथा इन्होंने गांव के नौजवानों को प्रेरित कर संघम सदस्य बनाना शुरू कर दिया। गांवों में प्रभावशाली लोगों के प्रभाव को कम करने के लिए संघम सदस्यों को इस्तेमाल किया। विरोध करनेवालों के प्रति हिंसक एवं घृणित कार्य किए। जन अदालत' को नक्सलियों द्वारा आतंक फैलाने एवं वर्चस्व स्थापित करने का सबसे कारगर हथियार बनाया गया।

लेकिन बस्तरबासी इस प्रकार घोर गलतफहमी के शिकार बने। जिन नक्सलियों को उन्होंने अपने प्रति सरकार के कुछ बेईमान कार्मिकों के अत्याचार से आजादी दिलानेवाला समझा, वे बड़े हिंसक,

क्रूर एवं स्वार्थी निकले। इन नक्सलियों ने न सिर्फ इन वनवासियों के संसाधनों को सीमित करना शुरू कर दिया, बल्कि इन पर कूरता भी करने लगे। इनकी स्वतंत्रता जाती रही तथा दादाओं का हस्तक्षेप जरूरत से ज्यादा बढ़ गया। यहां तक कि रिश्तेदारों से मिलने, किसी हाट में जाने एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए संघम सदस्यों की अनुमति लेनी होती थी और तो और, हरेक परिवार से एक नौजवान नक्सलियों को उनकी गतिविधियों के लिए देना आवश्यक हो गया था।

आविर्भाव

नक्सलियों के अत्याचारों से तंग आकर सर्वप्रथम बेंदरे थाना के दस गांव के 65 लोग इकट्ठे हुए। इन लोगों ने नक्सलियों के अत्याचारों से मुक्ति पाने के उपाय पर विचार–विमर्श किया। इस प्रक्रिया में उन्होंने सरकार से अपनी रक्षा के लिए गुहार लगाई। गांववार दस आवेदन कलक्टर के नाम बनाए गए तथा गांववालों ने इस पर हस्ताक्षर किए। पत्र एक ही प्रकार के थे तथा लिखा था कि उनके क्षेत्र में नक्सलियों का आतंक है। उन पर अत्याचार होता है। उनकी धन–संपत्ति डरा–धमकाकर ले जाते हैं तथा उनके मां–बहन एवं जवान लड़के–लड़कियों को साथ भेजने को कहा जाता है। ये पत्र 14 जून, 2005 को कलेक्टर कार्यालय में मिले। लेकिन इसी बीच एक घटना घटी, जिसने संपूर्ण घटनाक्रम को एक नया आयाम दिया। बेंदरे थाना के 50–60 जवान बीजापुर से एक ट्रेक्टर से राशन लेकर बेंदरे जा रहे थे। एक जवान ट्रेक्टर में था बाकी जवान सुरक्षा कारणों से पैदल चल रहे थे तथा ट्रेक्टर एवं उनके बीच एक–डेढ़ किलोमीटर का फासला था। बेंदरे से कुछ दूर पहले ट्रेक्टर ने अपना रास्ता बदल दिया तो जवानों को शंका हुई और भागकर अपने साथियों के पास पहुंचा। सभी पुलिसवाले ट्रेक्टर के टायरों के निशान के सहारे *करकेली'* गांव पहुंचें। ट्रेक्टर इस गांव में था तथा इसके पास 4–5 आदमी खड़े थे। राशन अभी नहीं उतारा गया था। पुलिसवाले उन आदमियों को अपने साथ थाने ले आए। गांववाले इससे काफी उत्साहित हो गए क्योंकि वे जानते थे कि जिन्हें पकड़ा गया था वे निर्दोष थे एवं दोषी तो गांव में नक्सलियों के नियुक्त प्रतिनिधि थे।

गांववालों ने फैसला किया कि जो दोषी हैं उन्हें पकड़कर पुलिस को सौंप दिया जाए एवं गिरफ्तार निर्दोष लोगों को छुड़ाया जाए और इन्होंने ऐसा किया। लेकिन जब उत्तेजना शांत हुई तब वे इस भय से घबरा उठे कि ''दादाओं '' को पता चलेगा तो उनका हश्र क्या होगा। निश्चय ही इसका उन्हे मृत्युदंड मिलेगा। लेकिन दृढ़ साहस से गांववालों ने निर्णय लिया कि पीछे हटने से अच्छा है कि मुकाबला किया जाए।

कुटरू थाना के दस गांवों के लगभग 40–60 लोगों ने 04 जून, 2005 को मीटिंग कर यह निश्चय किया कि वे नक्सलियों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों का विरोध करेंगे एवं उनके प्रतिनिधियों को पुलिस के हवाले कर देंगे। इसी क्रम में 06 जून, 2005 को उन्होंने 06 नक्सलियों को पकड़कर कुटरू थाने को सौंप दिया। 14 जून को इलाके के लगभग 2000 के करीब लोगों ने इकट्ठा होकर कलेक्टर दंतेवाड़ा को एक पत्र दिया तथा अपने जान–माल की रक्षा की गुहार लगाई। उन्होंने मांग रखी कि या तो उनकी रक्षा की जाए या उन्हें अपने स्तर से मरने–मारने के लिए छोड़ दिया जाए। इन लोगों ने प्रशासन से नक्सलियों से मुकाबला करने के साधन की भी मांग की। पत्र में आग्रह था कि या तो उन्हें नक्सलियों से बचाए या फिर उन्हें अपने स्तर से मरने–मारने के लिए छोड़ दे। 14 पंक्तियों में 94 शब्दों के इस पत्र में ग्रामीणों ने अपने वर्तमान एवं भविष्य के बारे में लिख दिया। 16 जून, 2005 को जिले के कलेक्टर तथा क्षेत्र में पदस्थापित केरिपुबल के कमांडेंट ने इलाके का दौरा किया तथा उनकी रक्षा हेतु उचित कार्रवाई का आश्वासन दिया। 18 जून,2005 को उस इलाके के लोगों ने जगह–जगह मीटिंग भी की। सबसे बड़ी मीटिंग उस दिन तालमेंदरी जंगल में हुई, जहां करीब 5000 लोग शामिल हुए। उस मीटिंग में लोगों ने नक्सलियों को सहायता पहुंचाने वाले लोगों को पीटना शुरू कर दिया। करीब 8–10 नक्सली समर्थक वहां से जान बचाकर भागे तथा इसकी सूचना हथियारबंद नक्सलियों को देने में सफल हुए। ये हथियारबंद नक्सली तुरंत तालमेंदरी जंगल पहुंच कर मीटिंग में शामिल लोगों पर अंधाधुंध फायरिंग करने लगे। जिसमें काफी लोग हताहत हुए। तत्पश्चात नक्सलियों ने 19–20 जून को अंबेली बेंदेपारा एवं उस्कापटनम गांवों को घेर लिया तथा लोगों को

मारना–पीटना शुरू किया। इसकी सूचना मिलने पर केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की टुकड़ियों तुरंत रवाना होकर लोगों की रक्षा की तथा नक्सलियों को वहां से खदेड़ दिया।

लेकिन इस घटनाक्रम ने लोगों को अपनी सुरक्षा को लेकर कई सवाल खड़े कर दिए। लोगों ने नक्सलियों के खिलाफ लड़ने का मन बना लिया तथा साथ ही साथ अपनी सुरक्षा हेतु एक साथ एकत्र होकर रहना भी चाहते थे। इस प्रकार सलवा जुडूम के शिविरों की शुरूआत हुई।

सभी ने निश्चय किया अब से गांव में कोई भी नक्सलियों को सहयोग नहीं करेगा।

संघम सदस्यों को गांववालों का साथ देने को विवश किया गया। बस्तर में प्रचलित रीति के अनुसार सभी को *'माटी किरिया'* यानी भूमि का मिट्टी की कसम दी गई। इस प्रकार बस्तर के छोटे से गांव करकेली से एक जन आंदोलन की शुरुआत हुई। शुरुआत में इस आंदोलन का न ही कोई नेता था, न ही कोई नाम। बस यूं शुरू हो गया एक असहयोग आंदोलन जो बाद में *'सलवा जुडूम'* के नाम से जाने जाना लगा।

सलवा जुडूम के नाम के अर्थ को भी लेकर विवाद है। जहां इसके समर्थक इसे गोंडी आदिवासियों की भाषा में इसे शांति प्रक्रिया Peace Campaign कहते हैं, वहीं इसके विरोधी एवं नक्सल इसे समूह आखेट Group Hunting के रूप में इसका मतलब निकालते हैं।

जैसे कि पहले बताया गया है कि सलवा जुडूम आंदोलन शुरू होने के नक्सलियों, मानवाधिकार से जुड़े गैर सरकारी संगठनों एवं सरकार और पुलिस के अनुसार अलग–अलग कारण हैं।

"The Adivasis of Chhattisgarh–Victims of Naxalite Movement and Salwa Judum Campaign" (2006) नामक एक अन्य प्रामाणिक अध्ययन में Asian Centre for Human Rights ने सलवा जुडूम शुरू होने के बारे में यह ब्योरा दिया –05 जून, 2005 को संघम सदस्यों को अमबेलीगान, कुटरू थाना दंतेवाडा को गांववालों द्वारा पकड़ लिया गया। इसमें से अधिकतर छत्तीसगढ़ विधान सभा के विपक्ष नेता एवं कांग्रेसी विधायक महेंद्र कर्मा के समर्थक थे। 14 जून 2005 को नक्सलियों ने कोट्रापाल गांव में धावा बोलकर आठ निर्दोष गांववालों

की हत्या कर दी। विरोध में 19 जून को गांववालों सभा की तथा संगठित होने का निर्णय लिया जिसे कि 25 जून, 2005 को महेंद्र कर्मा द्वारा सलवा जुडूम का नाम दिया गया। गांववालों में नक्सलियों के प्रति उनके अत्याचारों के कारण आक्रोश काफी बढ़ गया था, इसलिए सलवा जुडूम मुहिम को काफी समर्थन मिला। इसके पहले महेन्द्र कर्मा द्वारा 1990 एवं 1996 में ''जन जागरण अभियान'' समर्थन न मिलने के कारण सफल नहीं हो पाया। लेकिन बदलते हालात में प्रति नक्सल अभियान को काफी समर्थन प्राप्त था।

15 अगस्त, 2005 को अपने भाषण में मुख्यमंत्री रमन सिंह ने भी इसके समर्थन की बात की तथा सलवा जुडूम को संसाधन देने का निर्देश दिया। राज्य सरकार को दो ब्लॉकों बीजापुर और भैरमगढ़ के 240 गांवों में पाइलट प्रोजेक्ट के रूप में सलवा जुडूम को Adopt किया। सलवा जुडूम में शामिल होनेवाले ज्यादातर लोग नक्सलियों के द्वारा अत्याचार के शिकार थे, कुछ लोग मुफ्त में धन व आनाज के लालच में तो कुछ लोग स्पेशल पुलिस अधिकारी या छत्तीसगढ़ पुलिस में भर्ती के लालच में इसमें शामिल हुए।

दंतेवाडा के जिला कलेक्टर के. आर. पिरुदा के अनुसार जिला 1153 गांवों में से 644 गांव इस मुहिम में शामिल हुए तथा 509 गांव शामिल नहीं हुए। भैरमगढ के सभी 324 एवं बीजापुर के सभी 96 गांव शामिल हुए तो भोलापटनम् के 186 गांवों में से कोई भी शामिल नहीं हुआ।

सलवा जुडूम की बढ़ती लोकप्रियता के बाद नक्सलियों ने इससे जुड़े लोगों के खिलाफ अनेक हिंसक कार्रवाई करते हुए अनेको मार दिया। नतीजतन भयभीत होकर लोग गांव छोड़कर सरकार द्वारा स्थापित सलवा जुडूम कैंप में शरण लेने लगे। स्थिति भयावह होती गई तथा आदिवासियों के बीच आपस की लड़ाई भयंकर एवं घृणित होती गई। इस दौरान गीदम, कोंटा, उसूर, बीजापुर, भैरमगढ़ इत्यादि प्रखंडों में कुल कैंपों में लगभग 46000 लोगों ने शरण ले रखी थी।

जन जागरण अभियान में उच्चतम न्यायालय के फैसले के बाद किसी प्रकार के हथियारबंद प्रयासों को संगठित नहीं किया जा सकता, न ही ऐसे आंदोलन को बढ़ावा दिया जा सकता। जब तक यह Peaceful न हो। वैसे भी सलवा जुडूम आंदोलन के 2008 से धीरे–

धीरे खत्म होना शुरू हो गया और 2009 तक लगभग खत्म हो गया। यहां तक की इसके प्रणेता महेंद्र कर्मा और छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री रमन सिंह भी ऐसा मान चुके हैं। सलवा जुडूम के जरूरत से ज्यादा विवादों में घिरे रहने का एक कारण तो यह अवश्य था कि ऐसे जन जागरण अभियानों से नक्सलियों में खलबली मच गई थी। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की जांच जिसे नंदिनी सुंदर के रिट पिटीशन 250/07 एवं करताम जोगा 119/67 को संज्ञान में लेते हुए उच्चतम न्यायालय के निर्देशानुसार किया गया था।

आयोग की रिपोर्ट में भी माना गया कि ग्रामीणों में नक्सलियों मे हिंसा सरपंच तथा पटेलों का अपमान एवं उनकी पिटाई और जन अदालतों में ग्रामीणों के खिलाफ हिंसक कार्रवाइयों से असंतोष था। नक्सली लोगों की दिन–प्रतिदिन के जिदंगी में दखलंदाजी तथा उनके परंपरा एवं धार्मिक विश्वास तथा Practices में बाधा पहुंचाने लगे थे। उनके कृषि तथा जंगल उपज से एक अच्छा खासा हिस्सा जबरन वसूल किया जाने लगा था। यहां तक गांव में लगने वाले 'हाट' इत्यादि के स्थान भी बदला जाने लगा। ग्रामीणों को अपने बच्चों की पढ़ाई 5वीं क्लास से ऊपर कराने पर रोक लगा दी गई। सरकार द्वारा चलाए गए विकास कार्यों को चलने नहीं दिया जा रहा था।

ग्रामीणों को सुरक्षा बलों के अभियान के दौरान ढाल की तरह इस्तेमाल किया जाने लगा था तथा औरतों एवं लड़कियों का यौन शोषण भी नक्सलियों द्वारा करना Frequent हो गया। नक्सलियों द्वारा हरेक परिवार के एक सदस्य की आंदोलन के लिए मांग ग्रामीणों को क्रूरता लग रही थी। इन्हीं ज्यादातियों के कारण प्रभावित क्षेत्रों की एक बहुत बड़ी जनसंख्या नक्सलियों के खिलाफ थी तथा इन भावनाओं को सलवा जुडूम द्वारा व्यक्त किया गया।

सलवा जुडूम के अलावा अन्य जन–जागरण अभियान झारखंड में पूर्वी सिंहभूमि जिले के बोराम थाना तथा सराइकेला खरसावां जिले के नीमडीह थाने में ग्रीमीणों ने 'ग्राम गणराज्य पंचायत परिषद'' बना कर संगठित तौर पर माओवादियों के विरुद्ध चलाए गए। ग्रामीण अपने परम्परागत हथियारों से लैस होकर रात में गांवों की नक्सलियों से सुरक्षा करते हैं तथा सुरक्षाबलों को उनके अभियानों में मदद करते हैं।

उड़ीसा में सुंदनगढ जिले के सलाग थाने के अंतर्गत पांच गांवों के लोगों ने 'रेहलातु ग्राम पंचायत' बनाकर नक्सलियों की मांगों का विरोध किया। नक्सलियों द्वारा कुछ ग्रामीणों को अपहरण करने के बाद से इस संगठन ने नक्सलियों के विरोध को और सख्त कर दिया।

छत्तीसगढ़ में ''मां दंतेश्वरी बस्तर आदिवासी स्वाभिमान मंच'' के तरत ग्रामीण, नक्सलियों का विरोध कर रहे हैं तथा सुरक्षा बलों को सहायता पहुंचा रहे हैं।

इन सारी रिपोर्टों से यह स्पष्ट है कि लोगों में नक्सलियों के विरुद्ध जागरूकता है तथा वे उनके खिलाफ करना चाहते हैं। लेकिन इसके लिए कोई संरचनात्मक व्यवस्था की जरूरत है। पुलिस सिविल प्रशासन के साथ मिलकर इस प्रकार के आक्रोश से उत्पन्न ऊर्जा का उपयोग नक्सलियों के विरुद्ध करने के रचनात्मक तरीकों पर कार्य कर सकती है। किन–किन क्षेत्रों में क्या किया जा सकता है इसके लिए थाना तथा जिला स्तर पर सोच को विकसित करने की पहल करना ज्यादा उत्पादक होगा, क्योंकि किसी एक प्रकार की ''समान कार्यनीति'' हरेक क्षेत्रों में सफल हो, यह आवश्यक नहीं।

कुछ कदम इस प्रकार हो सकता है –

- ग्रामीणों द्वारा शिकायतों तथा घटनाओं को दर्ज किया जाए जहां उपयुक्त हो उसमें FIR किया जाए अन्यथा संबंधित विभाग को अग्रेसित कर उस पर कार्रवाई को Monitor किया जाना चाहिए।
- नक्सलियों द्वारा ग्रामीणों की जान माल की क्षति को राज्य सरकार द्वारा Compensate करने की कार्रवाई को पुलिस द्वारा Facilitate करना चाहिए तथा क्रियान्वयन तक Monitor करना चाहिए।
- नक्सलियों के प्रति ''समर्पण नीति'' का प्रचार–प्रसार कर उनके कैडरों को वापस मुख्यधारा में लौटने के लिए Campaign चलाकर नक्सलवाद को कमजोर किया जा सकता है। ''समर्पण नीति'' को हर पंचायत मीटिंग इत्यादि में विज्ञापित करना चाहिए।
- स्कूल तथा आश्रमों में पुलिस कैंप लगाने से बचना चाहिए। कोशिश की जानी चाहिए कि इस प्रकार के ठिकानों को किसी प्रकार से अवरुद्ध नहीं होने देना चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रों में मूलभूत स्वास्थ्य सेवाओं की कमी है। पुलिस थानों, पोस्ट तथा सुरक्षा बलों के कैंप में इस प्रकार की छोटी–मोटी व्यवस्थाएं भी लोगों का दिल जीतने तथा सरकार से जुड़ने में सहायक सिद्ध होगा। अक्सर सुरक्षा बलों द्वारा लगाए गए ''स्वास्थ कैंप'' पर प्रतिक्रिया काफी उत्साहजनक होती है।
- जन–जागरण के लिए सरकार द्वारा समाचार–पत्रों में विज्ञापन द्वारा नक्सलियों के कुकृत्य को दिखलाने की कोशिश की जाती रही है। बेहतर रणनीति यह होगी कि ग्रामीण इलाकों में पोस्टर, रेडियो, नुक्कड़ नाटकों तथा लोगों से बातचीत कर इन बातों को बताया जाए। स्मरण रहे कि नक्सल के बहुसंख्यक समर्थक हिंदी और अंग्रेजी के दैनिक समाचार–पत्रों की पहुंच से बहुत दूर हैं। सार्वजनिक रेडियो एवं टेलीविजन की गांव के चौपालों में व्यवस्था की जा सकती है। ग्रामीणों को एक जीवन स्तर जो कि सुविधाजनक हो सकती है अगर नक्सलवाद नहीं रहे, ऐसा प्रसारित करना होगा। आखिर बदलाव के लिए सपनों का होना जरूरी है।
- ग्रामीणों की सूचना पर पुलिस द्वारा त्वरित कार्रवाई से उनके मन में व्यवस्था के प्रति विश्वास बढ़ेगा। यह विश्वास लोगों को स्वतः जागरूक बनाएगा। पुलिस उनकी सभी सूचनाओं व शिकायतों पर कार्रवाई करे तो बेहतर होगा।

(घ) शासकीय योजनाओं में प्रसारक की भूमिका

केंद्र और राज्य सरकार नक्सलवाद को खत्म करने के लिए अनेक योजनाओं पर कार्य कर रही है। गृह मंत्रालय, भारत सरकार के 2010–11 के वार्षिक रिपोर्ट में केंद्र सराकर ने नक्सलवाद से निपटने में समग्र दृष्टिकोण अपनाने में बल दिया। सरकार यह चाहती है राज्य सरकारों के साथ मिलकर सुरक्षा, विकास, प्रशासन की सरकार व नक्सलियों के प्रति सोच की धारणा, सभी क्षेत्रों में एक साथ कार्य करने की जरूरत है। इस उद्देश्य से राज्यों के 35 अति प्रभावित जिलों को विशेष तौर पर योजना तथा क्रियान्वयन के लिए चुना गया। सरकार मानती है कि सिर्फ सुरक्षा बलों द्वारा सैन्य परिचालनिक कार्रवाई इस समस्या को संबोधित करने के लिए काफी नहीं है। शुरू से इन क्षेत्र में अल्प एवं दीर्घकालीन योजनाओं पर विधिवत कार्रवाई करनी होगी। वहां स्वास्थ्य कैंप, जन–वितरण प्रणाली (Public Distribution System) पीने के पानी की व्यवस्था और

अन्य मूलभूत सुविधाओं को मुहैया कराने की आवश्यकता है। सरकार की अनेक योजनाओं के अंतर्गत इन मुद्दों पर अमल किया जा सकता है। रिपोर्ट में कुछ ऐसी योजनाओ को चिह्नित भी किया गया है। जैसे –

- पिछड़ा जिला पहल (Backward District Initiative)
- पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि (Backward Regions Grant Fund)
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना (Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme)
- प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना (Prime Minister Gram Sadak Scheme)
- राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन योजना (National Rural Health Mission)
- सर्व शिक्षा अभियान (Sarva Shiksha Abhiyan)
- पंचायती राज के प्रावधानों जिसमें PESA-1996 (Panchayat Extension to Scheduled Areas Act) 1996 प्रमुख है को अमल में लाना।
- केंद्रीय अर्ध सैनिक बलों तथा इंडिया रिजर्व (IR) बटालियन में प्रभावित जिलों से भर्ती।
- राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतिकरण योजना।
- सड़क आवश्यकता योजना।
- इंदिरा आवास योजना।
- Integrated Child Development Services
- अनुसूचित जनजातियां और परंपरागत वन के निवासी (वन अधिकारों को मान्यता) अधिनियम 2006 (Scheduled Tribes and other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights Act -2006)
- आत्म समर्पण एवं पुनर्वास नीति
- नक्सली हिंसा से पीड़ितों/पीड़ितों के परिवार को सहायता देने की केंद्रीय योजना
- सुरक्षा संबंधी खर्च और पुलिस बलों का आधुनिकीकरण

सरकार इतने बड़े पैमाने पर नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के योजनाओं को चला रही है लेकिन जनता की धारणाएं बनी हुई हैं कि सामाजिक–आर्थिक विकास के प्रयास नहीं हो रहे हैं। गृह मंत्रालय

ने इसके लिए Counter Propaganda Campaign की जरूरत मानी है। सरकार की योजनाओं का संक्षिप्त विवरण की इस उद्देश्य से चर्चा की जा रही है कि हरेक पुलिस एवं प्रशासनिक अधिकारी इन कार्यों से परिचित रहे तथा प्रभावित क्षेत्रों में लोगों को इसके बारे में जागरूक बनाए तथा इन नीतियों के सही क्रियान्वयन में भागीदार बने।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना मे नक्सल प्रभावित राज्यों में महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचों के विकास के लिए जो किसी भी मौजूदा स्कीम के अंतर्गत नहीं आता है उसके लिए रु. 500/करोड़ का विशेष पैकेज दिया गया। इस धनराशि का उपयोग राज्य सरकार अपने विवेक से सुरक्षा के लिए दूर–दराज के इलाके में सड़क निर्माण या किसी भी अन्य विकासोन्मुख कार्यो के लिए किया जा सकता है।

रोजगार के अवसर को बढ़ाने के लिए केंद्रीय अर्धसैनिक बलों में नक्सल प्रभावित क्षेत्रों से भर्ती के लिए 40% रिक्तियां को आरक्षित किया गया। इससे वे युवा वर्ग जिसे नक्सली अपने संभावित कैडर के रूप में देखते हैं वे पुलिस बलों में भर्ती होकर सार्थक कार्यों में लगेंगे।

Backward District Initiative योजना के तहत रू. 45 रूपए प्रति जिले को क्षेत्र के विकास के आबंटित किए गए थे। 2010–11 में इसे Backward Regions Grant Fund से बदलकर इसके अंतर्गत 250 जिलों को धनराशि मुहैया कराई जा रही है।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना जिसे पहले 200 जिलों में लागू किया गया था उसे अप्रैल 2007 में बढ़ाकर 330 जिलों में लागू किया गया तथा 2011 में इसे देश के सभी जिलों में लागू कर दिया गया। इससे गरीबों के लिए जीविका का एक नियमित स्रोत रहेगा तथा कार्य करनेवाला हर कार्मिक कमाने की स्थिति में रहेगा। हालांकि इस योजना विवेकपूर्ण तथा पारदर्शिता के साथ लागू करने की आवश्यकता है। यह एक ऐसी योजना है जिसमें ईमानदारी से प्रयास करने से वंचितों की एक बहुत बड़ी जनसंख्या को भुखमरी की स्थिति से उबारा जा सकता है। नियमित रोजगार एवं आय के स्रोतों की उपलब्धि से बहुत हद तक लोगों में सामाजिक–आर्थिक सुरक्षा की भावना पैदा होगी तथा प्रशासन के प्रति विश्वास बढ़ेगा।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के 2010–11 के लिए 2000

करोड़ रुपये आबंटित किए गए थे। इस योजना के तहत नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सड़क बनवाने के लिए काफी रियायतें दी गईं।

जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा 499.99 करोड़ की आदिवासी छात्रों के लिए स्कूल और छात्रावास बनवाने के लिए खर्च किए गए।

सड़क आवश्यकता योजना (Road Requirement Plan) के तहत 11वीं पंचवर्षीय योजना 7300 करोड़ रूपये की लागत से 5477 किमी राष्ट्रीय राजमार्गों, राज्य राजमार्गों तथा मुख्य जिला सड़कों के निर्माण के लिए मंजूरी दी गई है।

वन अधिकार अधिनियम के तहत अनुसूचित जनजाति एवं परंपरागत वन के निवासियों को वनभूमि को मान्यता प्रदान करता है जो कई पीढ़ियों से ऐसे वनों में रह रहे हैं लेकिन उनके अधिकारों को रिकार्ड नहीं किया गया। झारखंड में जनजातियों के विरूद्ध एक लाख से अधिक वन संबंधी छुट–पुट मामलों को समाप्त कर दिया गया है।

इंदिरा आवास योजना के तहत 377.50 अतिरिक्त घर नक्सल प्रभावित राज्य झारखण्ड में बनाने की स्कीम शामिल है।

इसके अलावा राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण एवं राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल आपूर्ति कार्यक्रमों के तहत भी नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के विकास पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

नक्सलियों को आत्मसमर्पण एवं पुनर्वास संबंधी एजेंडा गृह मंत्रालय द्वारा लागू किया गया है जिसमे तीन वर्षो के लिए रू. 2000 का वजीफा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, 1.5 लाख रुपए का अनुदान और हथियारों को सौंपने पर प्रोत्साहन शामिल है। उसी प्रकार नक्सली हिंसा के पीड़ितों के परिवार को 3 लाख रुपए दिए जाएंगे तथा अक्षम बनाए लोगों को भी मुआवजा देने का प्रावधान है।

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह Inclusive Growth में नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के समावेश पर जोर देते कहा –^^We cannot have equitable growth without guaranteeing the legitimate rights of these marginalized and isolated sections of our society. In a broader sense we need to empower our tribal communities with the means to determine their own destinies, their livelihood, their security and above all their dignity and self respect as equal citizens of our

country, as equal participants in the processes of social and economic development".

सरकार विकास योजनाओं को पिछड़े क्षेत्रों में पहुंचाने के लिए पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम 2006 को गंभीरता से लागू करने का प्रयास कर रही है। यह अधिनियम ''ग्राम सभा'' के महत्व को स्वीकार करती है तथा सुशासन को निम्नलिखित क्षेत्रों में सक्षम बनाती है –

- अनुसूचित क्षेत्रों में जमीन से विलगाव विस्थापन को रोकने के किसी भी गैरकानूनी कार्यों को रोकने का अधिकार
- Minor (मामूली) वन उत्पाद पर स्वामित्व
- मदिरा निषेध को रोकने के लिए इसके बिक्री तथा उपभोग पर रोक या बंधन
- आदिवासियों को कर्ज देने के ऊपर नियंत्रण/संचालन
- सामाजिक क्षेत्रों के संस्थाओं और पदाधिकारियों पर नियंत्रण
- स्थानीय स्तर के योजना तथा संसाधनों पर नियंत्रण
- छोटे स्तर के खदानों के लाइसेंस या लीज के योजनाओं में भागीदारिता
- जमीन अधिग्रहण पर निर्णयों में भागीदारिता का अधिकार
- सरकारी योजनाओं में उपयोग प्रमाण–पत्र जारी करने का अधिकार

पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में स्वाशासन के लिए यह अधिनियम ''ग्राम सभा'' को सबसे सशक्त इकाई के रूप में देखता है। देश के 76 गंभीर नक्सल प्रभावित जिलों में 32 जिला PESA के अंतर्गत हैं। इन 32 जिलों में नक्सलियों के ज्यादातर ''कैडर'' के असंतोष का कारण इन्हीं जमीन तथा जंगल से जुड़े परेशानियां थीं। PESA के बाद से इस प्रकार की शिकायतों का निपटारा Favourable तरीके से आदिवासियों के पक्ष में हो सकता है।

नक्सलियों द्वारा ''स्वशासन'' के मुद्दों पर ग्रामीणो को संगठित करने का सबसे बड़ा कारण भी PESA के ईमानदारी से लागू करने से जाता रहेगा। इस अधिनियम को लागू करने तथा उसमें सकारात्मक हस्तक्षेप के लिए संविधान में पहले से भी अनेक प्रावधान है। यह अधिनियम वस्तुतः Scheduled–V क्षेत्रों में लागू किया गया है। इन क्षेत्रों में विकास के लिए राज्यपाल तथा प्रशासन अनेकानेक संवैधानिक शक्ति है।

पंचायत (अनुसूचित क्षेत्र विस्तार) अधिनियम 1996 एवं अनुसूचित जनजातीय एवं परंपरागत वन के निवासी (वन अधिकारों को मान्यता) अधिनियम 2006 को अगर नियमानुसार लागू किया जाए तो लाखों गरीब लोगों की शिकायतों का निवारण हो सकता है और इसमें अनेक जो नक्सलियों का समर्थन करते हैं, वे उस विचारधारा को छोड़ ''मुख्य धारा'' में लौट सकते हैं। लेकिन प्रशासनिक प्रयासों में गलत प्रक्रियाओं तथा पारदर्शिता के अभाव के कारण समस्या ज्यादातर क्षेत्र में जस की तस है। जहां इसका Implementation है वहां नक्सलवाद में कुछ सुधार है। निम्नलिखित आंकड़े इसे स्पष्ट करते हैं –

राज्य 31.01.2010	क्लेम प्राप्त हुए 31.01.2010	टाइटल डीड दिए गए निवारण	प्रतिशत शिकायत
आन्ध्र प्रदेश	3,25,818	1,73,334	53.20%
छत्तीसगढ़	4,86,101	2,14,633	44.15%
उड़ीसा	3,29,514	97,595	29.62%
झारखंड	25,220	2,505	9.93%
पश्चिम बंगाल	1,41,783	17,360	12.24%
महाराष्ट्र	3,03,960	2453	0.81%

हालांकि पुलिस एवं सुरक्षा बलों का PESA में Impl- ementation में कोई सीधी भूमिका नहीं है लेकिन जमीनी हालात दो प्रकार से इसके लिए पुलिस को जिम्मेदारी की पहल उठाने के लिए बाध्य करता है –

पहला, अधिनियमों व निहित प्रावधानों के अनुसार ग्राम सभा की स्वतंत्रता एवं उनके अधिकारों के नक्सलियों के हस्तक्षेप एवं प्रभाव से मुक्त एवं सुरक्षित रखा जाए। इसके लिए पुलिस सैन्य कारवाई करके नक्सलियों को ऐसे मीटिंग व निर्णयों के समय अलग रखे।

दूसरा, प्रशासनिक तंत्र किसी प्रकार के पक्षपाती रवैया तथा बेईमानी को रोकने के लिए उपयुक्त कानूनों के तहत केस दर्ज कर मुकदमा चलाया जाए जिससे कि अधिनियम को लागू करने में पारदर्शिता तथा तत्परता लाई जा सके।

पुलिस सरकार द्वारा उठाए जा रहे कदमों के बारे में ग्रामीणों के

साथ सभा कर उसे प्रसारित करने का कार्य कर सकती है। यह बात पुनः दोहराने लायक है कि बदलते आंतरिक सुरक्षा के परिवेश में चुनौतियों से निपटने के लिए सर्वथा भिन्न सोच को विकसित करने की आवश्यकता है। पुलिस की भूमिका को नए सिरे से परिभाषित करने की आवश्यकता है। अगर कानून में बदलाव हो तो बहुत अच्छा, अगर नहीं हो तो बिना कानून में बदलाव लाए बहुत सारे ऐसी रचनात्मक कार्यनीति हैं जिससे पुलिस को भारतीय जनता के समक्ष के एक कर्तव्यपरायण एवं निष्ठावान संगठन के रूप में एक आदर्श उदाहरण हो सकता है। इसे एक चुनौती एवं मौके के रूप में लेना चाहिए जिससे भारतीय पुलिस अपने वर्षों के Colonial बदनामी से उभरकर बाहर आ सकती है – एक दक्ष एवं सक्षम संगठन के रूप में।

उपसंहार

बीसवीं शताब्दी में हर नागरिक बड़े गौरव के साथ यह वाक्य दोहराता रहा है कि ''भारत विविधताओं में एकता का देश है। यहां उनके समुदाय एवं जाति के लोग परस्पर सहयोग एवं सौहार्दपूर्ण वातावरण में रहते हैं। भारत का दिल गांवों में बसता है क्योंकि इसकी लगभग 80% (90% से 70% तक विभिन्न समयों में) आबादी गांवों में रहती है।'' लेकिन इक्कीसवीं शताब्दी में भारत बंटा हुआ प्रतीत होता है। ग्रामीण 'भारत' अलग है तो शहरी 'इंडिया' अलग। एक अभावग्रस्त लगता है तो दूसरा संपन्न। जनसमुदाय आधुनिक सुख सुविधाओं से परिपूर्ण है। भारत के कुछ किसान एवं मजदूर कर्ज में डूबे होने के कारण आत्महत्या कर रहे हैं, वही कुछ धनाढ्य विश्व के सबसे धनी व्यक्तियों में से एक हैं। कुछ एक लोगों की निजी संपत्ति अनेक छोटे–मोटे देशों के कुल सकल उत्पात से कई गुना अधिक है। ये लोग भारत नहीं 'इंडिया' के लोग हैं वह इंडिया जो शाइन कर रहा है तथा विश्व अर्थव्यवस्था में तेजी से प्रगति कर रहा है।

यह इंडिया हजारों करोड़ों रूपये की लागत से बने हवाई अड्डों से उड़ान भरते हैं, हजारों करोड़ों के मेट्रों में सफर करते है तथा इनके पास अपनी गाड़ियों की सुविधाएं होती हैं। इस शहरी 'इंडिया' के मनोरंजन के लिए चालीस हजार करोड़ से अधिक के राष्ट्रमंडल खेलों सहित विभिन्न आयोजन सरकार करवाती है। देश का यह जनसमुदाय अंग्रेजी भाषा में निपुण है, शिक्षित है तथा शहरी परिवेश में पूर्णतः आत्मनिर्भर है। यह तबका गांवों की तरफ पर्यावरण की ओर तथा गरीबों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण विचार रखता है तथा ''कारपोरेट सोसियल रिसपॉन्सीबिलिटी''(Corporate social responsibility) की तरह कुछेक सामाजिक व आर्थिक कार्यों के प्रति चर्चा कर, विमर्श कर

या कुछ थोड़े संसाधन को शेयर कर अपने देश के प्रति परंपरागत संस्कारों के कारण जो मूल्य भरे हैं उसे पूरा करता है।

देश हर आधार पर दो भागों में दिखता है। चाहे वह अर्थव्यवस्था हो, सामाजिक सोच हो, संस्कार हो, भाषा हों या राजनीतिक निष्ठा हो। भारतीय पुलिस तथा न्यायपालिकाओं की भी अपनी–अपनी प्राथमिकताएं हैं। प्रसिद्ध आरूषि हत्याकांड जो राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र नोएडा में हुआ, के अनुसंधान एवं न्याय मिलना चर्चित रहा तथा जितने प्रयास किए गए वह सर्वथा एक मजबूत, न्यायप्रिय राष्ट्र के सुलतान जहांगीर तथा अनेक शासकों के न्यायप्रिय होने की परंपरागत मूल्यों की अगली कड़ी है। लेकिन उसी भारत के ग्रामीण परिवेश में ऐसा कितनी आरूषियों के साथ अन्याय होता है, बलात्कार होता है तथा हत्याएं तक कर दी जाती हैं लेकिन इसकी चर्चा तक नहीं होती है। क्या भारतीय पुलिस की भूमिका इसे चर्चा के काबिल नहीं समझती है? या संसाधनों को सिर्फ शासकों के निर्देश एवं निष्ठा पर ही समर्पित किया जा चुका है? क्यों नहीं पुलिस की संख्या बढ़ाकर ग्रामीणों को सुरक्षित करने के बजाय सरकार पुलिस व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए अर्ध सैनिक बलों को लगातार मजबूत कर उन्हें तैनात किया जा रहा है?

भगत सिंह ने अपने अधिकारों के लिए बम के धमाकों को जायज बताया था। लोगों ने इसे स्वीकार किया, क्योंकि सवाल था अंग्रेजों के चंगुल से भारत को स्वाधीन बनाने का। वे अंग्रेज जिन्होंने भारतीयों को उनके राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक अधिकारों से वंचित कर रखा था। वे अंग्रेज जो देश के संसाधनों का उपयोग अपने गिने–चुने लोगों के पक्ष में करते थे। स्थितियां काफी बदली हैं। काफी सुधार स्वतंत्रता के बाद हुआ है। ग्रामीणों ने अपने वोट देकर सरकार चुनने के अधिकारों का सूझ–बूझ के साथ कई बार प्रयोग किया है। लेकिन सत्ता पक्ष तथा शासकों के प्रयास नाकाफी रहे हैं। इसी कारण ग्रामीण भारतीय में रोष है और इसी से ''नक्सलवाद'' को प्राणवायु मिलती है।

स्वातंत्रयोत्तर भारत में अनेक राजनैतिक व सामाजिक आन्दोलन चलाए गए, जो संपूर्ण रूप से अहिंसक साधनों तथा लोकतंत्रात्मक आर्दशों पर आधारित रहा है। यहां तक कि भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में भी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के नेतृत्व में अहिंसा और

सत्याग्रह को ही विरोध के साधनों के रूप में राष्ट्रवासियों द्वारा अंगीकार किया गया, भारत भूमि पर सदैव अहिंसा और सत्य का ही बोलबाला रहा है किंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ ही वर्षों के पश्चात विरोध की एक नवीन अवधारणा ने भारतीय जनमानस को झकझोर कर रख दिया। पश्चिम बंगाल के नक्सलवादी गांव से इस नवीन अवधाणा ने जन्म लिया और आज संपूर्ण देश में इसका विकराल रूप देखा जा रहा है। यह अवधारणा थी– ''जीवन की दशाओं में गुणात्मक सुधार हेतु लोकतांत्रिक साधनों की अनिश्चितता और सुदीर्घ संयाधि को स्वीकार्य नहीं किया जा सकता अतः जीवन दशाओं के परिवर्तन हेतु हिंसक साधनों का प्रयोग न्यायोचित है।''

ऐसा नहीं है कि यह विचार अकस्मात ही आकार ले लिया अपितु सभ्यता के प्रार्दुभाव से ही हिंसा किसी न किसी रूप में मनुष्यता का अविभाज्य अंग रही है और विरोध के स्वर अहिंसा के अलावा भी मुखर हुए है अल्लामा इकबाल के शब्दों में–

जिस खेत से दहका को मयस्यर न हो रोटी,
उस खेत के हर खोसा–ए गन्दुम को जला दो।

विरोधी के इस प्रकार के नारों ने समाज के मुख्य धारा से पृथक और प्रायः हाशिए पर जीने वाले शोषित, वंचित और दलित वर्ग को प्रगाढ़ता से आकृष्ट किया। समाज का वह वर्ग जो प्रत्येक प्रकार की प्रशासनिक उदासीनता, राजनैतिक सैलाबों, सामाजिक असमानता और राष्ट्रीय योजनाओं का शिकार रहा है, वह इस आंदोलन से तेजी से जुड़ता चला गया, बंगाल में इस आंदोलन के प्रभावी नियंत्रण के बावजूद देश के अन्य इलाकों में यह फैल गया, शासन और प्रशासन की उदासीनता ने इस आंदोलन को और बढ़ाया। सामाजिक सरोकारों से पुलिस की समझी बूझी दूरी ने देश के आंतरिक और दूरस्थ इलाकों में इस आंदोलन के साथ लोकमानस के जुड़ने में सहायता की। वस्तुतः सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध कराने के प्राथमिक कर्तव्य के स्थान पर देश की पुलिसिया व्यवस्था ने अपने हितों व लाभों के आधार पर प्राथमिकताएं निर्धारित कीं और विधि व्यवस्था के नाम पर मात्र राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति में ही सम्पूर्ण पुलिस तंत्र की ऊर्जा लगी रही जिससे नक्सलवाद जैसे हिंसक आंदोलन के लिए समाज में उर्वर भूमि उपलब्ध कराई।

आंतरिक सुरक्षा मामलों पर संसद की स्थाई समिति ने भारतीय पुलिस व्यवस्था पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि भारतीय पुलिस का राजनैतिकरण हो गया है और वह राजनैतिक ध्रुवीकरण का शिकार हुई है। यह टिप्पणी करते हुए स्थाई समिति के अध्यक्ष प्रणव मुखर्जी ने समिति की अट्ठासवीं रिपोर्ट, जो वर्ष दो हजार दो में लोकसभा के दोनों सदनों में प्रस्तुत की गई थी, ने कहा था कि गृह मंत्रालय को पुलिस के अराजनीतिकरण हेतु गंभीर प्रयास करने चाहिए। साथ ही इस बात पर सहमत थे कि राजनैतिक प्रभाव से मुक्त करने के बाद आसूचना एकत्रित करने व परिचालनिक कार्यक्षमता में वृद्धि इत्यादि विषयों पर पुलिस में उल्लेखनीय सुधार होगा।

स्वतंत्रता के छः दशकों के उपरान्त भी ऐसे किसी भी परिवर्तन की अनुपस्थिति में नक्सलवाद जैसे आंदोलन को सिर्फ जन्म दिया अपितु उसके द्रूत प्रसार में भी योगदान दिया। वस्तुतः नक्सलवाद एक आंदोलन के साथ संपूर्ण भारतीय व्यवस्था के असफल होने का सिद्धघोष भी है। राष्ट्र के विकास असन्तुलन के परिणाम स्वरुप आज भी एक बड़ा वर्ग जीवन की बुनियादी सुविधा जुटाने में असमर्थ है और स्वतंत्रता तथा विकास के तमाम दावों और चकित करनेवाले आंकड़ों के पश्चात आज भी भुखमरी से मृत्यु या आत्महत्या की खबरें राष्ट्र में चहुं ओर से आती हैं।

हमें यह समझना होगा कि नक्सलवाद एक पुलिस तंत्र की समस्या नहीं है अपितु यह विरोध के लोकतांत्रिक साधनों के भोथरे होने की समस्या है, एक विराट राष्ट्रीय व्यवस्था में जनमानस के जीवन की सुरक्षा हेतु सर्वाधिक प्रयास किए जाने थे किंतु ऐसा नहीं हुआ। अतः आंदोलन के उन्मूलन हेतु मात्र पुलिस या सामरिक नीति निर्माण से ही उद्देश्य प्राप्ति संभव नहीं बल्कि प्रत्येक स्तर पर शासन और प्रशासन को समाज के अंतिम छोर पर रहनेवाले लोगों तक पहुंचना चाहिए और लोकसत्ता का अधिकाधिक विकेंद्रीकरण करना चाहिए। सामाजिक स्तर पर नक्सलवादियों के नियंत्रण हेतु प्रभावी नीति–नियोजन किया जाए। इस दिशा में पहला क्रातिकारी कदम यह होगा कि नीति–निर्माण में उच्च स्तर की नौकरशाही का दखल कम से कम कर जमीनी स्तर पर कार्य कर रहे अधिकारियों की प्रतिक्रियाओं और मतों के आधार पर प्रभावी प्रतिकारक नीति बनाई

जाए, साथ ही उसका बेहतर तरीके से क्रियान्वयन किया जाए। राज्य में केंद्रीय पुलिस बलों को भेजने के स्थान पर राज्य के पुलिस बल को नक्सली समस्या से निपटने हेतु प्रशिक्षित किया जाए और उनका नक्सल विरोधी आंदोलन में प्रयोग किया जाए। नक्सल ग्रस्त इलाकों में पुलिस थानों के साथ स्थानीय स्तर पर लोक समिति गठित की जाए जो इलाके के लोगों की विधि–व्यवस्था से संबंधित समस्याओं का निपटारा कर सके।

यह विचार योग्य प्रश्न है कि नक्सली इतनी हिंसा, कहीं–कहीं पर गरीबों पर प्रत्यक्ष अत्याचार, विकास ऐजेंसी को हतोत्साहित करनेवाले अपने अनेक कार्यों के बाद भी जीवित क्यों है। साथ ही भारत के राज्यों की पुलिस जो पाकिस्तान समर्थित जम्मू एवं कश्मीर एवं पंजाब के आतंकवाद तथा पूर्वोत्तर क्षेत्रों के उग्रवाद से निपट सकने में सक्षम है, उसे नक्सलवाद से इतनी बड़ी चुनौतियों का सामना क्यों करना पड़ रहा है. इस प्रश्न का उत्तर भविष्य के गर्भ में छिपा है जिसे पाठक स्वयं खोज निकालेंगे ऐसी मेरी सोच है।

संदर्भ–सूची

- वार्षिक रिपोर्ट 2010–11, गृह मंत्रालय भारत सरकार (www.mha.gov.in)
- सिंह, प्रकाश (1990) – ''द नक्सलाइट मूवमेंट इन इंडिया'' रूपा एंड कंपनी, नई दिल्ली।
- योजना आयोग (2007) रिपोर्ट ऑफ द टास्क ग्रुप ऑन डेवलपमेंट ऑफ एस.सी. और एस.टी.।
- गृह मंत्रालय, भारत सरकार – नक्सल मैनेजमेंट डिवीजन (www.mha.gov.in) ।
- योजना आयोग भारत सरकार (2008) – रिपोर्ट ऑफ एक्सपर्ट ग्रुप – ''डेवलपमेंट चैलेंजेंस इन एक्सट्रीमीस अफैक्टेड एरियाज''
- अजय दंडेकर और चित्रांगदा चौधरी – PESA (Ajay Dandekar & Chitrangada Choudhary) Left wing Extremism and Governance, "Concerns and challenges in India", Tribal District (Institute of Rural Management, Anand), Commissioned by Ministry of Panchayati Raj.
- मिश्रा, डा. त्रिनाथ : बैटल ऑफ द गन – द माओ चैलेंज एंड इंडियन डेमोक्रेसी (2007), शेरिडन बुक कंपनी, नई दिल्ली
- मिश्रा, डा. एस. के., नक्सलवाद (2010), नक्सलिज्म – काजेज एंड कुमर, मानस पब्लिकेशंस, नई दिल्ली
- घोष, सुनिती कुमार, नक्सलबाड़ – बिफोर एण्ड आफ्टर (2009), न्यू ऐज पब्लिशर, कोलकता
- सिंह, वी. एन., नक्सलीजम – ए ग्रेट मीनेस (2010), प्रभात पब्लिसिंग हाऊस, दिल्ली
- नक्सली साहित्य –
- अवामी जंग
- राजनीतिक प्रस्ताव – मसौदा दस्तावेज – भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)
- भारतीय क्रांति की रणनीति और कार्यनीति – मसौदा दस्तावेज – भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)
- पार्टी संविधान
- एकता कांग्रेस – भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) नवीं कांग्रेस
- सन्याल कानू, रिपोर्ट ऑन द पीजेंट मूवमेंट इन तराई रीजन – लिबरेशन 11 नवंबर 1 (नवंबर 1968)
- सान्याल कानू, 'मोर अबाउट नक्सलवाड़ – संचालित समर सेन, नक्सलबाड़ एंड आफ्टर–ए फ्रंटिर एनथोलोजी।
- www. satp.org
- Centre for land warfare studies (Laws) papers 2009-20010
- www.mha.gov.in
- www. ipcs.org

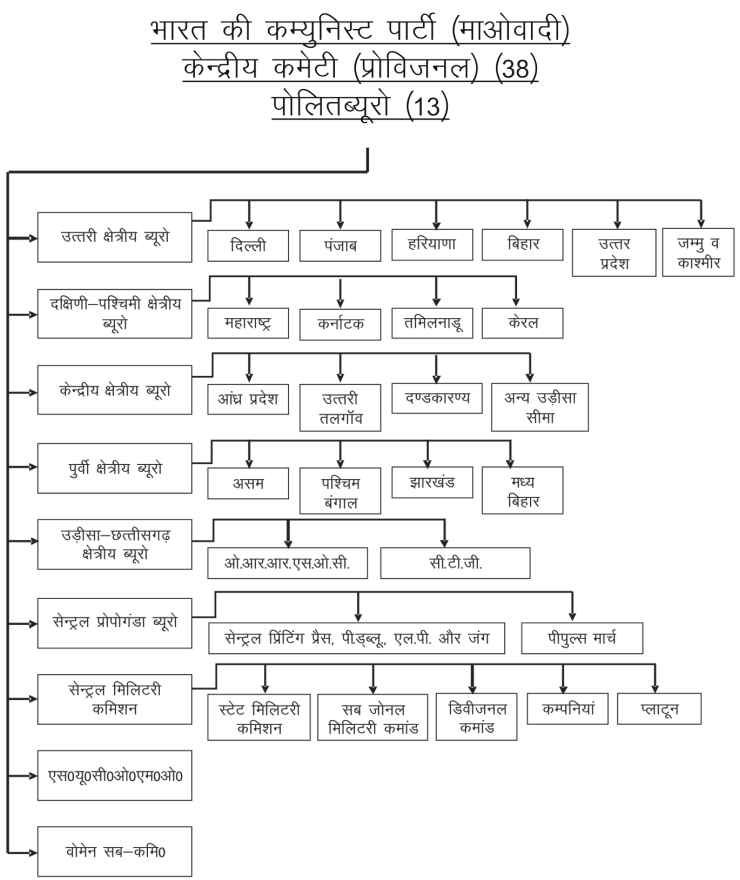

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)
केन्द्रीय कमेटी (प्रोविजनल) (38)
पोलितब्यूरो (13)

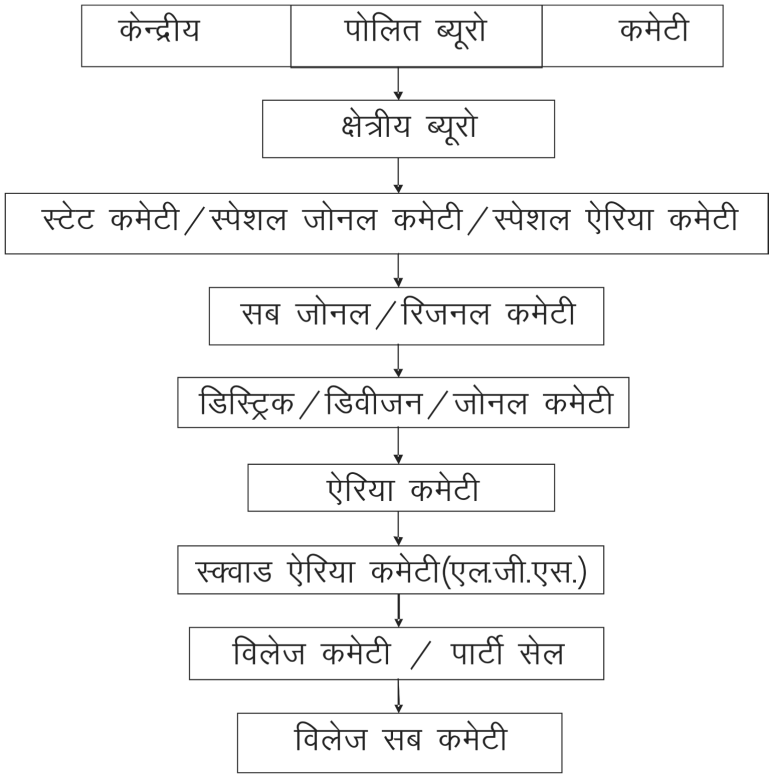

राजनैतिक संगठन

सैन्य संगठन

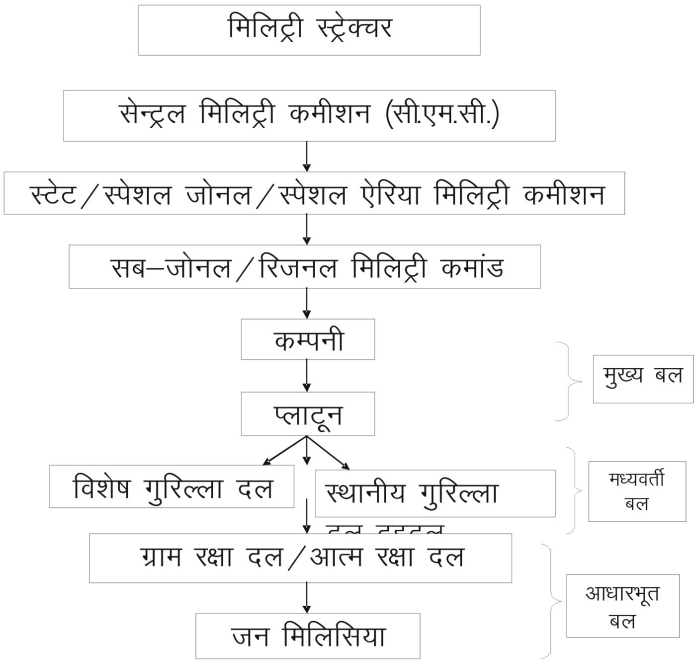

गांव स्तर पर संरचना

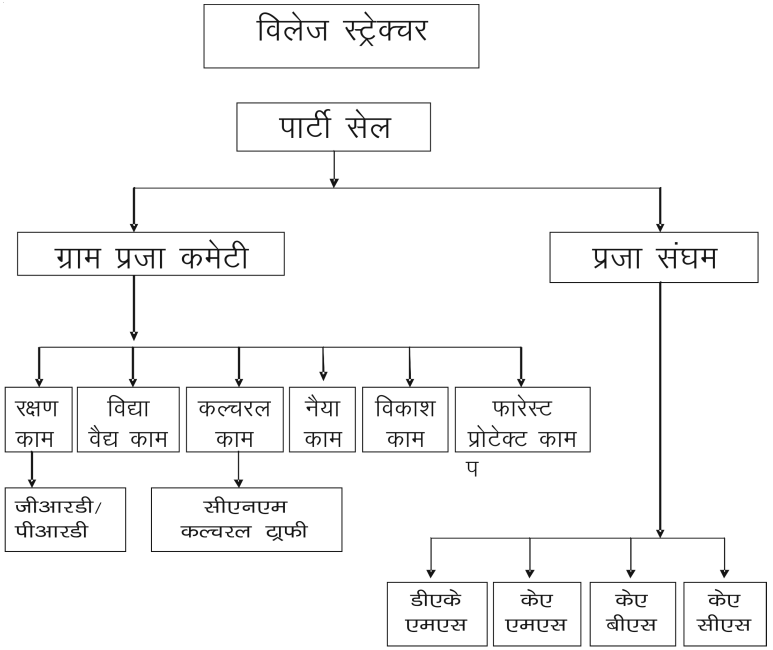

पोलिटिको-मिलिट्री संरचना

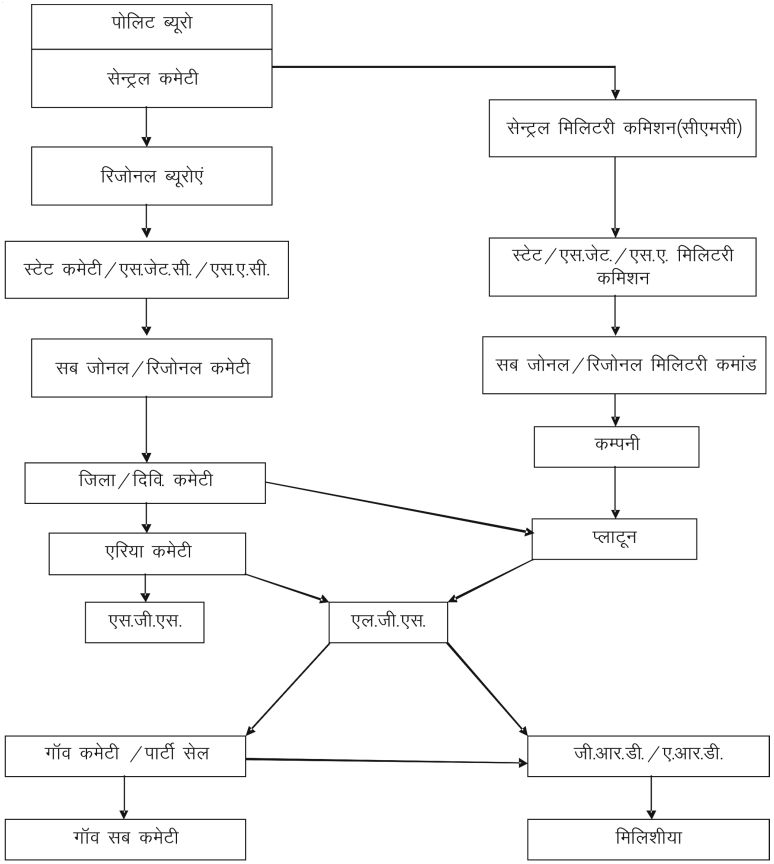

पोलिटिको-मिलिट्री मास

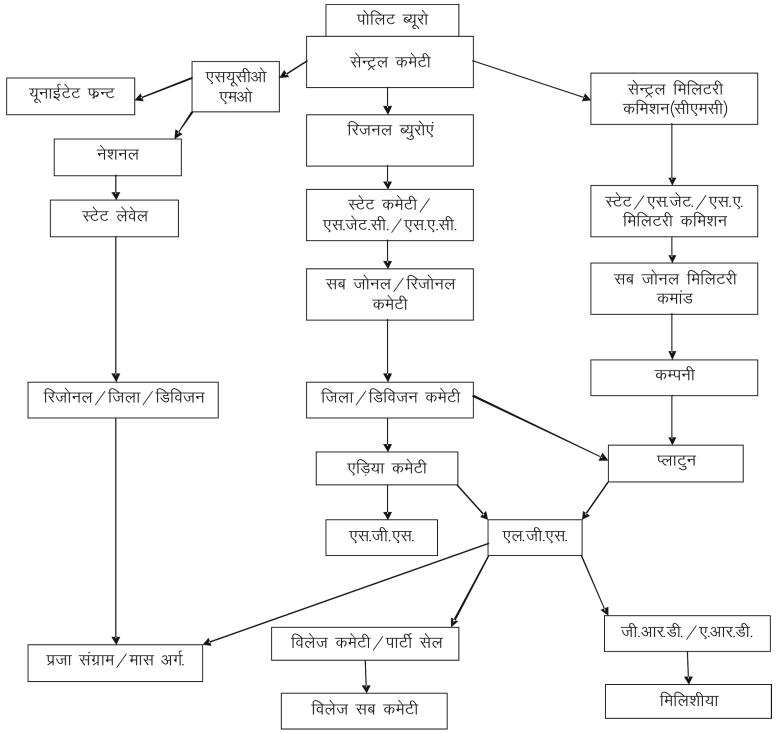

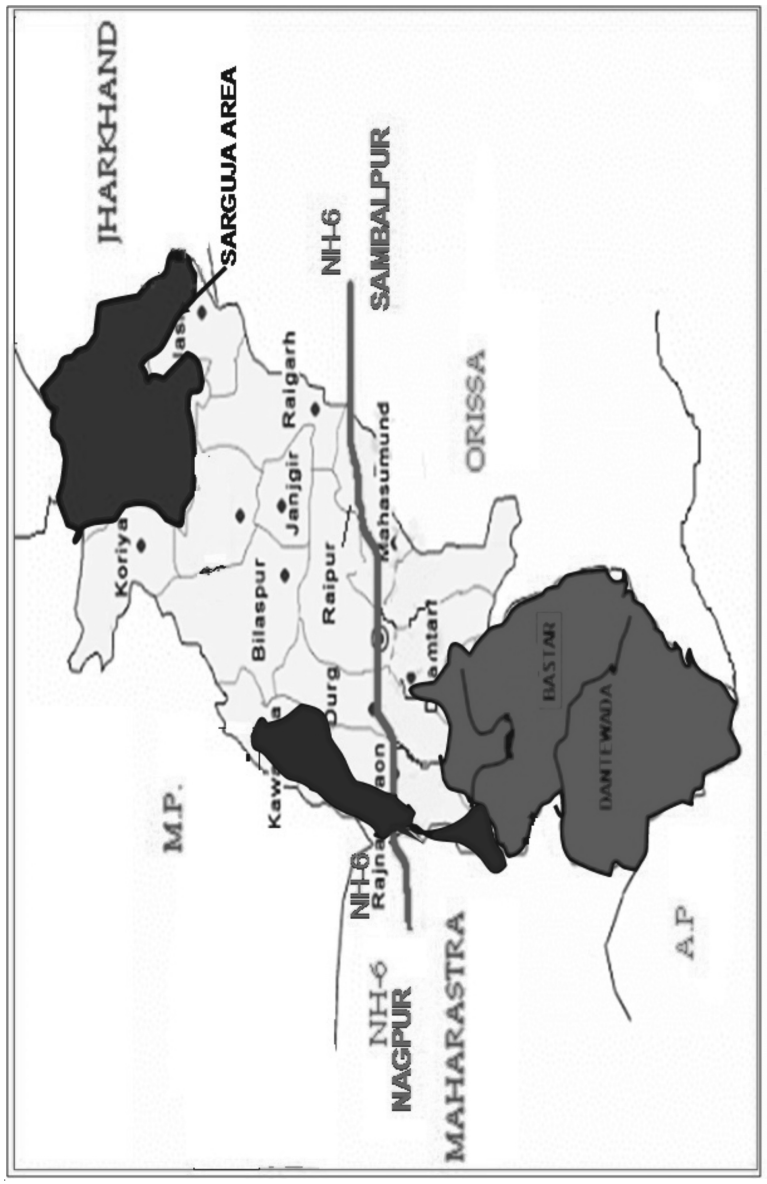

दंडकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी (डी.के.एस.जेट.सी.)

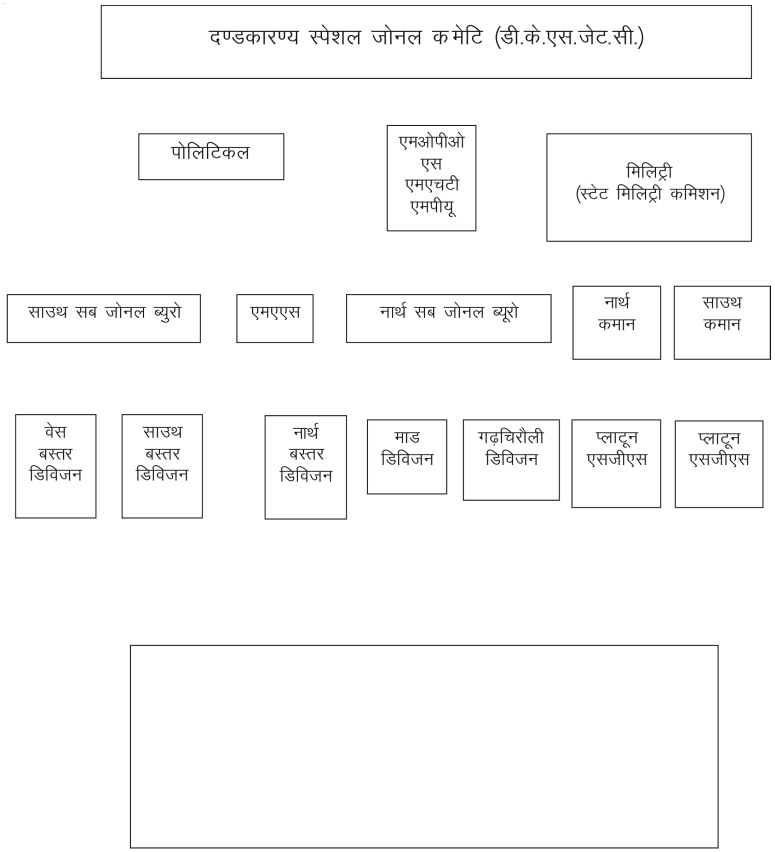

डी.के.एस.जेट.सी. (पोलिटिकल)